प्रसिद्ध वैज्ञानिक

लेखक
विलियम ओलिवर स्टीवेन्स
अनुवादक
सत्यप्रकाश त्रिपाठी, एम० एस-सी०

प्रकाशक
इंडियन प्रेस (पब्लिकेशंस), प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद
१९५८
मूल्य ३ रु० ५० नये पैसे

यह पुस्तक अत्यंत अनुरागपूर्वक

विलियम मैसन स्टीवेन्स २

को

समर्पित है

विषय-सूची

पृष्ठ

विज्ञान का प्रारम्भ ३
निकोलस कॉपरनिक्स एवं गैलिलियो गैलिली—आधुनिक ज्योतिष का जन्म १७
जॉन केप्लर—सौर-मण्डल का आदि गणितज्ञ ... २६
फ्रांसिस बेकन एवं सर आइज़क न्यूटन—इँगलैंड में विज्ञान का उदय ४१
कार्ल लिने—वनस्पति-विज्ञान का जन्मदाता ... ५७
बेन्जामिन फ्रैंकलिन—बहुन्मुखी प्रतिभा का वैज्ञानिक ... ६७
जोसेफ प्रीस्टले एवं एनटॉयन लॉरेण्ट लैवोशिए—रसायनशास्त्र का जन्म ७६
बेन्जामिन टॉमसन, काउण्ट रमफोर्ड—भौतिकशास्त्र का अग्रगामी ... ८६
जीन एण्ट्वायन बैपटिस्टे पियरे डी लामार्क प्राणी जीवन का वैज्ञानिक ६६
सर हम्फ्री डेवी—रसायनशास्त्री और कोयला खनिकों का जीवनत्राता ... १११
जॉन डाल्टन—परमाणु की खोज १२३
माइकेल फैराडे—वैद्युतिक युग का अग्रगामी ... १३३
सर चार्ल्स लॉयल—भूगर्भशास्त्र का संस्थापक ... १४५
चार्ल्स डारविन—जीवों की उत्पत्ति १५७
ग्रेगर जॉन मेण्डेल—वंशानुगमन के नियम ... १७१
मैथ्यू फॉण्टेनी मॉरी—समुद्रों का मार्ग-निदेशक ... १८३
रॉंजन और क्यूरी—विल्हेल्म कानरड रॉंजन, मेरी स्क्लोडोस्का क्यूरी, पियरे क्यूरी—एक्स-रे और रेडियम की खोज ... १६७
अलबर्ट अब्राहम माइकेल्सन—प्रकाश का अनुसंधानकर्त्ता ... २११
उपसंहार २२३

विज्ञान का प्रारम्भ

विज्ञान का प्रारम्भ

आदिम मनुष्यो को यह समझने मे कठिनाई होती थी कि जिस ससार मे वे रहते हैं वह नियम द्वारा परिचालित होता है। उन्होने सभी प्राकृतिक घटनाओ का कारण देवताओ को बतलाया। सूर्य को देवता माना जाता था और चन्द्रमा को देवी और वृक्षो तथा झरनो म भी छोटे देवी-देवताओ की कल्पना की जाती थी। इस प्रकार बहुत से छोटे-छोटे देवी-देवता थे। क्योकि लोग सोचते थे कि ये देवता जल्दी अप्रसन्न हो जाते हैं इसलिए वे उनसे सदैव डरते रहते थे। उदाहरण के लिए यदि कोई मनुष्य नदी में गिर कर डूब गया तो यह समझा जाता था कि नदी का देवता उससे कुपित हो गया था। इसीलिए आदिम मनुष्य उन देवताओ को विस्तृत अनुष्ठान द्वारा विशेषतया बलि से यहाँ तक कि मनुष्यो की भी बलि देकर प्रसन्न करना आवश्यक समझते थे। यहाँ तक कि गत शताब्दी तक भी इंग्लैण्ड के पिछड़े हुए ग्रामीण भागो मे किसानो की स्त्रियाँ राबिन भूत को प्रसन्न करने के लिए दरवाजे पर मलाई की तश्तरी रखती थी और यदि तश्तरी प्रात काल तक खाली हो जाती तो वे सन्तुष्ट हो जाती कि उसने मलाई खा ली। पड़ोसियो की बिल्लियाँ तो सन्तुष्ट हो ही जाती थी।

प्रेतो के इस डर के साथ जादू की भी पूजा होती थी। जादूगरनी चिकित्सिकाओ, औषधि जानने का बहाना करनेवाले व्यक्तियो तथा जादूगरो की प्राचीन काल मे सारे ससार म भरमार थी। अब भी ये बातें असभ्य जातियो मे पाई जाती हैं। कुछ सख्याएँ जैसे ७ पवित्र समझी जाती थी और कुछ खास शब्दो तथा नामो मे विशेष जादू की कल्पना की जाती थी

यहाँ तक कि निरर्थक शब्दों में भी जैसे अबराकडाबरा में। पुरुष और स्त्रियाँ उस शब्द को त्रिभुज के आकार में लिखती थीं और गले में लटकाती थीं क्योंकि यह उन समस्त वस्तुओं के लिए, जो लोगों को कष्ट पहुँचाती थीं, अच्छा माना जाता था और विशेषतया सर्दी और ज्वर को दूर करने के लिए उपयुक्त बताया जाता था। कुछ शब्द शुभ-अशुभ दोनों समझे जाते थे।

इन अन्ध-विश्वासों के साथ सत्य की खोज की लम्बी यात्रा भी धीरे-धीरे होती रही कि प्रकृति प्रेतों तथा जादू शब्दों से नहीं बल्कि ईश्वरीय नियमों द्वारा प्रशासित होती है। इस दिशा में प्रथम कदम तारों का निरीक्षण था। ईसा से दो हजार वर्ष पूर्व चीनियों ने आकाशीय पिण्डों के घूमने के विषय में तथ्य एकत्र किया और ऐसा ही उन लोगों ने भी किया जिन्होंने नील, टाइग्रिस तथा यूफ्रेट्स नदियों की घाटियों में सभ्यता का विकास किया।

ईसा के दो हजार वर्ष पूर्व से ही बैबिलन तथा मिस्र-देश-वासियों ने ब्रह्माण्ड की रूपरेखा के विषय में सोचना प्रारम्भ कर दिया था। बैबिलन-निवासी ब्रह्माण्ड को एक ऐसा कमरा-सा मानते थे जिसका फर्श पृथ्वी थी और जिसके चारों ओर बहुत-सा पानी एक नदी की तरह या किले के चारों ओर पानी से भरी हुई खाई की तरह था। उसके बाहर ऊँचे पर्वत थे जो आकाश को रोके रहने में स्तम्भ का काम करते थे। प्राचीन मिस्रवासियों की भी यही धारणा थी। हाँ, इसके अतिरिक्त वे यह और कहते थे कि उस नदी में एक नौका सूर्य को लेकर प्रतिदिन घूमती है।

यद्यपि आज तो यह बच्चों की सी बात मालूम होती है, बैबिलन तथा मिस्रवासियों ने आकाश के निरीक्षण का लेखा रखते हुए ईसा से पूर्व छठवीं शताब्दी के मध्य में ग्रहणों के विषय में सही भविष्यवाणी करने में सफलता, प्राप्त कर ली थी। उन्होंने फलित ज्योतिष के अध्ययन में भी काफी समय बिताया क्योंकि वह ज्योतिष का अग्रदूत ही तो था। फलित ज्योतिष इस विचार पर

आश्रित एक गूढ़ विज्ञान था कि आकाशीय पिण्डो का मानव जीवन पर प्रभाव पड़ता है।

चैल्डियो ने बेबिलन विजय के पश्चात् (करीव ईसा के ५४० वर्ष पूर्व) फलित ज्योतिष को अपनाया किन्तु विज्ञान के विकास मे उन्होने कोई उन्नति न की। दो सौ वर्ष बाद प्रकृति के विषय मे सत्य का अन्वेषण करनेवालो मे यूनानी लोग अग्रगामी सिद्ध हुए। बहुत से लोग सोचते हैं कि संसार में जितनी जातियाँ हुई हैं उनमे से इस जाति मे सबसे अधिक ईश्वर-प्रदत्त प्रतिभा थी। अपनी पहले की सभ्यता की थोड़ी या तनिक भी सहायता न लेकर यूनानियो ने साहित्य, दर्शन, कला और वास्तुकला आदि के अत्यन्त उत्कृष्ट दृष्टान्त उपस्थित किये और गणित, चिकित्साशास्त्र, ज्योतिष तथा मयशास्त्र (Engineering) की नीव डाली। साथ ही उन्होने वास्तव मे प्राकृतिक विज्ञान का श्रीगणेश किया। इसके अतिरिक्त यह कहा जा सकता है कि प्राचीन यूनानी बहुत से ऐसे निष्कर्षों पर पहुँचे जो उनके समय से बहुत आगे थे। यहाँ तक कि पाश्चात्य ससार के वैज्ञानिक उन बातो का पता दो हजार वर्ष बाद ही लगा सके।

इसके पहले कि हम प्राकृतिक विज्ञान के क्षेत्र का उल्लेख करें, यूनानियो ने गणित मे जो कार्य किया उस पर विचार करना चाहिए क्योंकि विज्ञान की प्रगति गणित पर बहुत निर्भर रही है। चलन-कलन (Calculus), त्रिकोणमिति तथा शकु-मिति का प्रारम्भ यूनानियो ने किया। उनमे सबसे प्रसिद्ध गणितज्ञ यूक्लिड था। उसने ज्यामिति म इतना उत्कृष्ट कार्य किया है कि विद्यार्थी दो हजार वर्षों से अधिक समय से यूक्लिड का अध्ययन करते आये हैं। उसने इस विज्ञान का प्रारम्भ तथा उसका विकास किया, इसलिए उसका नाम इसका पर्याय बन गया है। अक-गणित (Arithmetic) मे यूनानी उतने कुशल न थे। उनको अको का ज्ञान न था, बल्कि वे अपनी वर्णमाला के अक्षरो का ही बड़े

जटिल रूप से उपयोग करते थे। शून्य (०) के लिए उनके पास कोई चिह्न न था, इससे उनकी गणना कठिन हो जाती थी किन्तु फिर भी वे कुछ कठिन प्रश्नों को निकाल लेते थे जैसा हमें मिस्र में पाये गये "पपीरस" पर लिखित विवरणों से विदित है।

प्राकृतिक विज्ञान के क्षेत्र में प्राचीन यूनान में इतने अधिक प्रतिभाशाली व्यक्ति हुए कि यहाँ उल्लेख करने के लिए उनमें से कुछ को छांटना वहुत कठिन है। उनके नाम लम्वे हैं तथा स्मरण रखने में कठिन हैं; किन्तु इस कारण हम उन्हें छोड़ नहीं सकते। इनमें से एक आर्कमेडीज था जो प्राचीन संसार का सवसे महान् वैज्ञानिक कहा गया है। उसने यन्त्र-विद्या और द्रव-स्थिति विज्ञान का शिलान्यास किया और वह आधुनिक भौतिक-शास्त्र का जन्मदाता माना जाता है। दूसरा व्यक्ति अरिसटार्कस था जिसका मत था कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। करीव अठारह सौ वर्ष वाद दो और व्यक्तियों ने इसी वात को लेकर ख्याति प्राप्त की। वे थे कॉपरनिकस और गलीलियो। प्राचीन यूनानी हिपोक्रेट्स ने वैज्ञानिक औषधि शास्त्र की नींव डाली। डेमोक्रिटस और पैथागोरस ने घोषित किया कि सभी पदार्थ अणुओं से वने हैं और यही वात वाद में उन्नीसवीं शताव्दी में डाल्टन नामक एक अँगरेज ने कही। पारमेनीडीज ने बताया कि पृथ्वी चौरस नहीं वलिक गोलाकार है। एनेक्सागोरस और एम्पिडोक्लीज ने विकासवाद की रूपरेखा वताई—वही सिद्धान्त जो उन्नीसवीं शताव्दी के मध्य तक ज्यों का त्यों पड़ा रहा जब कि डारविन नामक अँगरेज वैज्ञानिक ने इस पर गंभीर चिन्तन किया और इसका स्पष्टीकरण किया।

अन्ततोगत्वा यूनान में एक ऐसा व्यक्ति पैदा हुआ जिसको सभी युगों का सवसे अधिक प्रतिभाशाली व्यक्ति कहा गया है। वह था दार्शनिक अरस्तू। उसको महान् व्यक्तियों में भी महान् मानना चाहिए। उसकी तर्क-शास्त्र का पुस्तक यूरोपीय विश्वविद्यालयों तथा मठों में वीस सदियों तक उस विषय का

पाठ्य-ग्रन्थ रहो । यद्यपि मुख्यतः वह दार्शनिक के रूप में प्रसिद्ध है, किन्तु वह महान् वैज्ञानिक भी था । अपने समय के प्राय अन्य लोगो के समान वह पृथ्वी को ब्रह्माण्ड का केन्द्र समझता था । उसने यह दिखाया कि आकाशीय पिण्ड और पृथ्वी गोलाकार हैं । उसने पृथ्वी के परिवल्क की दशा का निरूपण करने के लिए भूगर्भ काल की कुछ बातो की कल्पना की । किन्तु वह प्राणिशास्त्र मे ही सबसे महान् था । अपने शिष्यों की सहायता से उसने वनस्पतियों तथा जीवो के सम्बन्ध मे कुछ तथ्य एकत्र किये और जीवो को सबसे पहले वैज्ञानिक रीति से एकत्र किया जो प्रथम चिड़ियाखाना तथा प्राकृतिक इतिहास का प्रथम संग्रहालय था । इस क्षेत्र मे उसकी सबसे बड़ी लिखित कृति "जीवो का इतिहास" है । यह सत्य है कि उसने तथ्यो के साथ कुछ भ्रान्त बातें भी कही हैं; किन्तु सब देखते हुए उसका इतिहास ऐसी कृति है कि किसी ने ठीक ही कहा है "जीव-विज्ञान को अपनी समकक्ष कृति के लिए दो हजार वर्ष की प्रतीक्षा करनी पड़ी है ।" और एक दूसरे समीक्षक ने अरस्तू को प्राचीन ससार का सबसे बड़ा संग्रहकर्ता और विचार-व्यवस्थापक कहा है । उसने यह भी कहा है कि वह व्यवस्थित वैज्ञानिक अनुसधान का जन्मदाता था ।

इन यूनानियो का सबसे महान् कार्य यह सिद्ध करना था कि प्राकृतिक घटनाओ का कारण राक्षसो, देवताओ तथा भूतो की इच्छा नही है बल्कि सार्वभौम नियम हैं, यद्यपि इसके लिए पुरोहितो ने उन्हे सताया और उनको—जैसे कि सुकरात को—अधार्मिक ठहराया । उन्होने विज्ञान को जन्म दिया । वास्तव मे हमारी वर्तमान सभ्यता उनकी चिर-ऋणी है । एथेन्स सभ्यता का प्रथम केन्द्र था । उसके पतन के बहुत दिन बाद यह परम्परा यूनानी शहर एलेक्जन्डरिया में चली गई जिसकी स्थापना मिस्र मे (३३२ ईसा पूर्व) यूनानी विजेता ने की थी और उसी के नाम पर इसका नामकरण हुआ। नौ सौ वर्ष तक यह शहर ससार का शिक्षा-केन्द्र बना रहा । यूनानी दार्शनिको का व्याख्यान सुनने

के लिए तथा महान् पुस्तकालय में अध्ययन करने के लिए भूमध्य सागरीय प्रदेश के प्रत्येक सभ्य कोने से विद्यार्थी यहाँ आते थे। यहाँ ४००,००० पुस्तकें थीं और यह "संग्रहालय" कहा जाता था।

इस शब्द (म्यूजियम) का अर्थ "सरस्वती को अर्पित स्थान" है। इसको हम लोगों ने अपना लिया है और वस्तुओं के सुव्यवस्थित प्रदर्शन के लिए इसका उपयोग करते हैं। दृष्टान्त-स्वरूप अमरीका का "म्यूजियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री", "मेट्रोपोलिटन म्यूजियम ऑफ आर्ट" और एलेक्जेन्डरिया का यह पुस्तकालय शताब्दियों तक सभी पाश्चात्य ज्ञान तथा संस्कृति का केन्द्र बना रहा तथा सभ्यता का एक महान् आश्चर्य समझा जाता था।

जब संसार में सर्वत्र रोम की सत्ता विराज रही थी तब भी यहाँ के विद्यार्थी एलेक्जेन्डरिया में अध्ययन के लिए आते थे। सम्राट् आये और गये किन्तु शिक्षा का यह केन्द्र जैसे का तैसा महान् बना रहा। सन् ३९० में बिशप ने इस पुस्तकालय का एक भाग नष्ट कर दिया, क्योंकि इसका साहित्य मूर्ति-पूजा का प्रतिपादक था। किन्तु पूर्ण रूप से वह बहुत बाद में सन् ६४१ में नष्ट हुआ जब धर्मोन्मत्त अरबों की फौज ने मोहम्मद के लिए संसार की विजय की आकांक्षा से इस नगर पर अधिकार कर लिया और पूरा पुस्तकालय नष्ट कर दिया। इस कला-साहित्य की वस्तुओं के विध्वंस से विचारों का कितना कोष सदैव के लिए नष्ट हो गया, इसे कोई कभी नहीं जान सकता।

एलेक्जेन्डरिया के इतिहास की एक प्रशंसनीय विशेषता थी कि यद्यपि अध्ययन का कार्य यूनानी संतानों द्वारा ही होता था किन्तु यहाँ पर अन्य जातियों के प्रतिभाशाली व्यक्ति भी जमा होते थे। यहूदियों के लिए यद्यपि धार्मिक केन्द्र जेरूसलम था किन्तु एलेक्जेन्डरिया विद्या का केन्द्र था। ईसाई, यहूदी और यूनानी यहाँ एकत्र होते थे और सत्यान्वेषण के लिए विचार-विनिमय करते थे।

यह जानना आवश्यक है कि रोमनो ने शुद्ध विज्ञान की अधिक उन्नति नही की, यद्यपि वे मयशास्त्र (Engineering) और निर्माण के व्यावहारिक विज्ञान मे निपुण थे, जैसे जल-मार्गो, पुलो तथा आम मार्गो का निर्माण। गणित म वे यूनानियो से आगे न बढ़ सके और अंक-गणित मे उनसे पीछे ही थे क्योकि उनके पास भी जोड़ने-घटाने और भाग देने की क्रिया के लिए कोई उपयोगी चिह्न न था और शून्य के लिए कोई अक न था। कहा जाता है कि जब अंक-गणित के कठिन प्रश्न उपस्थित होते थे तो रोमन लोग उन्हे अपने यूनानी दासो को दे देते थे जो गणित म विलक्षण प्रतिभाशाली थे और सख्याओ को व्यक्त करने की आसान यूनानी रीति का उपयोग करते थे।

केवल एक रोमन वैज्ञानिक का उल्लेख आवश्यक है। वह पिता प्लाइनी था जिसने विसूविस पहाड़ी (७७ ख्रिष्टाब्द) के उद्गार के पर्यान्वेषण म अपने जीवन को उत्सर्ग कर दिया। उसमे सच्चे वैज्ञानिक की लगन थी और प्राकृतिक इतिहास मे उसने सेंतीस ग्रन्थ से कम न लिखे होगे। किन्तु उसने कोई नई बात नही लिखी और न कोई खोज ही की और जो कुछ लिखा उसमे भी बहुत-सी बातें असत्य थी।

रोमन साम्राज्य के पतन के बाद पश्चिमी यूरोप म बौद्धिक अन्धकार हो गया। इसलिए हम इतिहास के इस भाग को "अन्धकाल" कहते हैं, किन्तु हम ईसाई भिक्षुको के आभारी हैं, विशेषत बेनिडिक्टाइन्स के जिन्होने मठो म ज्ञान की चिनगारी सदैव प्रज्ज्वलित रखी जब कि बाहर चारो ओर डकैती, सामन्तवादी युद्धो के हत्याकाण्ड और अग्निकाण्ड का साम्राज्य था। इन्ही भिक्षुको के कारण यूनान और रोम के कुछ सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ सुरक्षित रहे अन्यथा वे नष्ट हो गये होते।

यह जान लेना अच्छा होगा कि यद्यपि अरबवासियो ने एलेक्जेन्डरिया का महान पुस्तकालय जला दिया था, किन्तु तीन सौ वर्ष बाद वे विज्ञान म

स्वयं काफी अच्छा कार्य करने लगे और उन्होंने भूले हुए यूनानी लेखकों की कृतियों का अरबी में अनुवाद किया। ९०० से १२०० खिष्टाब्द तक अरबी विज्ञान की ऊँची भाषा मानी जाती थी। प्रसिद्ध यहूदी चिकित्सक मेमोनाइड्स ने जो करडोवा (स्पेन) में ११३५ में पैदा हुआ था, और जो सुलतान सलादीन का कैरो में व्यक्तिगत चिकित्सक था, अपनी पुस्तकें अरबी में ही लिखीं। काफी समय तक अरबवासियों का सांस्कृतिक केन्द्र स्पेन में था। यहाँ ईसाई, यहूदी तथा अरबवासी अध्ययन के लिए आते थे।

इस बीच यूरोप की दशा और व्यवस्थित हुई और "अन्धकाल" "मध्य-काल" बन गया। धन बढ़ा और व्यापार तथा यात्रा के लिए मार्ग खुले। फलस्वरूप पश्चिम और पश्चिमी एशिया काफी सन्निकट हो गये। सन् १४५३ में कुस्तुन्तुनिया पर तुर्कों की विजय से इस शहर के बहुत से विद्वान् रोम और इटली के दूसरे शहरों को भाग गये और अपने साथ बहुमूल्य यूनानी हस्तलिखित पुस्तकें भी लेते गये। यूनानियों की कला, साहित्य और दर्शन के प्रति—जिनको अधिकांश व्यक्ति एक हजार वर्ष तक भूले हुए थे—जो उमंग लोगों में पैदा हो रही थी उसे इन लोगों ने और प्रोत्साहित कर दिया। इतिहास में यह काल पुनर्जागरण का काल कहा जाता है जिसका अर्थ प्राचीन संस्कृति का पुनर्जन्म है। कला एवं साहित्य के साथ प्रकृति के सत्य तथा दैनिक जीवन के तथ्यों के जानने की जिज्ञासा पैदा हुई। इससे विज्ञान का पुनर्जन्म हुआ।

यूनानियों की इस अतिश्लाघा की त्रुटि यह थी कि प्रकृति के विषय में वे जो कुछ कहते थे उसे, उनसे बिना कोई प्रश्न पूछे, सत्य मान लिया जाता था। किन्तु यूनानी दार्शनिक भी मनुष्य थे इसलिए यदा-कदा उनसे भी भूल हो ही जाती थी। इस कारण आगामी वैज्ञानिकों को सत्य की स्थापना में कठिनाई हुई।

यह पहले ही देखा जा चुका है कि यूनानियो और रोमनो का अंको को वर्णमाला के अक्षरो से व्यक्त करने का ऐसा अपटु ढग था कि अक-गणित के सबसे सुगम उदाहरण भी जटिल और कठिन हो जाते थ। मध्य काल के अन्त मे अरबी व्यापारियो तथा विद्वानो ने यूरोप म अको को एक नई रीति का प्रारम्भ किया। इसे उन्होंने भारतवर्ष से लिया था और कुछ बदल भी दिया था, किन्तु सन् १४०० के करीब इसने वह रूप लिया जिसे हम आज देखते हैं। इन सकेतो को हम अब भी अरबी अंक कहते हैं किन्तु इसका श्रेय किसी ऐसे प्रतिभाशाली भारतीय को मिलना चाहिए जिसकी अब तक उपेक्षा होती आई है। एक प्रसिद्ध अमरीकी अन्वेषक इस रीति को "इतिहास की महानतम खोज" कहता है, क्योकि केवल १० चिह्नो—० से ९—से हम शून्य से अनन्त तक किसी भी सख्या को व्यक्त कर सकते हैं। उदाहरणार्थ १ के बाद ० लगा देने का अर्थ १० हुआ और दूसरा ० लगाने से १०० हुआ। १ के बाद ५ रखने से १५ होता है किन्तु यदि इसे दूसरी तरफ उलट कर रखें तो ५१ हो जाता है। गणित का यह अनुसधान शुद्ध तथा व्यावहारिक विज्ञान (Applied Science) की उन्नति के लिए अमूल्य है चाहे दैनिक उपयोगो को भी छोड़ दिया जाय।

मध्य काल के दो पादरियो के नामो का उल्लेख करना विशेष आवश्यक प्रतीत होता है क्योकि वे प्रथम पुनर्जागरण की ज्योति के पहले हुए थे और नवीन ज्ञान के उन्नायक थे। उनमे से एक जर्मन था जो एलबर्टस मैगनस या एलबर्ट महान् के नाम से प्रसिद्ध है। दूसरा रोजर बेकन नामक अँगरेज था। ये दोनो पुरुष एक ही समय मे तेरहवी शताब्दी मे हुए थे। एलबर्टस ईसाई भिक्षुक था और बेकन फासिस सम्प्रदाय का साधु था। वे महान् प्रतिभाशाली थे क्योकि उन्होने विज्ञान के साथ-साथ धर्मशास्त्र के विषय मे भी लिखा और उसका अध्यापन किया था। एलबर्टस ने अन्य कृतियो के अतिरिक्त भौतिक-

शास्त्र पर आठ पुस्तकें तथा जीवों पर छब्बीस पुस्तकें प्रकाशित कीं। रोजर वेकन ने पोप की प्रार्थना पर तीन बड़ी पुस्तकें लिखीं जिनमें उस समय तक जो कुछ मालूम हुआ था, सब था। वह प्राकृतिक विज्ञानों तथा धर्म दोनों में विश्वास रखता था। ये दोनों पुरुष उस समय में हुए थे जब दन्त-कथाओं और अन्ध-विश्वासों को सब लोग मानते थे, इसलिए इन पुस्तकों में कहीं-कहीं यह सब भी है। उदाहरणार्थ एलबर्टस ने "अच्छे जादू" तथा "बुरे जादू" के विषय में लिखा है। किन्तु और सब विषयों में इनके विचार तथा निरीक्षण अपने समय से बहुत आगे के हैं।

रोजर बेकन ने संसार को बताया कि प्रकृति के विषय में जानने का एकमात्र मार्ग निरीक्षण तथा प्रयोग है। उसने अपनी ही जेब से दो हजार पौण्ड खोज पर लगाकर लोगों के सम्मुख एक उदाहरण रक्खा। यह उस समय के लिए एक बड़ी धनराशि थी। उसे मुख्यतः प्रकाश तथा परावर्तन के नियमों में विशेष अभिरुचि थी। उसने दर्पण तथा चश्मे वाले शीशों के सहारे काम किया और दूरदर्शक यन्त्र के निर्माण की ओर भी निर्देश किया यद्यपि उसने उसे कभी बनाया नहीं। इन्हीं खोजों के विषय में उसने लिखा और बताया भी कि किसी न किसी दिन ये सब आविष्कार होंगे।

"समुद्रयात्रा के लिए बिना पतवारों के ऐसे यंत्र बनाये जा सकते हैं जिनसे जहाज नदियों या समुद्रों में बहुत से आदमियों की अपेक्षा एक ही आदमी द्वारा अधिक तेजी से चलाये जा सकते हैं और ऐसे वाहन भी तैयार किये जा सकते हैं जो पशुओं के बिना अविश्वसनीय गति से चलें और ऐसे उड़नेवाले यंत्र भी बनाये जा सकेंगे जिनमें आदमी बैठ सकता है और जो एक इन्जन के घुमाने से चिड़िया की तरह हवा को चीरते हुए उड़ सकते हैं।"

वायुयान के लिए हवा को चीरने वाले पंखों का विचार राइट बन्धुओं के समय तक चला और आज भी इस बात का प्रयत्न किया जा रहा

है। किन्तु और विषय में यह उद्धरण वैज्ञानिक भविष्यवाणी के रूप में रोचक है क्योंकि सभी सत्य हुआ यद्यपि बेकन की मृत्यु के सात शताब्दी बाद ही ऐसा हो सका।

ये दो महान् प्रतिभाशाली व्यक्ति एलबर्टस और रोजर बेकन आधुनिक विज्ञान के द्वार पर खड़े हुए हैं, जिनके पीछे "अन्धकालीन" अन्ध-विश्वास हैं और मुख पर है सामने से पड़नेवाली प्रकृति के सत्य की ज्योति।

शास्त्र पर आठ पुस्तकें तथा जीवों पर छब्बीस पुस्तकें प्रकाशित कीं। रोजर वेकन ने पोप की प्रार्थना पर तीन बड़ी पुस्तकें लिखीं जिनमें उस समय तक जो कुछ मालूम हुआ था, सव था। वह प्राकृतिक विज्ञानों तथा धर्म दोनों में विश्वास रखता था। ये दोनों पुरुष उस समय में हुए थे जव दन्त-कथाओं और अन्ध-विश्वासों को सव लोग मानते थे, इसलिए इन पुस्तकों में कहीं-कहीं यह सव भी है। उदाहरणार्थ एलवर्टस ने "अच्छे जादू" तथा "वुरे जादू" के विषय में लिखा है। किन्तु और सव विषयों में इनके विचार तथा निरीक्षण अपने समय से वहुत आगे के हैं।

रोजर वेकन ने संसार को वताया कि प्रकृति के विषय में जानने का एक-मात्र मार्ग निरीक्षण तथा प्रयोग है। उसने अपनी ही जेव से दो हजार पौण्ड खोज पर लगाकर लोगों के सम्मुख एक उदाहरण रक्खा। यह उस समय के लिए एक वड़ी धनराशि थी। उसे मुख्यतः प्रकाश तथा परावर्तन के नियमों में विशेष अभिरुचि थी। उसने दर्पण तथा चश्मे वाले शीशों के सहारे काम किया और दूरदर्शक यन्त्र के निर्माण की ओर भी निर्देश किया यद्यपि उसने उसे कभी वनाया नहीं। इन्हीं खोजों के विषय में उसने लिखा और वताया भी कि किसी न किसी दिन ये सव आविष्कार होंगे।

"समुद्रयात्रा के लिए विना पतवारों के ऐसे यंत्र वनाये जा सकते हैं जिनसे जहाज नदियों या समुद्रों में वहुत से आदमियों की अपेक्षा एक ही आदमी द्वारा अधिक तेजी से चलाये जा सकते हैं और ऐसे वाहन भी तैयार किये जा सकते हैं जो पशुओं के विना अविश्वसनीय गति से चलें और ऐसे उड़नेवाले यंत्र भी वनाये जा सकेंगे जिनमें आदमी वैठ सकता है और जो एक इन्जन के घुमाने से चिड़िया की तरह हवा को चीरते हुए उड़ सकते हैं।"

वायुयान के लिए हवा को चीरने वाले पंखों का विचार राइट वन्धुओं के समय तक चला और आज भी इस वात का प्रयत्न किया जा रहा

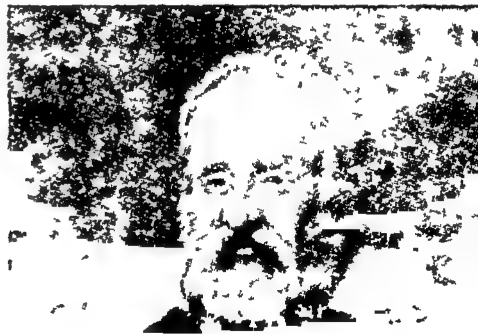
है। किन्तु और विषय म यह उद्धरण वैज्ञानिक भविष्यवाणी के रूप म रोचक है क्योकि सभी सत्य हुआ यद्यपि बेकन की मृत्यु के सात शताब्दी बाद ही ऐसा हो सका।

ये दो महान् प्रतिभाशाली व्यक्ति एलबर्टस और रोजर बेकन आधुनिक विज्ञान के द्वार पर खड़े हुए हैं, जिनके पीछे "अन्धकालीन" अन्ध-विश्वास है और मुख पर है सामने से पड़नेवाली प्रकृति के सत्य की ज्योति।

निकोलस कॉपरनिकस
और
गैलिलियो गैलिली



निकोलस कॉपरनिकस



गैलिलियो गैलिली

निकोलस कॉपरनिकस

(१४७३-१५४३)

गैलिलियो गैलिली

(१५६४-१६४२)

आधुनिक ज्योतिष का जन्म

कला एव साहित्य के पुनरुत्थान के समय मे—जिसका वर्णन पिछले अध्याय मे किया गया है—विद्वानो, सम्भ्रान्त व्यक्तियो और पादरियो को यूनानी साहित्य और कला मे विशेष अभिरुचि थी, विशेषत कला मे। महान् शक्तिशाली तथा धनियो के कुटुम्ब जैसे फ्लोरेन्स के मेडिची और रोम के पोप प्राचीन तक्षण-कला के बहुमूल्य नमूने एकत्र करते थे। पन्द्रहवी शताब्दी के अन्त मे इटली मे चित्रकारी तथा तक्षण-कला की एक विशिष्ट धारा का अभ्युदय हुआ। किन्तु जर्मनी के शासक तथा सामन्त तक्षण-कला, कविता या दर्शन के उतने उपासक न थे। उनकी सास्कृतिक भावनाओ का उद्देश्य अनोखी वस्तुएँ एकत्र करना ही था—हर तरह की विचित्रताएँ जैसे एक ही सीगवाले काले घोड़े का सीग, अन्तरिक्ष से यहूदियो की यात्रा के बीच ईश्वर-प्रदत्त भोजन का भाग, जलस्त्री की पुच्छ, शुतुरमुर्ग का अण्डा और मरे हुए मगर का बच्चा। उनके घमण्डी मालिक इन एकत्र की हुई वस्तुओ को "वन्डरकैमर्न" यानी जादू का घर कहते थे और उन्हे उन्ही विशिष्ट व्यक्तियो को दिखाते थे जिनके प्रति उन्हे विशेष कृपा दिखानी होती थी। आज हमे ये "आश्चर्यजनक वस्तुएँ"

हास्यास्पद मालूम पड़ती हैं किन्तु इसी वन्डरकैमर्न से आधुनिक संसार के प्राकृतिक इतिहास के संग्रहालयों का जन्म हुआ।

प्राचीन यूनान के विषय में नवीन रुचि लेने से यूनानियों की अभिरुचियों का भी पुनर्जन्म हुआ और विज्ञान में उन्होंने जो उन्नति की थी उसका भी। इसके साथ-साथ उस विज्ञान की भी बड़ी उन्नति हुई जिसे सभी विज्ञानों की जननी कहते हैं अर्थात् गणित। पिछले अध्याय में हमने देखा कि अरबी अंकों की नई रीति से करीब पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में पाटीगणित के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हो गया। उसी समय अरब और यहूदी विद्वान् बीजगणित का प्रचार कर रहे थे। इस शब्द का नामकरण "अलजब्रा" अरबी में ही हुआ है। यह गणित की वह शाखा थी जिस पर यूक्लिड ने कुछ काम किया था किन्तु पाश्चात्य संसार इससे पुनर्जागरण काल के प्रारम्भ तक अनभिज्ञ रहा।

कला और वास्तु-कला (Architecture) के पुनरुत्थान में अधिकारियों को कोई कठिनता न हुई क्योंकि इनके विषय में प्राचीन मिस्र की भाँति कोई निश्चित नियम नहीं थे। किन्तु जब लोग विज्ञान पर प्रश्न पूछने लगे तो उन्होंने प्राचीन अधिकारियों की शरण ली और प्रायः ऐसा होता था कि वे अधिकारी यूनानियों में से ही होते थे जिनका लोग बहुत सम्मान करते थे। मनुष्य का प्रारम्भिक विज्ञान खगोल-शास्त्र था। अभाग्यवश इसकी उन्नति के मार्ग में प्रसिद्ध यूनानी वैज्ञानिक प्रथम था। उसका नाम टॉलेमी था। वह मिस्र के यूनानी शहर एलेक्जेन्डरिया में सन् १२७ से १५१ तक रहा। उसके पन्द्रह शताब्दी बाद तक वह "ज्योतिर्नरेश" के नाम से प्रसिद्ध रहा। अपने समय में उसने विशेष काम किया। वह कुशाग्रबुद्धि गणितज्ञ था और अपने समय के बहुत आगे था किन्तु दूरदर्शक यन्त्र न होने से वह ब्रह्माण्ड के विषय में गलत मार्ग पर पहुँच गया। उसने एक बड़ी विस्तृत योजना

सोची जिसके अन्तर्गत पृथ्वी ब्रह्माण्ड म सबसे बड़ी और सबका केन्द्र मानी गई थी तथा आकाशीय पिण्ड इसके चारो ओर घूमते थे। उसने इस गति की व्याख्या इस प्रकार की कि प्रत्येक आकाशीय पिण्ड पारदर्शक स्फटिक-निर्मित गोलको म जड़ा था और यही गोलक चिरन्तन काल से घूमते थे। मध्य युग मे एक और धारणा थी कि जब ये गोले चलते थे तो बहुत सुन्दर ध्वनि होती थी जिसे देवदूत ही सुन सकते थे। यह "गोलको के सगीत" के नाम से प्रसिद्ध थी।

टॉलेमी ने पृथ्वी एव आकाश-सम्बन्धी प्रारम्भ के सभी अन्ध-विश्वासो को, जो उसके समय तक प्रचलित थे, दूर कर बहुत बड़ा काम किया। उसने ग्रहो की गति की बहुत ठीक-ठीक गणना की और सर्वोपरि यह बतलाया कि प्रकृति नियम से परिचालित होती है। सोलहवी शताब्दी के प्रारम्भ तक इस ज्योतिर्नरेश ने जो कुछ लिखा था उस सम्बन्ध म शका करने का कोई साहस न कर सका। किन्तु प्रशा मे एक छोटे से शहर मे, जिस पर पोलैण्ड का शासन था, एक ऐसा व्यक्ति पैदा हुआ जिसने सौर-मंडल पर स्वयं सोचने का निश्चय किया। उसका नाम निकोलस कॉपरनिकस या ईसाई मत की दीक्षा के अनुसार निकलस कॉपरनिक था। अपनी विश्वविद्यालय की शिक्षा के बाद उसने इटली मे दस वर्ष तक पढ़ा और पढ़ाया। वह एक निपुण चित्रकार था। अर्थशास्त्र पर उसने एक पुस्तक लिखी, वह बहुत-सी कूटनीतिक मडलियो के साथ भेजा गया और उसने यूनानी पुस्तको का अनुवाद किया। पन्द्रहवी शताब्दी मे उत्पन्न हुए अन्य प्रतिभाशाली व्यक्तियो की भाँति वह प्रत्येक काम अच्छी तरह कर सकता था। किन्तु खगोल-शास्त्र उसे अधिक प्रिय था।

उसके मित्रो ने उसे इसम तनिक भी प्रोत्साहित न किया। वे कहते थे "मूर्ख न बनो, टॉलेमी ने इस पर सब कुछ बताया है। क्या तुम अपने को उससे अधिक बुद्धिमान् समझते हो ?" किन्तु कॉपरनिकस सन्तुष्ट न हुआ।

एक नवीन और विचित्र विचार उसे सूझा। मान लो कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमे तो ग्रह तया सूर्य उसके चारों ओर घूमते हुए मालूम पड़ेंगे। जव उसने यह विचार और लोगों को वताया तो सव हँसते थे। शिक्षित व्यक्ति कहते थे "कैसी वेवकूफी की वात है ? यदि पृथ्वी चारों ओर घूमती हाती तो निश्चय ही हम लोगों को मालूम होता, हम लोगों के नीचे यह हिलती और यदि हम कूदते तो पृथ्वी आगे वढ़ जाती जिससे हम किसी दूसरे स्थान पर गिरते।" उन्होंने कहा—"यह मूर्ख नवयुवक कॉपरनिकस, टॉलेमी के कथन के विरुद्ध ही नहीं जा रहा है वल्कि साधारण विवेक के भी विरुद्ध है।"

भाग्यवश कॉपरनिकस इस प्रकार के उपहास से विचलित न हुआ। उसके समय में दूरदर्शक यन्त्र न थे किन्तु उसने गणित का सहारा लिया और युवावस्था से अवेड़ होने तक वह इस महान् विचार पर कार्य करता रहा। अन्त में उसने इन सवको एक पुस्तक में लिखा किन्तु उसे ठीक लिखने की इतनी चिन्ता थी कि प्रकाशित होने के वहुत पहले तक वह प्रतीक्षा करता रहा कि उसने प्रत्येक दृष्टिकोण से सोच लिया है या नहीं। किन्तु वाद में उसे ऐसे अनन्य मित्र मिले जो उसमें ही नहीं वल्कि उसकी विचित्र मान्यता में भी विश्वास रखते थे। उन्होंने उस पुस्तक को प्रकाशित करने का अनुरोध किया और अन्त में वे उसको मुद्रक के यहाँ भिजवाने में सफल हुए। किन्तु जव यह वहुमूल्य पुस्तक कॉपरनिकस के हाथ में पड़ी तव वह मृत्यु-शय्या पर पड़ा हुआ था।

हाँ, कॉपरनिकस की वात यथार्थ थी और टॉलेमी की गलत। पृथ्वी को चलना चाहिए, केवल यही तथ्य तारों तथा ग्रहों की गतिशीलता एवं रात-दिन का होना और ऋतु-परिवर्तन समझा सकता था। एक यूनानी अरिसटार्कस ने यही वात करीव २८० ई० पूर्व कही थी। किन्तु टॉलेमी

की बात पर विश्वास कर इसे भुला दिया गया। कॉपरनिकस ने यह भी बताया कि पृथ्वी ग्रहो मे से एक है और वे सब सूर्य के चारो ओर घूमते है जो उनका केन्द्र है। इसके अतिरिक्त पृथ्वी अपनी धुरी पर दिन मे एक बार घूम जाती है और सूर्य के चारो ओर घूमने मे जो समय लगता है उसे वर्ष कहते है।

आजकल यह समझना कठिन है कि पुस्तक कितनी क्रान्तिकारी थी। स्फटिकनिर्मित गोलको का पूरा सिद्धान्त नष्ट हो गया। कॉपरनिकस के समय तक किसी ने यह स्वप्न मे भी न सोचा था कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड मे सबसे बडी नही है। किन्तु बहुत से शिक्षित लोगो ने उसके गणित द्वारा सिद्ध किये जाने के बावजूद उसके इस सिद्धान्त को स्वीकार न किया। वे उपहास से कहते थे—"सर्वोपरि जो कुछ देखा जाता है उसी पर विश्वास किया जाता है और एक व्यक्ति कोई भी सनकी विचार गणित से सिद्ध कर सकता है। हम लोगो को दिखाने की आवश्यकता है।" जिस कॉपरनिकस पर उसके मित्र इतनी श्रद्धा और भक्ति रखते थे और जिसकी इतनी प्रशसा करते थे तथा जनसाधारण भी जिसके अनन्य उपासक थे जिनके प्रति वह आजीवन उदार रहा, वह इस ससार से चल बसा। किन्तु वैज्ञानिको ने उसे मूर्ख कहकर सदैव उसका उपहास ही किया।

गैलिलियो गैलिली

जब कॉपरनिकस की मृत्यु हुई उस समय इटली के पीसा नगर मे एक युवक गैलिलियो गैलिली था जो बाद मे केवल गैलिलियो के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसके भाग्य मे वृद्ध मनुष्य की बातो को पूरा करना लिखा था जिन्हे कॉपरनिकस अपने जीवन-काल म पूरा न कर सका था। गैलिलियो उससे अधिक बहुमुखी प्रतिभा वाला था। वह इतनी सर्वतोमुखी प्रतिभा का व्यक्ति था कि अपनी युवावस्था मे उसे कुछ दिनो तक सोचना पड़ा कि वह क्या करे।

वह निपुण गायक था और वीणा तथा आरगन वजाने में अपने पिता से, जिसका व्यवसाय ही गाना था, वढ़ कर था। वह उत्कृष्ट चित्रकार था और अच्छी कविता लिख सकता था। किन्तु गणित के प्रेम ने उसको विज्ञान की ओर झुकाया।

विश्वविद्यालय में उससे उच्चपदस्थ अध्यापक डरते थे क्योंकि वह ऐसे प्रश्न पूछता था जिनका उत्तर वे न दे सकते थे। वे उसे यह कह कर चुप न कर सकते थे कि "यह अरस्तू में है।" गैलिलियो कहता था—"हो सकता है, किन्तु आप इसका क्या कारण वताते हैं।" यह वड़ी घवड़ाहट की वात थी। किसी और विद्यार्थी ने ऐसा पहले कभी नहीं किया था। युवक गैलिलियो को सभी मेधावी मानते थे किन्तु विज्ञान विभाग में वह वहुत जन-प्रिय न था। अरस्तू और टॉलेमी में सन्देह नहीं किया जा सकता था। किन्तु गैलिलियो स्वयं हमेशा उत्तर सोचता रहता था।

एक दिन जव पीसा के वड़े गिरजे से वह पूजा के वाद लौट रहा था तो उसकी दृष्टि एक काँसे के विशाल दीपक पर पड़ी जो छत के वीच से लटक रहा था। एक परिचारक उसको जलाने आया था, इसलिए उसने उसको खींचा। किन्तु जव उसने इसे छोड़ दिया तो वह वृत्तांश वना कर भूलने लगा। गैलिलियो ने इसका निरीक्षण किया और देखा कि वृत्तांश की लम्वाई क्रमशः कम होती गई किन्तु समय वही लगता था। उसने इसकी जाँच अपनी नाड़ी से की। उस खोज से उसके वैज्ञानिक जीवन का प्रारम्भ हुआ। यह ऐसी वात थी जो गिरजाघर में प्रतिदिन होती थी किन्तु लटकन (Pendulum) की चाल पर किसी का ध्यान आकर्षित न हुआ था। इस खोज के आधार पर गैलिलियो ने प्रथम नाड़ी-दर्शक यन्त्र वनाया जो डाक्टरों के पास पहले न था।

सन् १५८१ में गैलिलियो के पिता ने उसे पीसा के विश्वविद्यालय में औषधियों का अध्ययन करने के लिए भेजा। उन दिनों तथा शताब्दियों वाद

तक औषधि-विज्ञान ही एक ऐसा विषय था जिसमें वैज्ञानिक अभिरुचि के निर्धन युवक अपना जीवन-कार्य आरम्भ करने की सोचते थे। चार वर्ष बाद उसे उपाधि मिली किन्तु आर्थिक कठिनाइयो से उसे अपनी आगे की पढ़ाई छोड़नी पड़ी और गणित तथा औषधि-विज्ञान के अध्यापन का कार्य करना पड़ा। इस समय मे वह सदैव सोचता तथा प्रयोग करता रहा। अरस्तू ने कहा था कि दस पौण्ड का वजन एक पौण्ड के वजन से दस गुना जल्दी गिरेगा। १८०० वर्ष तक किसी ने इस पर सन्देह न किया था। किन्तु गैलिलियो ने अपनी कक्षा के लोगो को बताया कि वे एक ही गति से गिरेंगे।

"क्या" सभी शिक्षित लोगो ने कहा—"तुम एक नवयुवक हो और सोचते हो कि अरस्तू से अधिक जानते हो?" वह उस समय पच्चीस वर्ष का युवक था।

गैलिलियो ने शान्ति से कहा—"आइए और देखिए।" पीसा के प्रसिद्ध झुके हुए गुम्बज पर से इसके सार्वजनिक प्रदर्शन की उसने घोषणा की। लोग बड़े उत्तेजित हो गये और गुम्बज के नीचे चारो ओर एक भीड़ एकत्र हो गई। लोग चोटी पर से झुके हुए गैलिलियो को गर्दन टेढ़ी कर देखने लगे। "सब तैयार हो?" एक ही क्षण उसने दस पौंड तथा एक पौंड का तोप का गोला छोड़ा। निश्चय ही दोनो एक ही क्षण पृथ्वी पर पहुँचे। एक निमिष मात्र का भी अन्तर न हुआ। प्रमाण बिलकुल सही था। किन्तु वृद्ध उच्चपदस्थ अध्यापक बड़े नाराज हुए। उन्होने आपस मे कहा कि इस अद्भुत नवयुवक ने काले जादू का प्रयोग किया है। क्योकि अरस्तू कभी भी गलती नही कर सकता। जो कुछ भी हो, गैलिलियो इस प्रदर्शन से एक ही दिन मे प्रसिद्ध हो गया और वह यह दिखाता रहा कि विज्ञान मे अरस्तू ने और भी गलतियाँ की थी।

गैलिलियो का सबसे महान् समय तब आया जब उसे यह समाचार मिला कि एक डच ने ऐसी खोज की है कि दो तालो (Lenses) को कुछ दूर पर रख

वह निपुण गायक था और वीणा तथा आरगन बजाने में अपने पिता से, जिसका व्यवसाय ही गाना था, बढ़ कर था। वह उत्कृष्ट चित्रकार था और अच्छी कविता लिख सकता था। किन्तु गणित के प्रेम ने उसको विज्ञान की ओर झुकाया।

विश्वविद्यालय में उससे उच्चपदस्थ अध्यापक डरते थे क्योंकि वह ऐसे प्रश्न पूछता था जिनका उत्तर वे न दे सकते थे। वे उसे यह कह कर चुप न कर सकते थे कि "यह अरस्तू में है।" गैलिलियो कहता था—"हो सकता है, किन्तु आप इसका क्या कारण बताते हैं।" यह बड़ी घबड़ाहट की बात थी। किसी और विद्यार्थी ने ऐसा पहले कभी नहीं किया था। युवक गैलिलियो को सभी मेधावी मानते थे किन्तु विज्ञान विभाग में वह बहुत जन-प्रिय न था। अरस्तू और टॉलिमी में सन्देह नहीं किया जा सकता था। किन्तु गैलिलियो स्वयं हमेशा उत्तर सोचता रहता था।

एक दिन जब पीसा के बड़े गिरजे से वह पूजा के बाद लौट रहा था तो उसकी दृष्टि एक काँसे के विशाल दीपक पर पड़ी जो छत के बीच से लटक रहा था। एक परिचारक उसको जलाने आया था, इसलिए उसने उसको खींचा। किन्तु जब उसने इसे छोड़ दिया तो वह वृत्तांश बना कर झूलने लगा। गैलिलियो ने इसका निरीक्षण किया और देखा कि वृत्तांश की लम्बाई क्रमशः कम होती गई किन्तु समय वही लगता था। उसने इसकी जाँच अपनी नाड़ी से की। उस खोज से उसके वैज्ञानिक जीवन का प्रारम्भ हुआ। यह ऐसी बात थी जो गिरजाघर में प्रतिदिन होती थी किन्तु लटकन (Pendulum) की चाल पर किसी का ध्यान आकर्षित न हुआ था। इस खोज के आधार पर गैलिलियो ने प्रथम नाड़ी-दर्शक यन्त्र बनाया जो डाक्टरों के पास पहले न था।

सन् १५८१ में गैलिलियो के पिता ने उसे पीसा के विश्वविद्यालय में औषधियों का अध्ययन करने के लिए भेजा। उन दिनों तथा शताब्दियों बाद

कर उनके द्वारा देखने पर दूर की चीजें पास तथा बड़ी दिखाई देती हैं किन्तु उल्टी। उस पूरी रात वह सोचता रहा कि किस प्रकार उस यन्त्र को बनाया जाय। प्रश्न यह था कि ताल को नतोदर रखा जाय या उन्नतोदर। इसके अतिरिक्त और बहुत-सी बातें थीं। प्रातःकाल होते ही उसका प्रश्न हल हो गया। उस दिन उसने उससे भी अच्छा दूरदर्शक यन्त्र बनाया जिसके विषय में उसने सुना था। पर किसी कारण से उसके दूरदर्शक यन्त्र में चीजें दाहिने भाग में ऊँची दिखाई देती थीं।

वह जानता था कि वह इससे भी अच्छा यन्त्र बना सकेगा। अगले ६ महीने तक वह अपने दूरदर्शक यन्त्र पर परिश्रमपूर्वक काम करता रहा। इसके पश्चात् उसके पास ऐसा यन्त्र हो गया जो किसी वस्तु को हजार गुना बढ़ा कर दिखा सकता था। इसी की वह प्रतीक्षा करता रहा और उसने इसे चन्द्रमा की ओर लगाया। प्रथम बार मनुष्य की आँखों ने वहाँ के धरातल पर बड़ी पर्वत-मालाएँ देखीं जिनकी घनी छाया पड़ती थी। स्पष्ट रूप से चन्द्रमा पृथ्वी से बहुत मिलता-जुलता था। उस समय तक लोगों का विश्वास था कि चन्द्रमा का धरातल चमकीली धातु के गोले की भाँति चिकना और चमकदार था। इसके बाद उसने अपना दूरदर्शक यन्त्र सूर्य की ओर लगाया। सूर्य के धरातल पर उसने धब्बे ही नहीं देखे बल्कि यह भी देखा कि एक ओर ये धब्बे गायब हो जाते थे और दूसरी ओर फिर आ जाते थे। इसका अर्थ केवल यही हो सकता था कि सूर्य भी अपनी धुरी पर घूमता है।

इसके बाद उसने अपना दूरदर्शक यन्त्र आकाश-गंगा की ओर घुमाया और सही परिणाम पर पहुँचा कि प्रकाश का यह पीला कुहरा लाखों तारों से बना था। बाद में यह खोज हुई कि किसी ग्रीक ने पहले ही इसे ठीक कहा था किन्तु कई शताब्दियों तक यह बात भूली रही। गैलिलियो ने केवल प्रारम्भ किया था। ७ जनवरी सन् १६१० की रात्रि में उसने यह खोज की कि वृह-

स्पति ग्रह मे चार चन्द्रमा थे। बहुत बाद की शताब्दी मे बड़े शक्तिशाली दूर-दर्शक यन्त्रो से पाँच और चन्द्रमा देखे गये।

जब इनका समाचार यूरोप मे फैला तो लोग बड़े उत्तेजित हुए। फ्रास के सम्राट् हेनरी ने गैलिलियो से अपने नाम पर एक नये तारे का नामकरण करने के लिए, और इसके लिए उसे काफी द्रव्य देने के लिए, कहा। यह कहना अनावश्यक है कि गैलिलियो "हेनरी" तारे को कभी न पा सका। पोप ने उसे बुलाया और निवृत्ति वेतन (Pension) दिया। गैलिलियो ने रोम के एक उद्यान मे अपना दूरदर्शक यन्त्र स्थापित किया और सम्भ्रान्त लोग बड़ी जिज्ञासा से आकाश के नवीन आश्चर्यों को स्वय देखने आये।

१६३२ मे गैलिलियो ने अपनी मुख्य पुस्तक "गैलिलियो गैलिली के संसार का क्रम" लिखी। इस पुस्तक ने जो दूरदर्शक यन्त्र के आधार पर लिखी गई थी, सिद्ध कर दिया कि कॉपरनिकस की बात ठीक ही थी। यह पृथ्वी ही है जो विस्तृत मार्ग मे सूर्य के चारो ओर घूमती है जिससे वर्ष बनता है; यह पृथ्वी ही है जो अपनी धुरी पर घूमती है जिससे दिन-रात होता है। पुस्तक ने सनसनी फैला दी।

कुछ गिरजाघर के आदमी गैलिलियो से पहले ही से नाराज हो गये थे जिन्होने सोचा कि वह उत्पत्ति (जेनेसिस) की पुस्तक के विपरीत लिखता है। अपनी सबसे पिछली पुस्तक मे इन लोगो पर उसने तीक्ष्ण व्यंग्यात्मक प्रहार किया जिसका फल यह हुआ कि ७० वर्ष की अवस्था में उसे विवशतापूर्वक एवं विधिवत् यह मानना पड़ा कि पृथ्वी तथा सूर्य के विषय मे उसने जो कुछ सत्य माना था वह ठीक न था। और भी बहुत से पुराने व्यक्तिथे जो उससे इसलिए घृणा करते थे कि उसने अरस्तू तथा टॉलिमी की धारणा को गलत बताया है किन्तु उसके अच्छे मित्र भी थे। उनमे से एक फ्लोरेन्स का मेडिची परिवार का शक्तिशाली ड्यूक था जिसने उसकी अधिक से अधिक रक्षा करनेका प्रयत्न किया।

जैसे जैसे वह वृद्ध होता गया, उसका स्वास्थ्य खराब होता गया और उसे घरेलू कठिनाइयाँ भी होने लगीं। किन्तु उसके परिवार का ध्येय था, "काम करो और अपनी कठिनाइयाँ भूल जाओगे।" इस ध्येय का गैलिलियो से अधिक अच्छा पालन और किसी ने नहीं किया। दूरदर्शक यन्त्र के अधिक उपयोग से उसकी आँखें इतनी कमजोर हो गईं कि मृत्यु के पाँच वर्ष पहले उसकी एक आँख खराब हो गई और ६ महीने बाद दूसरी भी। फिर भी वह साहस से कार्य में लगा रहा। एक दिन एक सुन्दर अंगरेज नवयुवक, जो प्रसिद्ध कवि था, उससे मिला। उसका नाम जॉन मिल्टन था जो स्वयं भी दुर्भाग्य से जीवन के स्वर्णिम काल ही में अन्धा हो गया। मिल्टन ने प्रसिद्ध दूरदर्शक यन्त्र में देखा, किन्तु कई वर्ष बाद उसने अपनी "पैराडाइज़ लॉस्ट" पुस्तक में लिखा कि उसे उस समय तक यह भली भाँति निश्चय नहीं हुआ था कि सौर-मंडल तथा तारों के विषय में गैलिलियो के विचार सत्य थे या टॉलेमी के।

जब ८ जनवरी सन् १६४२ में इस महान् खगोलशास्त्री की मृत्यु हुई उस समय वह अपने पुत्र को पेन्डुलम के सिद्धान्त के आधार पर घड़ी बनाना बता रहा था। जीवन के अन्तिम काल में अपने प्रिय दूरदर्शक यन्त्र में कभी न देख सकने के कारण उसे उस क्षण की स्मृति आने लगी जिस समय पीसा के गिरजाघर में घुटने के बल खड़े होते समय उसने लटकते हुए दीपक को देखकर अपने वैज्ञानिक जीवन का प्रारम्भ किया था।

यह कॉपरनिकस का नवीन विचार था जिसकी सत्यता गैलिलियो और उसके दूरदर्शक यन्त्र ने उत्कृष्ट प्रयोगों द्वारा प्रमाणित की थी जिसने बाद में ब्रह्माण्ड के आश्चर्यों का वह द्वार खोला जो इतना विशाल था कि उसकी विशालता का अनुमान वे दोनों महान् व्यक्ति अपने जीवन-काल में स्वप्न में भी न लगा पाये थे।

जॉन केप्लर



जॉन केप्लर

जॉन केप्लर

(१५७१–१६३०)

सौर-मण्डल का आदि गणितज्ञ

आजकल यह रीति हो गई है कि जीवन में बच्चों की असफलता के लिए लोग उनके माता-पिता को दोष देते हैं। यदि कोई लड़का गलत मार्ग पर चला गया तो उसका कारण यह कहा जाता है कि माता-पिता ने उसे ठीक शिक्षा नही दो। इस सिद्धान्त के आधार पर जॉन केप्लर को बहुत ही बुरा होना चाहिए था क्योंकि उसके माता-पिता बहुत खराब थे। उसका पिता हेनरी बहुत भाग्यशाली सिपाही था जो पहले अपने सर्वाधिपति उर्टमबर्ग के ड्यूक की सेना में एक साधारण कर्मचारी था। बाद मे अपने पुत्र की कुछ भी परवाह किये बिना वह हालैंड की फौज मे भरती हो गया। जॉन की माँ कैथरिन भी अच्छी माता न थी। जॉन केवल तीन वर्ष का था तो वह चेचक से मरते-मरते बचा और जब वह बीमारी से अच्छा हुआ तो यह मालूम हुआ कि उसकी दृष्टि पर इसका काफी प्रभाव पड़ा है और उसके हाथ भी बड़े कमजोर हो गये हैं। एक या दो वर्ष बाद उसकी माता बेचारे दुःखी बालक को उसके बाबा की गोद में रख कर घर से भाग गई। वह अपने पति की भाँति ही थी। उसमे अपने पुत्र के लिए वह स्नेह न था जो एक माता को अपने पुत्र के लिए होना चाहिए।

अपने बारहवें वर्ष मे जॉन एक दूसरी बड़ी अनिष्टकर बीमारी से मरते-मरते बचा। इसके कारण और चेचक की पहली कमजोरियो से यह निश्चय

किया गया कि उसे व्यापार में लगाना बेकार है, विशेषतः ऐसे व्यापार में जिसमें हाथ की कुशलता की आवश्यकता थी। किन्तु वह और जर्मन लड़कों से बहुत अधिक तेज था, इससे उसे पाठशाला भेजा जाने लगा।

कुछ समय पश्चात् उसका पिता अपना सारा धन गंवा कर हालैण्ड से घर आ गया। आजीविका के लिए उसने एक सराय खोली और जॉन को, इस कठिन काम में हाथ बंटाने के लिए, पाठशाला से अलग कर दिया। शायद बेचारा लड़का हाथ से अधिक काम न कर सकता था इसलिए उसे पुरोहित बनाने के विचार से फिर स्कूल भेज दिया गया। समय पर ही वह, विद्यार्थियों को याजक-पद के लिए तैयार करने वाले, विद्यालय में भर्ती हो गया।

उच्च-परीक्षा के फलस्वरूप १७ वर्ष की अवस्था में वह ट्यूबिन्जन विश्वविद्यालय में, जो जर्मनी में था, प्रवेश पा गया। वहाँ पर उसने सबसे पहले कॉपरनिकस के विषय में सुना। उसने उस महान् पुरुष की कृतियों का अध्ययन किया और उनसे इतना पुलकित हुआ कि उसने उसके मार्ग का अनुसरण करने का विचार किया। इसलिए बड़ी अनिच्छा से उसने पुरोहित बनने का विचार छोड़कर गणित-विज्ञान को अपनाया। केप्लर को गणित के प्रदर्शनों में अलौकिक सौन्दर्य की मोहिनी दिखाई पड़ती थी। उसे कॉपरनिकस के गणित में इतना आनन्द आता था। जितना कि और लोगों को कोलोरेडो की महाधित्यका (Grand canyon) को डूबते हुए सूर्य के समय देखने में आता है। उसने कॉपरनिकस की प्रणाली के विषय में यह लिखा है, "मैं अपनी आत्मा के अन्तरतम भाग से इसे सत्य मानता हूँ और इसके सौन्दर्य पर अत्यन्त बलपूर्वक एवं सहज ही विश्वास न करने योग्य आनन्द से विचार करता हूँ।"

गणित में प्रतिभावान होने के कारण केप्लर को ग्रेट्ज विश्वविद्यालय में उच्च पदस्थ विज्ञान के अध्यापक का स्थान मिल गया जिसकी वृत्ति अल्प थी। जब

उसने काम करना प्रारम्भ किया उस समय वह विज्ञान के विषय में बहुत कम जानता था, किन्तु इस क्षेत्र मे जर्मनी में कुछ ही विद्वान् उससे अधिक ज्ञान रखते थे। सोलहवी शताब्दी के अन्त मे और सत्रहवी शताब्दी के प्रारम्भ मे यूरोप मे शिक्षा की दशा बहुत अच्छी थी जिससे इस नवयुवक ने पहला काम प्राचीन ज्योतिष के अध्ययन का किया जैसा कि विद्वानो ने इस विषय मे लिखा था, विशेषकर यूनानी ज्योतिषी टॉलेमी ने। किन्तु केप्लर इस स्थान पर अधिक दिनो तक न रहा। धार्मिक मतभेद के कारण उसे विश्वविद्यालय छोड़ना पड़ा। उसने सौर-मंडल पर किसी प्रकार से एक पुस्तक लिखी, जिसकी प्रतियाँ गैलिलियो तथा डेनमार्क के ज्योतिषी टायको ब्राहे को भेजी। टायको ब्राहे प्रथम आधुनिक ज्योतिषी था जिसने ग्रहो की गति के कुछ ठीक आँकड़े लिखे। टायको ने इस नवयुवक खगोलशास्त्री पर विशेष दया दिखाई और उसे प्राग आने के लिए आमन्त्रित किया जहाँ वह सम्राट् की सेवा मे रहता था। उसने केप्लर को सम्राट् से मिलाया और उसकी बड़ी प्रशंसा की। इसके फलस्वरूप यह नवयुवक टायको ब्राहे का सहायक नियुक्त हो गया और उसे "राजकीय गणितज्ञ" की उपाधि से विभूषित किया गया। केप्लर के लिए यह एक ईश्वरप्रदत्त सहायता थी क्योकि उस समय उसके पास एक पैसा भी न था और न वह कोई काम कर रहा था। किन्तु, चूँकि राजकीय कोष की दशा उस समय अच्छी न थी इससे उसकी 'राजकीय गणितज्ञ' की उपाधि उसके वेतन से बड़ी थी। वास्तव मे वह अपने जीवन-पर्यन्त गरीब रहा। २६ वर्ष की आयु मे उसने एक विधवा से विवाह किया जो जायदाद की उत्तराधिकारिणी थी किन्तु इससे उसे कोई आर्थिक लाभ न हुआ, क्योकि उस महिला के सम्बन्धियो ने सफलतापूर्वक लड़कर सब धन उससे दूर ही रखा।

इस बीच मे 'राजकीय-गणितज्ञ' के रूप मे पुन: उसका कार्य फलित-

ज्योतिष ही था। उसे सम्राट् और फ़ेडलैण्ड के ड्यूक वैलेन्सटाइन के लिए कुण्डलियाँ या भाग्य के लेख बनाने पड़ते थे। यह ड्यूक ३० वर्ष के युद्ध में, जो बाद में प्रारम्भ हुआ था, सेनापति के रूप में संसार में प्रसिद्ध हुआ। और भी बहुत से प्रसिद्ध लोग उसके यहाँ इसी फलित ज्योतिष के काम से आते थे। इस प्रकार केप्लर ने अपने वेतन की कमी की पूर्ति व्यक्तिगत कार्यों से होनेवाली आय से कर ली।

पहले उसने इस काम को गम्भीरता से करना प्रारंभ किया। उसने लिखा है, "प्रकृति जिसने सभी जीवों को रहने के लिए आजीविका दी है, उसी ने फलित ज्योतिष को खगोलशास्त्र का संगी तथा सहायक बनाया है।" उसका विचार था कि खगोलशास्त्र शुद्ध गणित है किन्तु फलित ज्योतिष ऐसा विज्ञान है जिससे मनुष्यों के जीवन के मार्ग-प्रदर्शन में सहायता मिलती है। बाद में उसने कहा कि मैंने उस विज्ञान की बहुत-सी बातें छोड़ दी हैं और केवल आवश्यक तत्त्व ही रहने दिया है। उसने यह अनुभव किया कि फलित ज्योतिष में बहुत-सी असंगत बातें आने लगी हैं। उसने स्वयं दावा किया कि उसने "फलित ज्योतिष की मूर्खता-पूर्ण बातों को समन्वयात्मक सिद्धान्त के रूप में परिणत कर दिया।" किन्तु अब भी उसे राजकीय गणितज्ञ होने के कारण फलित-ज्योतिष के पंचांगों का संपादन एवं प्रकाशन करना पड़ता था, क्योंकि इन्हें काफी लोग खरीदते थे।

उसका कर्तव्य कर्म फलित ज्योतिष का क्षेत्र था किन्तु उसके वास्तविक कार्य का क्षेत्र खगोलशास्त्र ही था। उसकी यह महत्त्वाकांक्षा थी कि वह कॉपर-निकस के कार्य को और आगे बढ़ावे जिससे खगोलशास्त्र केवल कोरे सिद्धान्त, अनुमान या एक सहस्त्र वर्ष पूर्व के टॉलेमी के किसी कथन के आधार पर आश्रित होने के स्थान पर सुदृढ़ गणितीय एवं भौतिक आधार पर सुप्रतिष्ठित हो जाय। केप्लर की, टायको के सहायक के रूप में, नियुक्ति होने के एक वर्ष

पश्चात् टायको की मृत्यु हो गई किन्तु उसकी बहुत सी गणनाएँ एव लेखादि केप्लर को प्राप्त हुए। इनसे उसे अमूल्य सहायता मिली।

गैलिलियो ने केप्लर द्वारा प्रेषित उपहार की उसकी प्रथम पुस्तक का बड़ा स्वागत किया और १६१० मे केप्लर को उस इटालियन खगोलशास्त्री के सुप्रसिद्ध दूरदर्शक यन्त्र से देखने का प्रोत्साहक विशेषाधिकार प्राप्त हुआ। इस अनुभव ने केप्लर को प्रकाश विज्ञान का गभीर अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया, जिसका बहुमूल्य परिणाम निकला।

आकाशीय पिण्डो की संपूर्ण गणना मं, जो केप्लर का व्यवसाय था, उसे पूर्ण विश्वास था कि ईश्वर ने ब्रह्माण्ड की रचना पूर्ण सख्याओ के सिद्धान्त के आधार पर की है और सभी वस्तुओ मं एक गणितीय समन्वय है जो वास्तविक "गोलको का सगीत" है और उसका विश्वास था कि यही ग्रहो की गति का मूल कारण है। सख्याओ और उनके सम्बन्ध के विषय मे उसको बड़ी अभिरुचि थी। यूनानियो ने अपनी ज्यामिति मे, विशेषतया वास्तु-कला मे, कतिपय आदर्श अनुपात उपस्थित किये थे। केप्लर का विश्वास था कि सख्याओ की सहायता से विश्व-निर्माण के मूल आधार को जाना जा सकता है। अपनी सभी दुष्कर गणनाएँ उसने घनिष्ठतापूर्वक इसी विचार के आधार पर की।

१६१९ मे उसने हार्मनी ऑफ दी युनिवर्स नामक एक महान् पुस्तक प्रकाशित की। उसका शीर्षक ही इस बात का सुझाव देता है कि सख्याओ के पारस्परिक सम्बन्ध मं पूर्ण समन्वय होता है, किन्तु इसके एक वर्ष पूर्व ही जर्मनी एव आस्ट्रिया के राज्यो मे भयकर तीसवर्षीय युद्ध प्रारम्भ हो गया था। इस कारण उसके देशवासी युद्ध मे इतने व्यस्त थे कि वह किसी भी प्रकार के "ब्रह्माण्ड के समन्वय" मे अधिक रुचि न रख सके।

दूसरे वर्ष उसे बहुत भयानक समाचार मिला कि उसकी माता जादू विद्या का प्रयोग करने के कारण पकड़ ली गई है और कारागार मे भेज दी

गई है और यह ऐसा जानते हुए किया गया था कि केप्लर स्वयं सम्राट् का एक विशेष कृपापात्र अधिकारी था। यह मालूम हुआ कि पिछले पाँच वर्षों से वह एक दूसरी स्त्री से झूठी बदनामी करने के लिए मुकदमा लड़ रही थी जिसने कैथरीन केप्लर पर किसी को विष देने का प्रयत्न करने का आरोप लगाया था जो बहुत असम्भव न था। इसके प्रतिशोध के लिए उस स्त्री ने कैथरीन केप्लर पर जादू विद्या के प्रयोग करने का आरोप लगा दिया।

पूरी सत्रहवीं शताब्दी में बड़े अविश्वसनीय वीभत्स कार्य होते थे, क्योंकि बहुत-सी निर्दोष वृद्धा स्त्रियाँ जादू करने के अभियोग में बहुत सताई जाती थीं और एक लकड़ी के यूप से बाँध कर जिन्दा जला दी जाती थीं। इस प्रकार के अत्याचारों की दृष्टि से जर्मनी सबसे खराब क्षेत्र था किन्तु यूरोप में हर जगह यह हो रहा था, मुख्यतः स्कॉटलैण्ड में। अमरीका में भी इसी शताब्दी में कुछ समय तक सलेम में जादूगरनियों को फाँसी दी जाती थी।

जादू के अभियोग में सबसे भयानक बात यह थी कि उसमें अपने को निर्दोष सिद्ध करने का कोई भी मार्ग नहीं रहता था और उनसे यह अभियोग, उन्हें बड़ी यन्त्रणा देकर, स्वीकार कराया जाता था जैसा साम्यवादी देशों में आजकल मुकदमे की सुनवाई में करते हैं। जैसा कि हमने देखा है कि कैथरीन केप्लर माता के रूप में पूर्णतया असफल रही तो भी जॉन एक मातृभक्त पुत्र था। वह उसकी सहायता के लिए दौड़ पड़ा और उसे उस यूप से बचाने के लिए तेरह महीने तक अपनी पूरी शक्ति से लड़ा। इतने समय के पश्चात् वह छोड़ दी गई क्योंकि उस महिला के विरुद्ध, उसका भयानक स्वभाव और बुरी भाषा के अतिरिक्त, और कुछ भी सिद्ध न हो सका। किन्तु जितने समय तक वह कैदखाने में थी, उसे प्रतिदिन यन्त्रणागार की धमकी दी जाती थी। इससे उसे छुटकारे के समय तक इतना कष्ट पहुँचा था कि कुछ ही समय बाद उसकी मृत्यु हो गई।

इस बीच मे तीसवर्षीय युद्ध अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच रहा था। केप्लर ने अपनी पुस्तको मे से एक पुस्तक इंगलैण्ड के सम्राट् जेम्स प्रथम को अर्पित कर कर दी थी जो वेनिस में बर्तानिया के राजदूत थे। उन्होने इस सुप्रसिद्ध खगोलशास्त्री से मिलने के लिए यात्रा की और उससे इंगलैण्ड जाने के लिए कहा जहाँ उस समय शान्ति थी और विद्वानो का बड़ा स्वागत किया जाता था। किन्तु केप्लर ने अपने देश को, जो गृहयुद्ध से नष्ट हो रहा था, छोड़ना उचित न समझा और उनसे विलक्षणतापूर्वक कहा कि "वह उस मुख्य भूमि को किसी द्वीप से अच्छा समझता है।" यह भी हो सकता है कि उसने इंगलिश चैनल को पार करने के विषय की अप्रिय कहानियाँ सुनी हो।

अपने गणितीय कार्य के सम्बन्ध मे, जिसमे उसके खगोलशास्त्र-सम्बन्धी निरीक्षण भी सम्मिलित थे, केप्लर ने सौर-मण्डल के विषय मे कुछ सिद्धान्त या "नियम" निकाले। केवल उस समय को छोड़कर जब उसकी माता कारागार मे थी, इस कार्य मे वह सर्वदा रत रहा। उसने सूर्य को "गतिमान शक्ति" बताया और यह भी बताया कि ग्रहो का यात्रा-मार्ग वृत्ताकार न होकर अडाकर वृत्त के सदृश था। गणनाओ के आधार पर आश्रित उसकी तीन बातें "केप्लर के सिद्धान्त" के नाम से प्रसिद्ध हैं। वे सिद्धान्त यहाँ पर लिखे नही जा सकते क्योंकि वे उच्चतर गणित से सम्बद्ध हैं, किन्तु इतना अवश्य स्मरण रखने की चीज है कि उसके वे सिद्धान्त जो ३ सौ वर्ष पूर्व गणित द्वारा निकाले गये थे, ग्रहो की गति के बहुत से तथ्यो के क्रमबद्ध निचोड़ हैं और वे आज भी बहुत कुछ अशो मे सही उतरते हैं। किन्तु इससे भी प्रयोजनीय बात यह है कि इन्ही सिद्धान्तो के आधार पर, उससे भी अधिक प्रतिभावान, सर आइजक न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त की खोज की और उसका प्रदर्शन किया। इन्ही कारणो से केप्लर को "भौतिक खगोलशास्त्र की नीव डालनेवाला" कहते हैं।

१६२७ में उसने एक ऐसे काम की पूर्ति की जिसे वह बहुत दिनों से कर रहा था। वह १ हजार से अधिक तारों की सूची बनाने का काम था। २ वर्ष बाद उसने सभी खगोलशास्त्रियों के लिए बुध और शुक्र के निकटवर्ती संक्रमण की घोषणा की। सूर्य के चारों ओर घूमनेवाले ग्रहों में बुध सबसे पहले देखा गया। केप्लर ने ग्रहों की गति सम्बन्धी गणना ही नहीं की प्रत्युत सौर-मण्डल के ज्यामितिक सम्बन्ध का भी खोज की। वह तालों (Lense) और प्रकाश के अध्ययन में अग्रगामी था।

यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि जिसे वह अपनी महत्तम खोज समझता था—ब्रह्माण्ड-निर्माण की योजना संख्याओं के रहस्यमय सम्बन्ध में निहित है—उस पर आजकल के वैज्ञानिक मुस्कराते हैं। वास्तव में कुछ लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि यदि केप्लर के सम्पूर्ण कार्यों का तीन चौथाई भाग नष्ट हो गया होता तो भी उसके यश में कोई कमी न आती; किन्तु साथ ही साथ वे उसके महान् कार्यों का आधुनिक खगोलशास्त्र के अग्रगामी कार्यों के रूप में समादर करते हैं।

शायद सबसे बड़ी चीज जिसे हम इस मनुष्य के जीवन और कार्यों में देखते हैं वह यह कि मानो वह अपना एक पैर मध्य युग में रख कर खड़ा है और दूसरा आधुनिक संसार में। उसने फलित ज्योतिष और रहस्यमय संख्याओं के सम्बन्ध तथा प्रगति के विषय में काफी समय बिताया। यद्यपि वह फलित ज्योतिष की बहुत-सी बातों की उपेक्षा करने लगा था किन्तु संख्याओं के रहस्य में वह मृत्यु-पर्यन्त विश्वास करता रहा। उसकी माता को एक जादूगरनी के रूप में जिन्दा जलाने से बचाने के लिए किया गया हृदय-विदारक युद्ध वास्तव में उसके जीवन में एक मध्यकालीन घटना थी। यह बहुत असम्भव बात नहीं है कि वह स्वयं जादू के कार्यों में विश्वास रखता था क्योंकि उस समय के सब लोग इसमें विश्वास रखते थे। रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय के

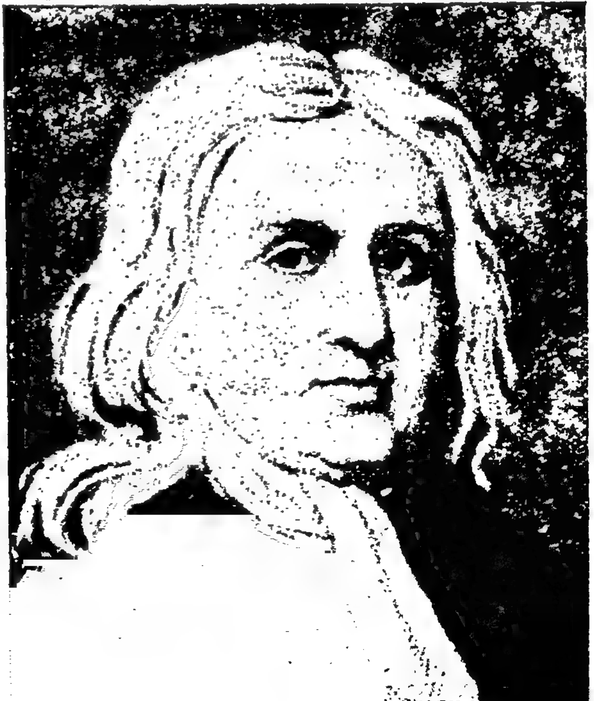
एक जेजुइट पुरोहित फादर स्पी का नाम स्मरण रखने योग्य है । इन्हे आरोप लगाई हुई जादूगरनियो के पाप की स्वीकृति करानेवाले के रूप मे खूंटे (Stake) के पास जर्मनी के ऊर्जबर्ग नगर में जाना पड़ता था । दो वर्ष से कम समय ही में इन्हे २ सौ से अधिक ऐसे अभागो को जिन्दा जलाते हुए बलात् देखना पड़ा था । भयभीत होकर उन्होने सर्वसाधारण के सम्मुख घोषणा की कि "ये लोग निर्दोष थे । उन्होंने अपने ऊपर लगाये गये अभियोगो को इसीलिए स्वीकार किया क्योकि वे घोर यन्त्रणा सहने से मृत्यु को अच्छी समझते थे ।" यह एक ऐसी बात थी जिसे पहले न तो किसी नें सोचा ही था और न उसे कहने का ही साहस किया था । सत्रहवी शताब्दी मे तो यह एक बड़ी अद्भुत वीरता का कार्य था, क्योकि चाहे वे धार्मिक मामलो पर कितना ही झगड़ते थे किन्तु इसे सब एकमत से स्वीकार करते थे कि जादूगरनियाँ भी कोई चीज हैं और उन्हे खूंटे (Stake) पर जलाने को भेजना चाहिए । कुछ भी हो, ऐसा क्रूर अन्ध-विश्वास क्या कर सकता था, इसके सम्बन्ध में केप्लर के अपने विचार थे ।

किन्तु उसके मध्य युग के विचारो का कारण उसका उस समय में होना था । यदि उसका एक पैर भूतकालीन अन्धकार मे था तो हमे यह न भूलना चाहिए कि दूसरा पैर नवीन सत्य के प्रकाश मे सुदृढ़तापूर्वक स्थिर था, विशेष-कर उसके सौर-मण्डल के वे तथ्य जिनके अनुसार सौर-मण्डल के ग्रहो के, सूर्य के चारो ओर, घूमने के मार्ग का निर्देश केप्लर ने अपने पूर्ववर्ती लोगो मे सबसे ठीक रीति पर किया था ।

फ्रांसिस बेकन
और
सर आइजक न्यूटन



फ्रांसिस बेकन



सर आइजक न्यूटन

फ्रांसिस बेकन

(१५६१-१६२६)

सर आइज़क न्यूटन

(१६४२-१७२७)

इँगलैएड में विज्ञान का उदय

मध्यकालीन वैज्ञानिक रॉजर बेकन अंगरेज था, किन्तु तीन शताब्दियो तक उसके देश मे ऐसा कोई न हुआ जिसने उसके पथ का अनुसरण किया हो। शिक्षा के पुनरुत्थान का कार्य इँगलेण्ड में धीरे-धीरे प्रारम्भ हुआ। कवि चॉसर उसी आन्दोलन से सम्बद्ध था किन्तु १४०० ई० मे उसकी मृत्यु के पश्चात् करीब दो सौ वर्षों तक साहित्य मे उसकी समता करने वाला कोई न हुआ और इँगलैण्ड मे चित्रकारो, मूर्तिकारो तथा विद्वानो के ऐसे विभिन्न संप्रदाय न थे जैसे इटली मे पन्द्रहवी और सोलहवी शताब्दियो मे विद्यमान थे। चॉसर इँगलेण्ड और फ्रास के बीच होने वाले शतवर्षीय युद्ध के मध्य में ही मर गया और उस युद्ध के समाप्त होने के कुछ ही समय पश्चात् इँगलेण्ड मे गुलामो का युद्ध प्रारम्भ हो गया। यह तीस वर्ष तक और चला जिससे बड़ी अव्यवस्था फैल गई और कलाओ एव विज्ञान को उन्नति का अवसर न मिला। इन लड़ाइयो के समाप्त होने के बाद भी धार्मिक झंझटो के कारण रानी एलिजाबेथ के महान् युग के प्रारम्भ तक कुछ भी उन्नति न हो पाई।

फ्रांसिस वेकन

रॉजर वेकन के वाद प्रथम अंगरेज जिसने वि ान के क्षेत्र में कार्य किया वह फ्रांसिस वेकन था। यह बड़ी अद्भुत बात है कि उसके भी कुल का नाम यही था। वह राजनीतिज्ञ, दार्शनिक और अत्यन्त वि ान् पुरुष था। उसके निवन्ध आज भी अपने सारपूर्ण पांडित्य के कारण पढ़े जाते हैं। कुछ लोग तो यह सोचते थे कि विलियम शेक्सपियर के नाम से लिखी गई सभी पुस्तकें उसी की लिखी होंगी। जो कुछ भी हो, विज्ञान के क्षेत्र में उसने मुख्य योग दिया। उसने लैटिन में नोवम आरगेनम नामक (१६२०) एक महान् पुस्तक लिखी जिसमें उसने यह दिखाया कि सावधानी से निरीक्षण और तथ्यों के वर्गीकरण द्वारा किस तरह वैज्ञानिक ज्ञान वढ़ाया जा सकता है और इन दोनों के माध्यम से ठीक निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है। उसे "आधुनिक विज्ञान का सन्देशवाहक" कहते हैं, क्योंकि वह किसी प्राचीन यूनानी या अन्य किसी प्राचीन काल के तथा-कथित प्रमाण का आधार न लेकर सीधे प्रकृति की ओर जाने के लिए आग्रह करता था। जहाँ पर उसे असफलता हुई उसका कारण निरीक्षित और वर्गीकृत तथ्यों से सही निष्कर्ष पर पहुँचने की महान् कठिनाई थी जिसका उसने विचार नहीं किया था। वह इतना सरल कार्य नहीं है जैसा कि उसने सोचा था।

यह सत्य है कि न तो उसने किसी सिद्धान्त विशेष के रूप में किसी मुख्य तथ्य को जन्म ही दिया और न उसने कोई महान् खोज ही की, किन्तु उसे इस कारण स्मरण रखना चाहिए कि उसने अपने परवर्ती वैज्ञानिकों के अनुसरण के लिए उचित उदाहरण रखा और उसके विचारों में दूरदर्शिता थी। उदाहरण के लिए उसकी मृत्यु एक ऐसा प्रयोग करते हुए न्यूमोनिया से हुई जिसमें उसने एक मृत पक्षी विशेष को वर्फ में यह जानने के लिए गाड़ दिया था कि ठंडक में रखने से क्या मांस ताजा वना रह सकेगा। उसका यह प्रयोग हमारे वर्तमानकालीन ठंडा

करने वाले उपकरणों का अग्रदूत था। उसकी रचनाओं ने अंगरेजों में विज्ञान के अध्ययन के लिए अभिरुचि जागृत कर दी। अपनी मृत्यु के पश्चात् होने वाली पीढ़ियों के द्वारा इंगलैण्ड मे 'रॉयल सोसाइटी' नामक प्रथम वैज्ञानिक संगठन के निर्माण-कार्य में, जो आज भी ससार के प्रमुख वैज्ञानिक संगठन की श्रेणी में स्वीकार किया जाता है, प्रत्यक्ष रूप से उनका मार्ग प्रशस्त किया।

सर आइजक न्यूटन

सन् १६४२ में क्रिसमस के दिन, उसी वर्ष जिसमे गैलिलियो की मृत्यु हुई, अपने पिता के परिवार के कृषि-क्षेत्र के निकटवर्ती प्रस्तरनिर्मित गृह मे, लिकन-शायर में, इंगलैण्ड मे आइजक न्यूटन का जन्म हुआ था। न्यूटन के जन्म के पूर्व ही उसके पिता की मृत्यु हो गई थी। थोड़े समय के पश्चात् बच्चे को उसकी दादी के संरक्षण में छोड़कर उसकी माता दूसरा विवाह कर चली गई। प्रत्यक्ष रूप से न्यूटन की माता ने उसे अधिक प्यार नही किया, किन्तु अपनी दादी के साथ वह अच्छी तरह से रहा और बाल्यकाल मे यन्त्र-चालित खिलौनो के बनाने मे उसने बड़ी कुशलता दिखलाई। उसने एक ऐसी चक्की बनाई जो चूहे द्वारा चलाये जाने वाले पहिये से चलती थी। यही नही, उसने एक जल-घड़ी का भी निर्माण किया जो बिलकुल ठीक समय बतलाती थी। अपने इस प्रिय विषय को वह आजीवन न भूला। अत्यन्त वृद्धावस्था में भी उसे चीजें बनाने मे प्रसन्नता होती थी, विशेषकर असाधारण प्रकार की घड़ियों के निर्माण में।

पहले उसका मन पाठशाला मे न लगता था किन्तु एकाएक उसकी पुस्तकों में अभिरुचि बढ़ी और कक्षा मे वह सबसे आगे हो गया। उसके सौतेले पिता की मृत्यु के पश्चात् आइजक को माँ ने लौटकर स्वयं खेती करने का निश्चय किया। "मैं यह चाहती हूँ कि तुम एक अच्छे किसान बनो" कहते हुए

उसने आइजक से पाठशाला छुड़वा दी। किन्तु खेत से घास-पात आदि साफ करने के स्थान पर आइजक पाटी-गणित की समस्याओं को हल करने में अधिक समय व्यतीत करता था। इन प्रश्नों को वह या तो मस्तिष्क में ही हल कर लेता था या जमीन पर तेज लकड़ी से। हार मान कर उसकी माता ने उसे फिर पाठशाला भेज दिया। यही तो वह चाहता था।

१९ वर्ष की अवस्था में उसने केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में प्रवेश किया और जल्दी ही सम्पूर्ण गणित, जो प्राध्यापकों को पढ़ानी थी, सीख लिया। गणित में वह लगा रहा और उसने उसमें अनेक आविष्कार तथा वास्तविक खोज भी की जैसे द्विपद प्रमेय और चल राशि-कलन (Integral Calculus)। जीवन के पिछले भाग में उसने चलन-कलन (Differential Calculus) का भी आविष्कार किया। केम्ब्रिज में जाने के ४ वर्ष बाद, १६६५ में, उसका विद्यालय बड़ी महामारी के कारण बन्द हो गया। दूसरे वर्ष विश्वविद्यालय के नगर में महामारी फिर आई और एक बार फिर शिक्षा के द्वार बन्द हो गये। सौभाग्यवश आइजक उन भाग्यवानों में से एक था जो दोनों अवसरों पर इसके संक्रमण से बच गये। १६६५ के अन्त में, जब कि वह घर पर था और उसे विवशता के कारण प्रथम अवकाश मिला था, सार्वभौम गुरुत्वाकर्षण का विचार उसे सूझा। न्यूटन की भतीजी ने सुप्रसिद्ध फ्रांसीसी साहित्यिक वोल्टेयर को एक बार वह कहानी बतलाई जिससे कि यह घटना घटी थी। यद्यपि कुछ लोग इसे कल्पित कथा कहते हैं किन्तु यह बहुत अविश्वसनीय नहीं है। उसने बताया कि एक दिन जब उसके चाचा घर में बगीचे के अन्दर एक पेड़ के नीचे बैठे हुए थे तो उन्होंने एक सेब को गिरते हुए देखा। इस बात से वह सोचने लगा। उसने स्वयं अपने से कहा कि वह सेब ऊपर न गिरकर नीचे क्यों गिरा? लोग कहते हैं कि यह पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के कारण है। यह क्या है? आकर्षण शक्ति हो सकती है, क्या यह सत्य नहीं है कि यहाँ पृथ्वी पर कोई शक्ति कार्य

कर रही है; सम्भवतः यह उतनी ऊँचाई तक विस्तृत है जहाँ चन्द्रमा स्थित है। हो सकता है कि वह पिण्डाकार ग्रह अन्तरिक्ष में इसी आकर्षण शक्ति के कारण रुका हो। कौन जानता है, यह एक सार्वभौम शक्ति ही हो। उसी समय न्यूटन के सिद्धान्त का जन्म हुआ। बाद में वर्षों तक जब यात्रीगण न्यूटन के जन्म-स्थान पर आते थे तो उनको वह वृक्ष दिखलाया जाता था जिसके नीचे नवयुवक वैज्ञानिक बैठा था। जब यह महान् विचार उसको सूझा उस समय उसकी उम्र केवल तेइस वर्ष की थी। इस महान् पुरुष की मृत्यु के प्रायः सौ वर्ष बाद १८२० में यह प्राचीन स्मारक पूर्ण रूप से काट डाला गया।

न्यूटन के लिए दूसरा कर्तव्य-कर्म यह था कि यदि संभव हो तो गणित द्वारा अपने विचार की सत्यता का प्रदर्शन करे। यदि पिण्ड को पिण्ड आकर्षित करता है तो उसकी गणना मे दूरी भी आयगी अन्यथा चन्द्रमा भी सेव की भाँति पृथ्वी पर गिर पड़ेगा। संभव है, चन्द्रमा की भ्रमण-कक्षा कोई ऐसा मार्ग निर्देश कर सके जिससे यह सिद्धान्त सिद्ध हो जाय। यह सोचकर युवक आइजक अपनी गणनाओं के साथ जुट गया। पृथ्वी से चन्द्रमा की अनुमानित दूरी, अक्षांश के एक अंश में मीलो की संख्या और भूमध्य रेखा पर पृथ्वी के व्यास की लम्बाई, इतनी चीजें उसे मालूम करनी थी। इन आँकड़ों पर आधारित अपनी गणना द्वारा उसने यह पता लगाया कि चन्द्रमा को पृथ्वी के चारों ओर घूमने मे प्राय. बत्तीस दिन लगना चाहिए किन्तु वास्तव मे केवल सत्ताइस दिन लगते हैं। यह उसका दिल तोड़ने के लिए पर्याप्त था। उसे पूर्ण विश्वास था कि उसने एक महान् सत्य का पता लगा लिया है। दुःखी होकर उसने उन कागजो को एक ओर रख दिया और प्रायः बीस वर्षों तक वे अछूते पड़े रहे।

इस बीच मे उसका चपल मस्तिष्क और समस्याओ पर काम करने लगा। जब वह दूरदर्शक यत्र का उपयोग कर रहा था तो प्रतिविम्व की

अस्पष्टता के कारण उसे व्याघात पहुँचा। उससे उसने प्रकाश का अध्ययन करना प्रारम्भ किया। एक अँधेरी कोठरी में एक छोटे से छिद्र से हो कर जो सूर्य की किरण आ रही थी उसके मार्ग में उसने एक त्रिपार्श्व काँच रखकर यह पता लगाया कि सफेद प्रकाश सात रंगों की किरणों से बना हुआ है जो इन्द्रधनुष में हैं। इसके अतिरिक्त उसने यह भी देखा कि ये विभिन्न किरणें दूसरे माध्यमों जैसे पानी, रवाया शीशे के तालों के अन्दर से जाने पर अलग-अलग कोण बना कर झुकती हैं। इससे दूरदर्शक यन्त्र के तालों में जो प्रतिविम्ब पड़ता था उसकी अस्पष्टता का कारण मालूम हो गया। इस वक्रता को दूर करने के लिए न्यूटन ने परावर्तक दूरदर्शक यन्त्र की खोज की और १६६८ में वैसा यन्त्र बना लिया। यह केवल ६ इंच लम्बा था और उसमें केवल एक इंच का छिद्र था किन्तु यह रूक्ष यन्त्र कैलिफोर्निया के महान् माउन्ट पालोमर परावर्तक दूरदर्शक यन्त्र का—जो संसार में आज सबसे शक्तिशाली दूरदर्शक यन्त्र है—पितामह था। इन प्रयोगों के आधार पर, कुछ वर्ष बाद, न्यूटन ने प्रकाश-विज्ञान पर एक पुस्तक प्रकाशित की। इस पुस्तक में उसने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि प्रकाश उन अनंत अत्यन्त छोटे-छोटे कणों से मिलकर बना हुआ है जिन्हें प्रकाश देने वाली वस्तु फेंकती है। बेशक यह बीसवीं शताब्दी का लहर सिद्धान्त नहीं है किन्तु तो भी इससे वह बहुत दूर नहीं था।

उसने दूसरा परावर्तक दूरदर्शक यन्त्र बनाकर उसे रॉयल सोसाइटी को भेज दिया और अगले वर्ष वह इस संस्था का सभासद चुन लिया गया। इसके पहले ही उसे केम्ब्रिज में गणित का प्राध्यापक चुन लिया गया था क्योंकि गणितज्ञ और वैज्ञानिक के रूप में उसे पर्याप्त ख्याति मिल चुकी थी।

गुरुत्वाकर्षण की समस्या पर परिश्रम करने के प्रायः बीस वर्ष पश्चात् उसे एक फ्रांसीसी वैज्ञानिक से पता चला कि उसने अद्यावधि पृथ्वी

के विषय मे स्वीकृत आँकड़ो में भयकर त्रुटियो का पता लगाया है। भूमध्यरेखा अब पूर्व स्वीकृत लम्बाई से ४००० मील और अधिक लम्बी सिद्ध हुई है तथा अक्षाश का एक अश ६० मील के बराबर होने के स्थान पर वास्तव म ६९३ मील के बराबर सिद्ध हुआ है।

जब न्यूटन ने यह सुना तो वह उत्तेजनापूर्वक फिर से अपनी गणनाएँ उसी विचार पर करने लगा जिसे उसने उतने वर्षों पहले छोड़ दिया था। इस बार सशोधित आँकड़ो की सहायता से सब कुछ ठीक आया। उसकी महान् प्रेरणा वास्तव में सही निकली। सचमुच गुरुत्वाकर्षण एक सार्वभौम नियम था। किन्तु वह इतना नम्र था कि अपने उन कागजो को अलग रख कर वह अन्य काम करने लगा। एक दिन उसके मित्र खगोलशास्त्री हैली को, जिसके नाम पर हैली-पुच्छल तारे का नामकरण हुआ है, यह पता चला कि न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण पर कोई महान् काम किया है। इस विषय मे वह उससे मिलने गया।

"क्या आप वास्तव मे बता सकते हैं कि सूर्य के चारो ओर ग्रह की भ्रमण-कक्षा क्या है?"

"हाँ!"

"यह आप कैसे जानते हैं?"

"मैंने इसकी गणना की है।"

"क्या! आपकी गणनाएं कहाँ हैं?"

न्यूटन ने देखा परन्तु उन बहुमूल्य कागजो को वह न ढूँढ़ पाया। किन्तु वह बड़ी कृतज्ञता से बैठ गया और अपने मित्र के लिए उसने फिर से पूरी समस्या को हल कर दिया। हैली उसके प्रति श्रद्धा से अवाक् रह गया। वह चिल्लाया—"यह एक आश्चर्यजनक खोज है! यह इतिहास की महानतम खोजो मे से एक है। इसे अवश्य प्रकाशित होना चाहिए।"

अभाग्यवश न्यूटन के पास पुस्तक प्रकाशित करने के लिए रुपया न था। उसके गरीब सम्बन्धी उस पर निरन्तर भार बढ़ा देते थे जिससे उसकी जेब हमेशा खाली रहती थी। हैली ने, जो उस समय रॉयल सोसायटी का मन्त्री था, न्यूटन को लिखा कि सोसाइटी इसे प्रकाशित करेगी। बाद में यह पता चला कि सोसाइटी का कोष भी न्यूटन की जेब की भाँति ही खाली था। इस पर दयालु हैली ने सारा व्यय स्वयं दिया; अन्यथा उसके बिना यह पुस्तक कभी न प्रकाशित हुई होती। परिणाम यह हुआ कि १६८७ में उस पुस्तक का प्रादुर्भाव हुआ जिससे आइजक न्यूटन का नाम विज्ञान के इतिहास में सदैव के लिए अमर हो गया। चूँकि उन दिनों विद्वानों की अन्तर्राष्ट्रीय भाषा लैटिन ही थी इसलिए यह पुस्तक भी इसी भाषा में एक लम्बे शीर्षक के साथ प्रकाशित हुई। आजकल प्रायः इसका शीर्षक छोटा करके इसको एक ही शब्द में 'प्रिन्सिपिया' रखा गया है जिसका अर्थ उसकी खोजों का गणितीय सिद्धान्त है।

सुदृढ़ गणितीय प्रमाणों पर आधारित इन सिद्धान्तों ने मनुष्य के ब्रह्मांड-विषयक ज्ञान में क्रांति कर दी और समुद्री ज्वार-भाटे की गति से लेकर तारों के घनत्व तक के अनेक गूढ़ प्रश्नों के उत्तर दिये। गुरुत्वाकर्षण के गणितीय सूत्रों में न जाकर साधारण शब्दों में यह कहा जा सकता है कि न्यूटन ने यह खोज की कि सम्पूर्ण ब्रह्मांड किसी रहस्यमय शक्ति से बँधा हुआ है; प्रत्येक वस्तु दूसरी वस्तु को आकर्षित करती है—पिंड को पिंड आकर्षित करता है। यह आकर्षण उनके सापेक्ष्य आकार के निश्चित अनुपात के अनुसार होता है और दृढ़ गणितीय सम्बन्ध के आधार पर ही उनके बीच की दूरी भी सीमित होती है। यह कहा गया है कि "विज्ञान के सम्पूर्ण इतिहास में किसी मनुष्य का योगदान इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना कि यह है।" यह कोई साधारण सराहना नहीं है।

विज्ञान के क्षेत्र मे इतना बृहत् काम करते हुए भी न्यूटन अन्य अभिरुचियो तथा महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्यो के लिए समय निकाल लेता था । वह उस समय के बाइबिल के महान् विद्वानो में से एक था । वह एक देश-भक्त नागरिक भी था । केम्ब्रिज मे जब वह प्राध्यापक था, तब उसने सम्राट् जेम्स द्वितीय का प्रगतिशील विरोध किया जब उसने विश्वविद्यालय के कुछ प्राचीन अधिकारों को छीनने की कोशिश की थी । इससे लोगो मे साहस बढ़ा । उदार दलवालो ने न्यूटन को कई बार ससद में भेजा । १६९५ मे उसे टकसाल का सरक्षक बना दिया गया और तीन वर्ष बाद वह मिंट का अध्यक्ष बना दिया गया जिस पद पर वह मृत्यु-पर्यन्त रहा । उस समय तक, जब कि उसने यह कार्य-भार ग्रहण किया, टकसाल का प्रधान होना एक सरल काम समझा जाता था जिसमे अध्यक्ष आवारो और बेकार मनुष्यो से घिरा रहता था । किन्तु न्यूटन ने इसे देश के प्रति अपनी एक पवित्र जिम्मेदारी समझा और उसने बर्तानिया के सिक्को को सुधारने में अपने समस्त पूर्ववर्ती व्यक्तियो से अधिक कार्य किया । इस काम के लिए वह पूरे दिन का समय देता था और अपनी प्रिय गणित, विज्ञान तथा बाइबिल की पाण्डुलिपियो के लिए उसने सध्या का समय निश्चित किया था । प्रत्येक रात मे वह केवल चार से पाँच घटे तक सोता था और इसे भी समय का वृथा नष्ट होना समझ कर बहुत कुढ़ता था ।

रात को मोमबत्ती के प्रकाश मे वह क्या कर सकता था, यह एक ऐसी घटना से विदित होता है जो टकसाल के अध्यक्ष के पद पर उसकी नियुक्ति से तीन वर्ष पूर्व घटी थी । इटली के एक गणितज्ञ ने वैज्ञानिक ससार को एक समस्या का हल करने के लिए ललकारा जिसे उसने स्वय बनाया था और इसके लिए उसने ६ महीने का समय दिया । इस समय के बीत जाने पर भी समस्या का हल न हुआ । किन्तु लाइबनिट्ज ने, जो जर्मनी का उस समय का एक महान् गणितज्ञ था, दो महीने का समय और माँगा और वह समय दे

दिया गया। जब यह समय भी बीत गया और समस्या का कोई हल न मिला तब इस प्रश्न को एक वैज्ञानिक पत्रिका में प्रकाशित कर दिया गया जिसे न्यूटन खरीदता था। टकसाल में पूरा दिन बिता कर एक बार शाम को घर आने पर उसे वह पत्रिका अपनी मेज पर मिली और उसमें वह समस्या भी मिली जिसने संसार के उत्कृष्ट गणितज्ञों के मस्तिष्क को आठ महीने या इससे भी अधिक समय से व्यग्र कर रक्खा था। संभवतः वह उस रात्रि को खाना खाना भूल गया, जैसा कि वह प्रायः किया करता था और पेन्सिल, कागज लेकर बैठ गया। उस रात्रि को उसने उस समस्या पर कितनी देर काम किया, यह नहीं बतलाया जाता किन्तु दूसरे दिन प्रातःकाल उसने समस्या का विधिवत् हल अच्छी तरह से लिखकर रॉयल सोसाइटी को भेज दिया।

यह आश्चर्य की बात नहीं है कि ऐसे प्रतिभाशाली व्यक्ति को २४ वर्ष तक प्रतिवर्ष रॉयल सोसाइटी का सभापति चुना गया। इस पद पर वह मृत्यु पर्यन्त रहा। १७०४ में रानी एन ने उसे "नाइट" की उपाधि दी और तत्पश्चात् वह सर आइजक न्यूटन हो गया।

अपने जीवन के पचासीवें वर्ष में, मृत्यु के कुछ ही पहले, जब सारा संसार उसके चरित्र और प्रतिभा का सम्मान करता था उसने यह शब्द कहे जो उसकी विलक्षण नम्रता प्रदर्शित करते हैं, "मैं नहीं जानता कि संसार मुझे क्या समझेगा किन्तु मैं अपने को समुद्र के किनारे खेलते हुए एक ऐसे लड़के के सदृश समझता हूँ जो जब तब मनोरंजनार्थ कभी चिकने कंकड़ या सुन्दर घोंघे पा लेता है जब कि सत्य का महान् समुद्र मेरे सम्मुख अनाविष्कृत पड़ा हुआ है।" ये शब्द उस मनुष्य के हैं जिसके विषय में यह कहा गया है कि "उसकी प्रतिभा का अनुमान लगाना असम्भव है।"

दयालु और धार्मिक होते हुए भी न्यूटन का संबन्ध गणित एवं विज्ञान के क्षेत्र के अपने प्रतिद्वंद्वियों—या जो अपने को प्रतिद्वंद्वी समझते थे उनसे कभी भी

अच्छा न था। चूँकि उसने कभी भी विवाह नही किया इसलिए उसकी अनुरक्त भतीजी उसके घर का काम काज देखती थी और उसके बहुत से विश्वस्त मित्र और प्रशंसक थे। किन्तु उसके पिछले दिन इंगलैण्ड के तथा शेष यूरोप के द्वेषी व्यक्तियो के कारण विपादपूर्ण बीते। क्योंकि वे लोग चिल्लाते थे, "मैंने उसे पहले सोचा था" और स्वयं यश लेने के लिए लालायित रहते थे। एक बार उसके पालतू कुत्ते डाइमण्ड ने एक जलती हुई मोमबत्ती मेज पर गिरा दी। न्यूटन ठीक उसी समय गिरजाघर से वापस आकर अपने अध्ययन-कक्ष मे गया जब कि उसके सब बहुमूल्य कागज जल चुके थे। यह एक विपादपूर्ण घटना थी क्योकि वे कागज उसके अगणित घंटो के कार्य के प्रतिनिधि थे। किन्तु इससे उसका दयालु हृदय उतना दुखी न हुआ जितना उन लोगो के आक्रमण से जो उससे उसका यश स्वयं चुरा लेना चाहते थे। उसके समय के एक महान् पादरी बिशप बर्नेट ने उसके विपय मे कहा है, "उसकी आत्मा, उनके समस्त परिचितों मे, स्वच्छतम थी।"

बहुत से प्रतिभाशाली लोगो की सराहना उनकी मृत्यु के बाद तक नही होती किन्तु अनेक द्वेपी प्रतिद्वन्द्वियो के होते हुए भी यह बात न्यूटन के विपय मे सत्य न थी। वे मनुष्य भी, जो निर्दयतापूर्वक दूसरे लोगो की आलोचना करते थे, इस प्रतिभावान व्यक्ति के सम्मुख नतमस्तक हो जाते थे। उदाहरणार्थ, अंगरेज कवि पोप ने, जिससे उसकी क्रूर वाग्विदग्धता के कारण लोग डरते थे, न्यूटन की समाधि पर अंकित करने के लिए ये पंक्तियाँ लिखी हैं :—

प्रकृति और प्रकृति के सिद्धान्त रात्रि के अंधकार से आच्छादित थे;
ईश्वर ने कहा, "न्यूटन का प्रादुर्भाव हो" और सर्वत्र प्रकाश हो गया।

ये जिस कमरे में न्यूटन पैदा हुआ था उसकी दीवाल पर लगी हुई एक तख्ती पर ये पंक्तियाँ खोदी गई थीं।

मृत्यु के पश्चात् इस महान् पुरुष का शव राजकीय आटोप में इस तरह रखा गया मानों वह कोई सम्राट् हो और उसके सम्मानार्थ शव-रक्षक पुरुषों में, जो शवाधार के ऊपर का वस्त्र पकड़े हुए थे और जिन्होंने शव को उसके चिर विश्राम-स्थल—वेस्ट मिनिस्टर एवे—में पहुँचाया, इँगलैंड के लॉर्ड चान्सलर, दो ड्यूक और चार अर्ल थे। उस प्रभावशाली अन्त्येष्टि-क्रिया में एक और प्रसिद्ध एवं प्रायः क्रूर वाग्विदग्ध फ्रांसीसी लेखक भी था जिसका नाम वोल्टेयर था। उसने ये शब्द लिखे हैं, "यदि ब्रह्माण्ड के सभी प्रतिभाशाली व्यक्ति एकत्र किये जायँ तो न्यूटन इस दल का अग्र-गामी रहेगा।" किन्तु सर्वोत्कृष्ट प्रशंसा अँगरेज नवयुवक कवि वर्ड्सवर्थ से मिली जिसने १७८७ में केम्ब्रिज में प्रवेश करने पर न्यूटन की सुन्दर मूर्ति को उस विद्यालय में खड़े हुए देखा जिसमें उसने अध्ययन किया था। इस मूर्ति का कवि ने इस प्रकार वर्णन किया है—"यह संगमर्मर प्रतीक उस मस्तिष्क का है जो विचारों के अद्भुत सागर में चिरन्तन रूप से एकाकी संचरण किया करता था।"

न्यूटन के जीवन और कार्यों की कहानी एक घटना का वर्णन किये विना पूर्ण नहीं होगी जो उसकी मृत्यु के काफी बाद घटी और जिससे उसका गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त एक नाटकीय ढंग से प्रमाणित हो गया।

१७५७ में शहनाई बजाने वाला एक जर्मन नवयुवक लन्दन में एक सैनिक बैण्ड बजाने वाले दल के साथ आया। किन्तु इस नवयुवक ने शहनाई छोड़कर दूरदर्शक यंत्र ले लिया। उसने उस दूरदर्शक यंत्र से जो काम किया उससे उसे भी "नाइट" की उपाधि मिली और आज दिन वह सर विलियम हर्शेल के नाम से प्रसिद्ध है। १७८१ में उसने यह खोज की कि जो तारा स्थिर समझा जाता

है वह वास्तव मे हमारे ही सौर मण्डल का एक दूसरा ग्रह है। यह 'यूरेनस' के नाम से प्रसिद्ध है। जब खगोलशास्त्रियो ने यूरेनस का नवीन अभिरुचि से निरीक्षण किया तो इसका व्यवहार उन्हे एक पहेली जान पड़ा। न्यूटन के सिद्धान्त के अनुसार यह बिलकुल कार्य नही कर रहा था। यह अपने मार्ग से बहुत झुक जाता था जैसा कि एक आदर्श ग्रह के लिए न होना चाहिए। क्या यह हो सकता है कि न्यूटन गलती पर था? यूरेनस अनेक वर्षों तक खगोलशास्त्रियों के लिए पहेली बना रहा जब तक कि १८४५-१८४६ मे एक अंगरेज और एक फ्रासीसी खगोलशास्त्री, दोनो ने प्रस्ताव किया कि यूरेनस की इस आश्चर्यजनक गति का कारण कोई अदृश्य ग्रह हो सकता है। इसके पश्चात् उन्होने उस अदृश्य ग्रह के परिमाण और स्थिति की भी गणना की। निश्चय ही इस अपरिचित ग्रह की स्थिति, एक ही समय मे, बर्लिन और ग्रीनविच, इंगलैंड की वेधशालाओ मे देखी गई और आकाश में उसकी वास्तविक स्थिति उस स्थान से—जिसकी पहले भविष्यवाणी की गई थी—एक ही अंश के अन्दर पाई गई। यह एक अत्यन्त बृहत् ग्रह सिद्ध हुआ जो पृथ्वी के आकार से पचासी गुना बड़ा और हमारे सौर मडल मे सबसे दूर था। इसका परिमाण ही यूरेनस के आश्चर्यजनक व्यवहार का वास्तविक कारण था। इस प्रकार नेपचून ग्रह की खोज न्यूटन के सिद्धान्त की ज्वलन्त समर्थक सिद्ध हुई। यह सब न्यूटन के वेस्ट मिनिस्टर एबे मे दफनाये जाने के एक शताब्दी से अधिक समय के पश्चात् हुआ।

कार्ल लिने



कार्ल लिने

निक से बनाया था। इसलिए आदरणीय लिन के पुत्र का नाम कार्ल लिन के स्थान पर कैरोलस लिने हो गया।

स्वीडन में एक प्रकृतिवादी के पैदा होने के लिए यह समय अच्छा न था क्योंकि गस्यवस एडॉल्फस का सैन्य ख्याति के थोड़े समय बाद देश शक्ति तथा उन्नति में पिछड़ गया था। राजगद्दी पर एक दुर्बल राजा बैठा था और देश में बड़ी गरीबी फैली हुई थी। किन्तु बच्चा कार्ल इसे न जानता था और न इसकी परवाह ही करता था। उसका पिता बागवानी करने में बड़ा प्रतिभावान था, इससे ग्राम के लोग उसे "हरा अंगूठा" कहते थे और वह अपना अधिकतर अवकाश का समय अपने फूलों और वनस्पतियों के साथ व्यतीत करता था। उसका पुत्र कार्ल चार वर्ष की अवस्था में जब कि वह पंजों पर ठुमुक-ठुमुककर चलता था तभी से इसे सीख रहा था। जब वह नौ वर्ष का था तभी उसे अपना बगीचा स्वयं बनाने की अनुमति दे दी गई, और वह यह देखने के लिए कि उन्हें वह उगा सकता है या नहीं, हर तरह के जंगली फूलों के खोदने और उन्हें फिर से अपने बगीचे में लगाने में घंटों समय व्यतीत करता था।

जब कार्ल अपनी पाठशाला के काम में आगे बढ़ रहा था उसकी माता, जो पादरी की लड़की थी, जिसने उसी पादरी के पद पर काम किया था जिस पर उसका पिता था, प्रकृत्या अपने पुत्र को भी पादरी बनाना चाहती थी। वह यह सोचती थी कि कार्ल की अभिरुचि प्रिय विषय के रूप में प्रकृति में पर्याप्त मात्रा में है, किन्तु जीवन-यात्रा के लिए वह निरर्थक है। उस समय स्वीडन में उल्लेख योग्य बहुत थोड़े वैज्ञानिक थे और वहाँ कभी भी वैज्ञानिक परम्परा नहीं थी। वे लोग जो वैज्ञानिक कहे जा सकते हैं, केवल डाक्टर थे और देश में इसी व्यवसाय में सबसे कम आय थी।

किन्तु कार्ल को धर्मोपदेश देने से अधिक अनुराग डाक्टरी में न हुआ। एक बार तो उसका पिता अपने पुत्र के रुख से इतना नाराज हुआ कि उसे

अपने अच्छे मित्र के लिए काम करने और उसे पढ़ाने के साथ-साथ कार्ल अपने पढ़ने तथा पौधों के जीवन में जानकारी प्राप्त करने के लिए समय निकालता था। परिणाम यह हुआ कि पौधों में नर और मादा तत्त्वों पर उसने एक निबन्ध लिखा, जिसे उसने पौधों के विभाजन में सहायक समझा था। अपनी कृतज्ञता प्रदर्शित करने का सर्वोत्तम मार्ग समझकर नव-वर्ष के प्रातःकाल में उसने इस निबन्ध को डीन सेल्सियस की मेज पर रक्खा। यह निबन्ध इतना शानदार और मौलिक था कि इससे एक धनी मनुष्य के यहाँ उसके निजी बगीचे के संचालक का लाभजनक स्थान उसे मिल गया।

१७३२ में, पच्चीस वर्ष की अवस्था में, लिने ने अपने विश्वविद्यालय के लिए लैपलैंड होकर यात्रा की। लैपलैण्ड के विषय में उस समय लोग इतना कम जानते थे जितना आजकल ग्रीनलैण्ड के विषय में, यद्यपि वह स्वीडन की सीमा पर ही स्थित है। उप्सल विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने इस व्यय का अधिकांश भाग स्वयं देना स्वीकार किया। इससे एक दिन मई के सुप्रभात में यह नवयुवक अकेले ही घोड़े पर अपना सब साज-सामान लिये हुए रवाना हो गया। यह कैसी खोजपूर्ण यात्रा सिद्ध हुई? ६ महीने में उसने उस विषम प्रदेश की पाँच हजार मील की यात्रा, अर्द्धसभ्य जातियों के बीच में होकर की। किन्तु वह घर पर उन सभी नमूनों को, जिनको वह चाहता था, न ला सका क्योंकि उसके पास उन्हें ले आने का कोई साधन न था। विश्वविद्यालय को उसके व्यय का लेखा अमेरिकन धन में केवल १२५ डालर का मिला।

एक बार, घर पर, उसने अपनी यात्रा के वर्णन की एक पुस्तक लिखी जिसने तुरन्त सनसनी फैला दी। प्रत्येक व्यक्ति पूछता था, यह लिने कौन है। उस वर्ष कार्ल उस लड़की से मिला जिसे वह अपनी स्त्री बनाना चाहता था, किन्तु लड़की का पिता व्यावहारिक पुरुष था। वह अपनी लड़की को

इन उन्मत्त वैज्ञानिकों म से किसी के साथ विवाह नहीं करने देना चाहता था । उसने कठोरता से कहा, नहीं महाशय ! पहले एक अच्छी नौकरी ढूंढ़िए तब आप उसके लिए वापस आ सकते हैं ।

कार्ल आसानी से हतोत्साह होनेवाला न था, और सौभाग्यवश लड़की भी प्रतीक्षा करने के लिए तैयार थी । १७३५ म उसे औषधि-विज्ञान में उपाधि मिल गई । उसी वर्ष उसने अपनी पुस्तक दी सिस्टम ऑफ नेचर प्रकाशित की । उसने पुस्तक का शीर्षक लैटिन म देने के स्थान पर अंगरेजी में दिया । कुछ ही समय मे इस पुस्तक के बारह सस्करण बिक गये । यहाँ एक ऐसे विषय पर आश्चर्यजनक नवीन विचारोवाला पुरुष था जिस विषय पर ससार ने बहुत दिनो से ध्यान नही दिया था । उस समय तक एक फूल एक फूल ही था, डैण्डेलियन वही था और सेव का वृक्ष ऐसा वृक्ष था जो सेव पैदा करता था । इससे अधिक उनका मूल्य कुछ नही था । लिने के पहले वनस्पति-विज्ञान ने यही तक उन्नति की थी । इन पौधो का एक दूसरे से क्या सबध था, इसे न तो कोई जानता ही था और न जानने की परवाह ही करता था ।

लिने के पास यात्रा के लिए अब काफी धन था । वह काफी दिनों के लिए आम्सटर्डम गया । वहाँ उसने एक प्रसिद्ध बगीचे का अध्ययन किया । दूसरे चार वर्षों म उसने वनस्पति-विज्ञान पर पाँच पुस्तकें तैयार की । उसने फ्रास और इंगलैण्ड की यात्रा की और हालैण्ड फिर वापस आ गया । उसने इस बार लीडन मे एक और प्रसिद्ध बगीचे की जाँच की । इन यात्राओ के पश्चात् उसे आजीविका के लिए एक स्थान पर स्थिर होना पड़ा । अपनी दुलहिन को प्राप्त करने के लिए वह स्टाकहोम म चिकित्सक हो गया और इतनी जल्दी सफलता प्राप्त की कि अन्त म वह उस लड़की से विवाह करने मे सफल रहा जो उसकी सात वर्षो से प्रतीक्षा कर रही थी ।

जल्दी ही उसको प्रतिष्ठा होने लगी । वह अपने ही विश्वविद्यालय

उप्सल में औषधि-विज्ञान का प्राध्यापक नियुक्त किया गया। उसे इस बार बाल्टिक में स्वीडन के द्वीपों की और भी वैज्ञानिक यात्राओं के करने की अनुमति दी गई। उसके एक पुराने मित्र ने, जो विश्वविद्यालय में उसी के विभाग में था, उससे कहा कि यद्यपि वह विज्ञान पढ़ाने के लिए नियुक्त हुआ था किन्तु औषधि-विज्ञान पढ़ाने में उसकी रुचि थी। लिने ने उसे उत्तर दिया कि वह औषधि-विज्ञान पढ़ाने से विज्ञान पढ़ाना अधिक पसन्द करता है। इससे उन दोनों ने अपनी कुर्सियाँ बदल लीं। इसके पश्चात् लिने ने जो पहले से ही संपूर्ण यूरोप में वनस्पति-विज्ञान का जन्मदाता समझा जाता था, सैंतीस वर्ष तक अपने प्रिय विषय को पढ़ाया, पढ़ा और उस पर लिखा। प्रत्येक वर्ष उसकी ख्याति में वृद्धि होती गई।

वह उन काहिल प्राध्यापकों की भाँति न था जो केवल अपनी आजीविका के लिए व्याख्यान देते थे। उसकी कक्षाएँ इतनी रोचक होती थीं कि संपूर्ण यूरोप से आये हुए विद्यार्थी कमरों में भर जाते थे। वे उसके विज्ञान के प्रति उत्साह को देखकर चिल्लाते थे—"विज्ञान दीर्घायु हो! लिने दीर्घायु हो!" इनमें से कुछ विद्यार्थी संसार के सुदूर भागों की भी अपनी व्यक्तिगत साहसिक यात्रा करते थे। वे सदैव अपने नमूने महान् लिने को वापस भेजते थे। इससे वह जितना प्रसन्न होता था उतना अन्य किसी वस्तु से नहीं।

संभवतः उसकी कृतियों में सबसे महत्त्वपूर्ण और मौलिक स्पेशीज ऑफ प्लाण्ट्स नामक पुस्तक थी जिसे उसने १७५३ में प्रकाशित किया था। १८९२ में अमेरिका की वनस्पति-विज्ञानवेत्ताओं की सभा ने पौधों के आधुनिक वर्गीकरण के प्रारम्भिक आधार के रूप में इस पुस्तक को चुना। उसके पहले पौधों के अध्ययन में केवल गड़बड़ी ही थी और यही हाल जानवरों विषयक अध्ययन का भी था। लिने को महान् सुव्यवस्थापक कहा गया है क्योंकि उसने सभी गड़बड़ी को क्रम से सुव्यवस्थित किया। वही ऐसा व्यक्ति था जिसने किसी

उसका पाइप अब भी उसके दाँतों में दबा था। यह स्पष्ट था कि स्लेज चलाते समय उस पर लकवे का वार हो गया था जिसके कारण उसका पूरा दाहिना भाग शून्य हो गया था। कुछ सप्ताह बाद उसका देहान्त हो गया। मृत्यु के समय उसकी चारपाई के पास उसका एक अँगरेज भक्त शिष्य बैठा था। किन्तु उस समय तक विज्ञान के क्षेत्र में उसकी महान् देन पूरी हो चुकी थी और उसका जीवन-कार्य पूरा हो चुका था।

———

वेन्जामिन फ्रैंकलिन



बेन्जामिन फ्रैंकलिन

बेन्जामिन फ्रैंकलिन

(१७०६-१७९०)
बहुन्मुखी प्रतिभा का वैज्ञानिक

१७५२ की ग्रीष्म ऋतु मे एक दिन फिलाडलफिया के कुछ नागरिको को एक अधेड़ पुरुष और उसके लड़के को सार्वजनिक मार्ग पर पतंग लेकर जाते हुए देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ होगा। हम कल्पना कर सकते हैं कि लोग सिर हिलाकर कह रहे होगे—"यह पुरुष जरूर पागल हो गया है। उसके साथ का लड़का भी तो पतङ्ग उड़ाने योग्य नही रहा है। इसके अतिरिक्त बिजली तथा गड़गड़ाहटयुक्त आँधी की भी आशका है।" और यदि उन्होने ध्यान से देखा होगा तो वे और भी चकित हुए होगे, क्योकि वह कोई साधारण पतङ्ग न थी। यह बड़े आकार के रेशम के रूमाल से बनी थी, जो देवदार की दो पतली लकड़ियो को तिरछा रखकर उस पर फैलाया गया था। उसमे सीधी लकड़ी की चोटी पर एक नुकीला लोहे का एक फुट से अधिक लम्बा एवं पतला तार भी लगा हुआ था।

किन्तु ऐसा मालूम पड़ता था कि वह आदमी जानता था कि वह क्या करने जा रहा है। पतङ्ग उड़ा दी गई और वह अधेड़ पुरुष जैसे-जैसे पतङ्ग ऊंची उठती गई वैसे-वैसे डोरी भी छोड़ने लगा। जब गर्जन के साथ आँधी आई तब काले बादलो से बिजली चमकी। जल्दी ही मूसलाधार वृष्टि होने लगी किन्तु आदमी और लड़के ने पहले से ही खुले हुए एक ओसारे में आश्रय ले लिया था। डोरे के अन्त में, पुरुष के हाथ के समीप, एक बड़ी चाभी भूल

रही थी और वहाँ एक सिल्क का फीता लगा दिया गया था। फीते का दूसरा सिरा उस आदमी के हाथ में था। जब डोरा भीग गया तो उसके छोटे रेशे खड़े हो गये और उनमें स्पन्दन होने लगा। इसे देखकर वह आदमी मुस्कराया मानो यही देखने की उसे आशा थी। तब उसने अपने हाथ की अंगुली की गाँठ चाभी के पास रखी। उसी समय एक बड़ी चिनगारी चाभी से निकलकर उसके हाथ में चली गई।

अब उसके चेहरे पर एक चौड़ी संतोषपूर्ण मुस्कराहट थी। उसकी परीक्षा सफल हुई। बादलों की चमक, जिसे हम बिजली कहते हैं, जैसा उसने सोचा था, बिजली का एक रूप है जो एक प्रकार की शक्ति है जिसके विषय में उस समय के वैज्ञानिक संसार की जानकारी बहुत कम थी। यह पतङ्ग का उड़ाना, गैलिलियो के पीसा के झुके हुए गुम्बज से बारूद के गोले गिराने के सदृश था जो एक साधारण किन्तु विज्ञान के इतिहास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रयोग है।

यह मनुष्य जैसा कि सब लोग जानते हैं बेन्जामिन फ्रैंकलिन था और उसे सहायता देनेवाला नवयुवक उसका पुत्र विलियम था। फ्रैंकलिन यह सिद्धान्त प्रतिपादित करता था कि बादलों की चमक ही विद्युत् थी किन्तु किसी ने भी इस विचार पर गम्भीरता से नहीं सोचा। लोगों का विश्वास था कि बादलों की चमक और गर्जन उनमें कुछ गैसों के विस्फोट होने से होती है। तभी से इस विषय में फ्रैंकलिन की अभिरुचि हो गई थी जब उसने अनेक वर्ष पूर्व बोस्टन में विद्युत् पर एक भाषण सुना था और तभी फिलाडलफिया वापस आकर उसने अपना प्रयोग प्रारम्भ कर दिया।

बादलों की चमक के विषय में उसका जो सिद्धान्त था उससे उसने यह निष्कर्ष निकाला कि इमारतों में नुकीले धातु के छड़ यदि विधिवत् पृथग् न्यस्त कर दिये जायं तो वे स्वयं बिजली को वहन कर इमारत को

बचा लेंगे। अपने इस विचार को उसने रॉयल सोसाइटी में भेजा किन्तु इस पर लोग हँसने लगे। फिलाडलफिया मे एक नया गिरजाघर बन रहा था। उसके गुम्बज मे वह धातु का छड़ लगाकर अपने विचार की वास्तविक परीक्षा करने के लिए उत्सुक था। किन्तु वह गुम्बज बड़े धीरे-धीरे बन रहा था। वह अधीर हो उठा और उसने पतंग द्वारा प्रयोग करने के विषय मे सोचा। पतंग की चोटी पर का तार विद्युत् शक्ति ग्रहण करने के लिए था, डोरा भीग जाने पर अच्छे संचालक का काम देने के लिए था और सूखा हुआ सिल्क का फीता, जो विद्युत् का अवरोधक है, उसे विद्युत् के धक्के से जब वह आश्रय मे खड़ा था, बचाने के लिए था। इन सब बातो को उसने पहले ही सावधानी से सोच रखा था।

प्रयोग के परिणाम ने उसके विचार की सत्यता प्रमाणित कर दी और फ्रैंकलिन का सिद्धान्त वास्तविक आविष्कार हो गया। उसकी ख्याति सम्पूर्ण सभ्य ससार मे फैल गई। प्रयोग इतना साधारण था कि इसकी पुनरावृत्ति बड़ी सरलता से की जा सकती थी और विद्युत् को, सचायक विद्युत्घट (Storage Battery) या लीडन जार में एक तार द्वारा, जो चाभी से सयुक्त था, पहुँचाया जा सकता था। अब यह उपहास की बात न रह गई थी। फिलाडलफिया का मुद्रक बेन्जामिन फ्रैंकलिन अब अपने समय के वैज्ञानिक क्षेत्र के प्रमुख पुरुषो मे से था। अपने अन्य अनेक कार्य-कलापो के होते हुए भी, विशेषकर देश-सेवा के, वह इस स्थान पर मृत्यु-पर्यन्त रहा। संपूर्ण यूरोप और अमेरिका मे, बहुत से छोटे घरो और बड़ी-बड़ी सार्वजनिक इमारतो में, फ्रैंकलिन के विद्युत्-सवाहक छड़ लगाये गये, यद्यपि बहुत से लोगो ने बोस्टन और पेरिस दोनो में इस बात का प्रतिवाद किया कि ईश्वर की बनाई हुई विद्युत् के कार्य में हस्तक्षेप करना बुरा है। आजकल सभी बड़ी इमारतो के निर्माण मे इतना इस्पात लगता

है कि तड़ित् छड़ों की आवश्यकता नहीं होती, किन्तु वे खुले हुए स्थानों में प्रायः दिखाई पड़ते हैं।

फ्रैंकलिन ने अपने अनुसंधानों द्वारा यह भी खोज की कि विद्युत्-धारा इस्पात के टुकड़े को चुम्बकीय बना सकती है। उसने ही सर्वप्रथम विद्युत् को एक तार द्वारा दूर से भेजकर बारूद का विस्फोटन किया। उसने ही प्रथम बार बतलाया कि ध्रुव पर की प्रकाशधारा भी विद्युत् का ही प्रदर्शन है। अन्त में उसने ही विद्युत्-विषयक सर्वोत्कृष्ट सिद्धान्त का प्रतिपादन किया कि यह शक्ति के अत्यल्प कणों से बनी है जो इतने सूक्ष्म होते हैं कि साधारण पदार्थों के अणुओं में आ-जा सकते हैं। उसने ही प्रथम बार दिखलाया कि विद्युत् दो प्रकार की—धनात्मक और ऋणात्मक—होती है। उसने बतलाया कि सभी प्राकृतिक घटनाएं इन्हीं विद्युत्-कणों की क्रियाशीलता के कारण होती हैं। आजकल ये कण विद्युत्-कण कहे जाते हैं। सारी प्रकृति इन्हीं से बनी हुई है। फ्रैंकलिन के सिद्धान्त आजकल के वैज्ञानिकों के सिद्धान्त से पूर्णतया नहीं मिलते किन्तु वह इनसे बहुत दूर न था, क्योंकि उसके विचार अपने समय से आगे के थे।

इस प्रतिभाशाली पुरुष के एक अर्वाचीन जीवन-चरित्र का शीर्षक दी मेनी साइडेड फ्रैंकलिन है। इस शब्द को ठीक ही चुना गया था, क्योंकि उसकी प्रतिभा वैसी ही थी जैसी एक अच्छी तरह से तराशे हुए हीरे की, जिसका प्रत्येक तराशा हुआ भाग देदीप्यमान था। विज्ञान के क्षेत्र में भी उसकी प्रतिभा बहुमुखी थी। यद्यपि उसकी महत्तम देन विद्युत् विज्ञान की है किन्तु उसका अद्‌भुत मस्तिष्क और भी क्षेत्रों में क्रियाशील था जिनमें से कुछ का ही उल्लेख यहाँ किया जा सकता है।

उसकी एक खोज गल्फ स्ट्रीम के सम्बन्ध में थी। १७६९ में उससे कैप्टेन फॉल्जर से बातचीत हुई। कैप्टेन फॉल्जर नानटकेट का ह्वेल का शिकारी

था जिसे फ्रैंकलिन "बहुत बुद्धिमान् नाविक" कहता था और वह फ्रैंकलिन का दूर का भाई भी रहा होगा। क्योंकि फ्रैंकलिन की माता भी नानटकेट की फॉल्जर थी। वर्तानिया के बन्दरगाहो से न्यूयार्क आनेवाले बहुत से जहाजों की लम्बी यात्रा के विषय में केवल पूछने से ही फ्रैंकलिन ने जहाज-यात्रा पर गल्फ स्ट्रीम के प्रभाव को जान लिया। उस समय नानटकेट में करीब डेढ़ सौ ह्वेल मछली का शिकार करनेवाले जहाज थे और अठारहवीं शताब्दी में भी वे अटलांटिक सागर मे ह्वेल का शिकार करते थे। वे 'साधारणतया गल्फ स्ट्रीम के किनारे-किनारे मिलती थी इससे ह्वेल के शिकारियों को इस समुद्र की विचित्र नदी के विषय में अच्छी जानकारी रखनी पड़ती थी। यह एक तेज धारा है जो फ्लोरिडा के निकट की खाड़ी से प्रारम्भ होती है और अटलांटिक मे उत्तर-पूर्व की ओर करीब २ से ४ मील प्रति घंटे की चाल से चलती है। ह्वेल का शिकार करने वाले कैप्टेन यह जानते थे कि इस धारा में उन्हें बड़ी सावधाना से काम करना है, अन्यथा उनकी नौकाएँ जहाजों से अधिक दूर चली जायँगी।

इसी शक्तिशाली धारा के कारण ब्रिटेन से आनेवाले जहाज दक्षिण का मार्ग अपनाते थे जिससे वे सैबल की खाड़ी की तैरती हुई मछलियों के खतरनाक झुण्ड से दूर रहें। इससे यात्रा मे बहुत समय लगता था। कैप्टेन फॉल्जर कहता था कि उसे प्रायः ऐसे जहाज मिले थे जो इंगलैण्ड से ८ या १० सप्ताह पहले चले थे किन्तु फिर भी वे अमेरिका से काफी दूर थे। शान्त गल्फ स्ट्रीम में पड़ने पर पश्चिम जानेवाले जहाज को एक दिन मे ६० से ७० मील तक का घाटा होगा।

इस सूचना के आधार पर फ्रैंकलिन ने ऐसे सामुद्रिक मानचित्रो को बनाने का प्रस्ताव रखा जिसमे ह्वेल के शिकारी कप्तानो की बातो के आधार पर दिशाएँ भी दी हुई हो और गल्फ स्ट्रीम का मार्ग तथा उसकी शक्ति भी।

साथ ही साथ यह ब्रिटेन तथा अमेरिका के बीच में आने-जानेवाले जहाजों को, उनकी यात्रा की दूरी कम करने के लिए मिल सकें, ऐसा भी सुझाव रखा। इस प्रकार गल्फ स्ट्रीम के प्रथम मानचित्रों का निर्माण फ्रैंकलिन के कारण हुआ। संयोगवश उसने ही सर्वप्रथम यह दिखलाया कि इस धारा का तापक्रम आस-पास के समुद्र के तापक्रम से अधिक था।

फ्रैंकलिन ही प्रथम व्यक्ति था, जिसने ऐसे ढंग से जहाजों के निर्माण का प्रस्ताव रखा कि उनके कक्षों में जल न जा सके और इस प्रकार जहाज के ढाँचे में हुई क्षति मालूम की जा सके और बहुत से जहाज नाविकों के सहित डूबने से बच जायँ। यह उच्च विचार भी उसके समय से बहुत आगे का था क्योंकि इसके लिए तब तक प्रतीक्षा करनी पड़ी जब तक कि बीसवीं शताब्दी के इस्पात के दीर्घकाय जहाज न बन गये।

फ्रैंकलिन की दूसरी खोज मौसम-विषयक थी। करीब १७४० में एक दिन शाम को ९ बजे फिलाडलफिया में चन्द्रग्रहण लगने की आशा की जाती थी। फ्रैंकलिन ने इसे देखने की योजना बनाई किन्तु करीब सात बजे उत्तर-पूर्व से आँधी ने आकाश को घने बादलों से ढंक दिया। बाद में उसे बोस्टन से एक समाचार-पत्र मिला जिसमें उत्तरी-पूर्वी आँधी का जिक्र था और ग्रहण का भी वर्णन था। फ्रैंकलिन ने बोस्टन में अपने भाई को इस घटना के विषय में लिखा और उसके भाई ने उत्तर दिया कि आँधी ११ बजे से पहले प्रारम्भ नहीं हुई थी जिससे ग्रहण अच्छी तरह देखा गया। बोस्टन फिलाडलफिया से करीब चार सौ मील उत्तर-पूर्व है। पहले लोगों का विश्वास था कि उत्तरी-पूर्वी हवा उत्तर-पूर्व से आती है किन्तु फ्रैंकलिन ने उसी समय निर्णय कर लिया कि निश्चय ही यह दक्षिण-पश्चिम से चली थी।

इस बात का निश्चय करने के लिए उसने और भी आँधियों के विषय में जांच की और सदैव यही पाया कि जितना ही पूरब जाते हैं उतनी ही

इस पुरुष ने एक नागरिक और कूटनीतिज्ञ के नाते अपने देश को जो अनुपम देन दी वह वृहत् है। वास्तव में हमारे देश की स्वतंत्रता की स्थापना में उसका कार्य इतना महान् था कि उसे ही सर्वप्रथम देश का पिता कहा जाता था। बाद में यह उपाधि वाशिंगटन को मिली। किन्तु क्रान्ति के सभी देश-भक्तों में फ्रैंकलिन ही ऐसा था जिसने राज्य के चार बड़े कागजों पर हस्ताक्षर किया। स्वतन्त्रता के घोषणा-पत्र, फ्रान्स के साथ मेल के संधि-पत्र, ब्रिटेन से शांति के संधि-पत्र और संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान। इतिहास में किसी भी वैज्ञानिक को देशभक्त और कुशल राजनीतिज्ञ के रूप में संसार में इतनी ख्याति नहीं मिली।

विज्ञान में साधारण अभिरुचि से ही वह एक नवीन खोज कर लेता था। उसके इस जीवन पर एक पूरा अध्याय ही लिखा जा सकता है। यहाँ उसकी नवीन खोजों की एक आंशिक सूची दी जाती है, द्विनाभिदर्शक ताल—निकट और दूर देखने के लिए, फ्रैंकलिन का चूल्हा प्रथम अच्छा और लकड़ी से जलनेवाला चूल्हा, कपड़े पर लोहा करने की मशीन; पत्रों की प्रतिलिपि बनाने के लिए छापाखाना और इसके अतिरिक्त अन्य बहुत-सी वस्तुएँ। उसने ही सर्वप्रथम ग्रीष्म ऋतु में दिन का प्रकाश बचाने का सुझाव दिया। यह ऐसा विचार था जिसे कहीं भी कार्यान्वित होने के लिए बहुत दिनों प्रतीक्षा करनी पड़ी।

अंत में इस महान् पुरुष के व्यक्तित्व के विषय में कुछ और लिखना चाहिए। वह उदार, नम्र और मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखनेवाला व्यक्ति था। अपने साथियों की हर जगह सहायता करना यही उसकी महत्त्वाकांक्षा थी। अपने सभी आविष्कारों और लेखों के लिए कभी भी उसने पुस्तकादि छपाने का स्वाधिकार या राज-प्रदत्त अधिकार-पत्र नहीं चाहा और नहीं उसके लिए कभी एक पेनी माँगी। जब पेन्सिलवेनिया के शासक ने उससे उसके अत्यन्त

सर्वप्रिय चूल्हे (फ्रैंकलिन स्टोव) के लिए राज्य-प्रदत्त अधिकार-पत्र स्वीकार करने के लिए कहा तब फ्रैंकलिन ने उत्तर दिया—"हम लोगो को अपनी नवीन खोजो से दूसरो की सेवा का अवसर पाकर प्रसन्न होना चाहिए।" उसने कभी झगड़ा नही किया, न तो कभी कठोर शब्द ही किसी को कहा, यहाँ तक कि उन्हे भी जिन्होने उसे गाली दी। वह एक अच्छा मजाकिया था और जानता था कि अपने पर कैसे हँसा जाय। फिर भी इस असाधारण पुरुष के, जो साधारण कपड़े पहनता था और इतना नम्र था, फ्रास और इँगलैण्ड, दोनो देशो के तत्कालीन प्रसिद्ध वैज्ञानिक घनिष्ठ मित्र थे। राजा लोग और वैज्ञानिक संस्थाएँ, सभी उसका सम्मान करते थे और साधारण लोग तथा राजनीतिज्ञ सभी उस पर श्रद्धा रखते थे।

एक दिन महा_लार्ड चैथम पार्लियामेण्ट मे खड़े हुए और उन्होने घोषणा की कि—"फ्रैंकलिन अँगरेजी राष्ट्र का ही सम्मान नही है, बल्कि मानव स्वभाव के लिए भी वह वैसा ही है।" ये शब्द हम लोगो की स्वतन्त्रता-प्राप्ति के युद्ध से पहले कहे गये थे। यह कृतज्ञता के साथ स्मरण रखते हुए हम लोग गौरव के साथ "अँगरेजी" को "अमेरिकन" म परिवर्तित कर सकते हैं कि इस बहुमुखी प्रतिभावाले व्यक्ति के ज्ञान के बिना हम एक राष्ट्र कभी न हुए होते।

———

इस पुरुष ने एक नागरिक और कूटनीतिज्ञ के नाते अपने देश को जो अनुपम देन दी वह वृहत् है। वास्तव में हमारे देश की स्वतंत्रता की स्थापना में उसका कार्य इतना महान् था कि उसे ही सर्वप्रथम देश का पिता कहा जाता था। बाद में यह उपाधि वाशिंगटन को मिली। किन्तु क्रान्ति के सभी देश-भक्तों में फ्रैंकलिन ही ऐसा था जिसने राज्य के चार बड़े कागजों पर हस्ताक्षर किया। स्वतन्त्रता के घोषणा-पत्र, फ्रान्स के साथ मेल के संधि-पत्र, ब्रिटेन से शांति के संधि-पत्र और संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान। इतिहास में किसी भी वैज्ञानिक को देशभक्त और कुशल राजनीतिज्ञ के रूप में संसार में इतनी ख्याति नहीं मिली।

विज्ञान में साधारण अभिरुचि से ही वह एक नवीन खोज कर लेता था। उसके इस जीवन पर एक पूरा अध्याय ही लिखा जा सकता है। यहाँ उसकी नवीन खोजों की एक आंशिक सूची दी जाती है, द्विनाभिदर्शक ताल—निकट और दूर देखने के लिए, फ्रैंकलिन का चूल्हा प्रथम अच्छा और लकड़ी से जलनेवाला चूल्हा, कपड़े पर लोहा करने की मशीन; पत्रों की प्रतिलिपि बनाने के लिए छापाखाना और इसके अतिरिक्त अन्य बहुत-सी वस्तुएं। उसने ही सर्वप्रथम ग्रीष्म ऋतु में दिन का प्रकाश बचाने का सुझाव दिया। यह ऐसा विचार था जिसे कहीं भी कार्यान्वित होने के लिए बहुत दिनों प्रतीक्षा करनी पड़ी।

अंत में इस महान् पुरुष के व्यक्तित्व के विषय में कुछ और लिखना चाहिए। वह उदार, नम्र और मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखनेवाला व्यक्ति था। अपने साथियों की हर जगह सहायता करना यही उसकी महत्त्वाकांक्षा थी। अपने सभी आविष्कारों और लेखों के लिए कभी भी उसने पुस्तकादि छपाने का स्वाधिकार या राज-प्रदत्त अधिकार-पत्र नहीं चाहा और नहीं उसके लिए कभी एक पेनी मांगी। जब पेन्सिलवेनिया के शासक ने उससे उसके अत्यन्त

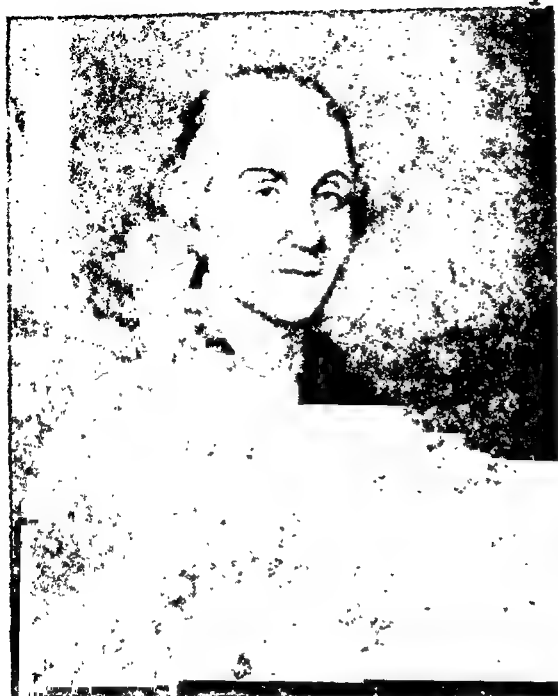
सर्वप्रिय चूल्हे (फ्रैंकलिन स्टोव) के लिए राज्य-प्रदत्त अधिकार-पत्र स्वीकार करने के लिए कहा तब फ्रैंकलिन ने उत्तर दिया—"हम लोगो को अपनी नवीन खोजो से दूसरो की सेवा का अवसर पाकर प्रसन्न होना चाहिए।" उसने कभी झगड़ा नही किया, न तो कभी कठोर शब्द ही किसी को कहा, यहाँ तक कि उन्हें भी जिन्होने उसे गाली दी। वह एक अच्छा मजाकिया था और जानता था कि अपने पर कैसे हँसा जाय। फिर भी इस असाधारण पुरुष के, जो साधारण कपड़े पहनता था और इतना नम्र था, फ्रास और इँगलैण्ड, दोनो देशो के तत्कालीन प्रसिद्ध वैज्ञानिक घनिष्ठ मित्र थे। राजा लोग और वैज्ञानिक संस्थाएँ, सभी उसका सम्मान करते थे और साधारण लोग तथा राजनीतिज्ञ सभी उस पर श्रद्धा रखते थे।

एक दिन महान् लार्ड चैथम पार्लियामेण्ट म खड़े हुए और उन्होने घोषणा की कि—"फ्रैंकलिन अंगरेजी राष्ट्र का ही सम्मान नही है, बल्कि मानव स्वभाव के लिए भी वह वैसा ही है।" ये शब्द हम लोगो की स्वतन्त्रता-प्राप्ति के युद्ध से पहले कहे गये थे। यह कृतज्ञता के साथ स्मरण रखते हुए हम लोग गौरव के साथ "अंगरेजी" को "अमेरिकन" म परिवर्तित कर सकते हैं कि इस बहुमुखी प्रतिभावाले व्यक्ति के ज्ञान के बिना हम एक राष्ट्र कभी न हुए होते।

जोसेफ प्रीस्टले

और

एनटॉयन लॉरेण्ट लैवोशिए



जोसेफ प्रीस्टले



एनटॉयन लॉरेण्ट लेवोशिए

जोसेफ प्रीस्टले
(१७३३-१८०४)

एन्टॉयन लॉरेण्ट लैवोशिए
(१७४३-१७९४)

रसायनशास्त्र का जन्म

केमिस्ट्री (रसायनशास्त्र) प्राचीन शब्द अलकेमी से निकला है क्योंकि केमिस्ट्री के विज्ञान की उन्नति धीरे-धीरे अल्केमिस्ट के प्रयोगों से हुई, यद्यपि ये लोग भी एक प्रकार से वैज्ञानिक ही थे। केमिस्ट्री शब्द का इतिहास बड़ा लम्बा है। मूल शब्द एलकेमी, हमारे यहाँ, अरबी भाषा से आया हुआ है। "अल" के अर्थ "दी" (विशेषता, जैसे "अलजब्रा" में) और "केमी" मिस्र का प्राचीन नाम है। इस शब्द का अर्थ काला होता है जो नील नदी की वार्षिक बाढ़ में छोड़े हुए कीचड़ को चारों ओर की बालू से अलग करने के लिए निर्देश करता है। इसलिए यदि किसी को अपनी उच्च पाठशाला की केमिस्ट्री अच्छी नहीं लगती तो इसे वह कीचड़ का नाम देना चाहता है। इसमें अध्ययनशील लोगों की भी सम्मति है।

सबसे पहले अलकेमी मिस्र के पुरोहितों का एक रहस्यमय संप्रदाय था। इससे शीशा बनाना, धातु शोधने की विद्या, वस्त्रादि को सफेद करना तथा अपने शवों में द्रव्यादि का लेप कर उसे सुरक्षित रखने का ज्ञान लोगों को हुआ। किन्तु यूरोप में यहाँ तक कि सत्रहवीं शताब्दी तक अलकेमी केवल एक ही विचार तक सीमित थी। वह था पुष्टिवर्धक रसायन या पारसमणि-

विषयक विचार जो धातुओं को स्वर्ण में परिवर्तित कर सकती थी। और लोगों का विश्वास था कि वही ऐन्द्रजालिक पदार्थ यौवन वापस ला सकता था, सभी बीमारियाँ अच्छी कर सकता था और जीवन को बढ़ा सकता था। इसलिए शताब्दियों तक अलकेमिस्ट लोग अपनी भट्ठियों पर दिन-रात परिश्रम करते हुए नाना प्रकार की चीजें मिलाते रहे। इनमें से कुछ प्रयोग सच्चे थे किन्तु अधिकांश नहीं। आश्चर्य की बात है कि किसी ने भी यह नहीं सोचा कि यदि कोई ऐसी वस्तु मिल भी गई जो सीसे को स्वर्ण में बदल सके तो स्वर्ण इतना सस्ता हो जायगा कि उसका मूल्य सीसे से अधिक न रहेगा।

फिर भी अलकेमी की निरर्थक चीजों से—यद्यपि इसमें बड़ा समय लगा—महान् रसायनशास्त्र का विकास हुआ जो आज सभ्यता के लिए इतना महत्त्व-पूर्ण है। सत्रहवीं शताब्दी में राबर्ट ब्वायल नामक अंगरेज, जो आइजक न्यूटन से करीब पन्द्रह वर्ष बड़ा था, इन मार्ग-प्रदर्शकों में सबसे महत्त्वपूर्ण था। उसने घोषणा की कि रसायनशास्त्र को दूसरी वस्तुओं से अलग एवं वास्तविक विज्ञान मानना चाहिए। उसने दृढ़ता से कहा कि तत्त्व केवल वही पदार्थ हैं जो तोड़े नहीं जा सकते। किन्तु उसने वस्तुओं की मात्रावत् नाप के महत्त्व को नहीं समझा जिससे उनकी परीक्षा हो सके कि वे साधारण तत्त्व हैं या एक से अधिक पदार्थों से बने हैं। उदाहरणस्वरूप उन दिनों गैसों के विषय में कुछ नहीं मालूम था। उन्हें हवा का विभिन्न रूप समझा जाता था। जब एक पदार्थ जलता था तो यह कल्पना की जाती थी कि वह फ्लोजिस्टन देता है, जो वस्तु-विशेष के लिए यूनानी भाषा का एक आडम्बरपूर्ण शब्द है और जिसमें सभी वैज्ञानिक विश्वास करते थे किन्तु उसका कहीं भी अस्तित्व न था। यदि कोई लकड़ी का टुकड़ा जलता था तो वह केवल इसलिए कि लकड़ी में फ्लोजिस्टन था और पत्थर का टुकड़ा इसलिए नहीं जलता कि उसमें फ्लोजिस्टन नहीं है।

ब्वॉयल के सौ वर्ष बाद दूसरा अंगरेज वैज्ञानिक जोसेफ प्रीस्टले पैदा

हुआ। वह रसायनशास्त्र के क्षेत्र मे और भी अधिक महत्त्वपूर्ण पथ-प्रदर्शक हुआ है। जीवन के सभी पहलुओ मे, महान् पुरुषो की भाँति, उसके भी जीवन का प्रारम्भ साधारण ही था। लाड्स के पास के एक गाँव मे एक गरीब माता-पिता के घर उसका जन्म हुआ। वह अनेक प्रकार से असाधारण प्रतिभाशाली था। भाषाओ के ज्ञान की उसे आश्चर्यजनक देन मिली थी। उसने लैटिन, ग्रीक, हेब्रू, इटालियन, फ्रेन्च, जर्मन, चैल्डी और सिरिअक भाषाओ पर अधिकार कर लिया था। इस प्रकार उसने दो अभिरुचियो का सामंजस्य कर दिया था—एक धर्म-शिक्षक तथा दूसरी वैज्ञानिक की। बाइबिल के अध्ययन के कारण उसने हेब्रू, चैल्डी और सिरिअक की जानकारी प्राप्त कर ली थी और उसके ईसाई चरित्र तथा धार्मिक कार्य ने उसके नाम को और भी उपयुक्त बना दिया।

किन्तु अपने सभी विचारो मे वह पूर्ण सुधार का समर्थक था—चाहे वे अध्यात्मविद्या-सबधी हो और चाहे राजनीति या विज्ञान के और कई बार यह बात उसके लिए कष्टप्रद भी हुई। इसके लिए उसे अपने मित्र भी छोड़ने पड़े। उदाहरणार्थ, वह फ्रास की राज्यक्रान्ति का पक्षपाती था जैसा करना इंगलैंड म अत्यन्त अप्रिय काम था। अपनी जीवन-वृत्ति के अन्तिम दिनो में, जब कि वह बरमिंघम मे रह रहा था और अन्तर्राष्ट्रीय रूप मे एक वैज्ञानिक की तरह प्रसिद्ध हो चुका था, वह एक छोटे से गिरजाघर मे पादरी का काम करता था। वहाँ एकाएक कुछ धर्मोन्मत्त लोगो ने उस पर गिरजाघर तथा राजा के शत्रु होने का दोषारोपण किया। स्वयं अवैध रूप से दण्ड देने के लिए लोग उसके घर को दौड़ पड़े। उसी समय वह और उसके परिवारवाले भाग गये किन्तु उपद्रवी जनसमूह ने घर को बिलकुल नष्ट कर दिया। इतना ही नही, प्रत्युत उसके यन्त्रों बहुमूल्य पुस्तकालय तथा लेखो को भी उन्होने नष्ट कर दिया। इसके बाद उन्होने उसके छोटे गिरजाघर को भी नष्ट कर दिया। यह १७९१ मे हुआ। बरमिंघम शहर के निवासियो ने प्रीस्टले की मृत्यु के पश्चात् अपने

अत्याचारों का परिहार करने के लिए उसकी एक पत्थर की मूर्ति बनाई; किन्तु अब उसको लाभ पहुँचाने का समय बीत चुका था। इस दंगे के तीन वर्ष पश्चात्, एक दु:खी पुरुष की भाँति, उसने इंगलैंड छोड़ दिया और अमरीका में शरण ली। पेन्सिलवेनिया के विश्वविद्यालय ने उसे रसायन-शास्त्र के प्राध्यापक का स्थान दिया किन्तु नवीन-जीवन प्रारम्भ करने के लिए उसका दिल टूट चुका था और वह अब नवयुवक भी न रह गया था। अपने जीवन के शेष महीने उसने अपने घर के शहर नार्दम्बरलैंड में शान्ति से व्यतीत किये जहाँ वह अब भी भूमि में गड़ा हुआ है। आज प्रीस्टले-पदक अमेरिकन केमिकल साइन्स का उच्चतम सम्मान है।

जिस खोज के लिए प्रीस्टले प्रसिद्ध है वह बहुत पहले ही १७७४ में हुई थी। चूंकि वह बहुत गरीब था इसलिए आवश्यक सामान न होने के कारण उसने गरमी पैदा करने के लिए, पदार्थों पर सूर्य की किरणों को केन्द्रित करने के लिए, परिवर्धक काँच का प्रयोग किया। (बरमिंघम की पाषाण की मूर्ति में उसके हाथ में वह शीशा दिखाया गया है।) लाल मरक्यूरिक आक्साइड से प्रयोग करके उसने खोज की कि गर्मी पाने पर यह धातु पारे और एक रंगहीन गैस के रूप में विच्छेदित होती है, जो उसके लिए वैसी ही नवीन बात थी जैसी संसार के लिए। उसने इसे फ्लोजिस्टन-रहित हवा कहा। उसने इस खोज के महत्व को न समझा, जिसे विज्ञान में एक महान् खोज कहते हैं, और इस गैस का नामकरण करना तथा इसकी वास्तविक विशेषताओं को निर्धारित करना फ्रांस के एक दूसरे वैज्ञानिक के लिए शेष रह गया था। उस (वैज्ञानिक) के समय से उसका नाम आक्सीजन है। यह वैज्ञानिक था एण्टॉयन लॉरेण्ट लैवोशिए।

एण्टॉयन लॉरेण्ट लैवोशिए

यह पुरुष वास्तविक रूप से आधुनिक रसायन-शास्त्र की नींव डालने-वाला माना जाता है। उसका जीवन प्रीस्टले से कुछ अच्छी दशा में प्रारम्भ

सर्वमान्य है और अंगरेजों के देश के अतिरिक्त सभी पाश्चात्य देशों के व्यापार में प्रचलित है। अंगरेज लोग अब भी फुट, गज, क्वार्ट और पौण्ड को ही मानते हैं।

जनता की ये महान् सेवाएं करते रहने के साथ साथ वह सदैव अपनी रासायनिक समस्याओं में भी डूबा रहता था। वह प्रीस्टले की भाँति अपने प्रयोगों के लिए साधारण साधनों को काम में लाने में निपुण न था किन्तु उनका परिणाम निकालने में वह उस अंगरेज से अधिक अच्छा था। वह और प्रीस्टले मित्र हो गये। प्रीस्टले ने पेरिस जाने पर लैवोशिए को फ्लोजिस्टन-रहित वायु के विषय में बताया। यह भी जानना मनोरंजक होगा कि ये दोनों पुरुष विज्ञान में समान अभिरुचि रखने के कारण बेञ्जामिन फ्रैन्कलिन के अभिन्न मित्र बन गये।

प्रीस्टले अपनी मृत्यु के दिन तक अपने फ्लोजिस्टन के प्राचीन विचार पर अड़ा रहा। उसके मित्र लैवोशिए ने इस पर सन्देह किया। उसने इस बात पर ध्यान दिया कि जब वह गंधक जलाता था तो अंत में हमेशा एक अम्ल बच जाता था और इससे उसने यह निश्चय किया कि हवा में जिस गैस की प्रीस्टले ने खोज की थी उसमें अम्ल बनाने की शक्ति थी। इसलिए उसने इसे "ऑक्सीजन" नाम दिया जो ग्रीक शब्द से बना हुआ है और जिसका अर्थ अम्ल बनानेवाला है। यह नाम तब से चला आ रहा है। उसने यह भी दिखाया कि यदि किसी वस्तु में फ्लोजिस्टन के कण हों तो जलने पर सावधानी से उस वस्तु को तौलने पर उनकी कमी मालूम हो सकती है। उसके ठीक प्रयोगों ने उसे इस महान् सत्य पर पहुंचा दिया कि पदार्थ के विभिन्न रूपों में चाहे कितना ही परिवर्तन हो जाय किन्तु पदार्थ की सम्पूर्ण मात्रा उतनी ही रहती है। यह पदार्थ के स्थायित्व का नियम कहलाता है।

उसने यह भी दिखलाया कि पानी साधारण द्रव नहीं है बल्कि दो तत्त्वों से मिलकर बना हुआ है; वायु भी "दो विभिन्न गैसों से मिलकर बनी हुई है

साथ गुलोटीन से शिरच्छेद किया गया। सम्पूर्ण यूरोप के प्रसिद्ध आदमियों ने उसको बचाने के लिए कहा किन्तु लेवोशिए ने स्वयं न तो दया की भिक्षा माँगी और न देश से भागने का ही प्रयत्न किया।

उसने शान्तिपूर्वक कहा, "मैंने अच्छा जीवन व्यतीत किया है। मैं तैयार हूँ।"

ऐसा हुआ कि जब उसे प्राण-दंड की आज्ञा मिली तो वह एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग कर रहा था। अतएव उसने दो हफ्ते का समय माँगा जिससे विज्ञान का कार्य पूर्ण हो जाय। इस प्रार्थना का निर्दयतापूर्ण तथा उपहासमय उत्तर मिला, "प्रजातंत्र को विद्वान् पुरुषों की आवश्यकता नहीं है।" इसलिए १७९४ में मार्च के एक दिन प्राकृतिक सत्य का वह प्रसिद्ध मार्ग-प्रदर्शक सिर काटने वाले यन्त्र की ओर इतनी शान्ति से चला गया मानों वह अपनी प्रयोगशाला की मेज की ओर जा रहा हो और पचास वर्ष की कम आयु में ही उसका काम समाप्त हो गया! यदि वह कुछ दिन और जीवित रहता तो इस क्षेत्र में और भी महत्त्वपूर्ण काम करता किन्तु वह पहले ही रसायनशास्त्र के आधुनिक विज्ञान की मुख्य नींव डालनेवाले के रूप में प्रसिद्ध हो गया था।

बेञ्जामिन टॉमसन, काउण्ट रमफोर्ड



बेञ्जामिन टॉमसन, काउण्ट रमफोर्ड

यह उस पुरुष के जीवन की उन अनेक घटनाओं में से प्रथम घटना थी जिससे उसकी, लोगों को उसकी चालढाल तथा व्यक्तित्व से प्रभावित करने की, आश्चर्यजनक देन दिखाई पड़ती है। यह व्यक्तिगत इतिहास धनी विधवा तथा औपनिवेशिक शासक से प्रारम्भ होता है। बाद के दिनों में, साधारण परिस्थिति में जन्म होते हुए भी, वह ड्यूकों, राजकुमारों, यहाँ तक कि राजाओं को भी मोहित करता रहा। किन्तु उसके चरित्र में दूसरी ओर उसकी यह अयोग्यता भी थी जिससे वह, बहुत चाहते हुए भी, अपने अधीन लोगों को न समझ सकता था और न उनके साथ निर्वाह कर सकता था। वह दुःखपूर्ण कहानी, विवाह के तीन वर्ष बाद, उसकी पत्नी से विलग होने से प्रारम्भ हुई और उस दिन से, जब कि वह सैनिक अधिकारियों का एकाएक नेता बना दिया गया; वे उसके विरुद्ध कार्रवाई करने लगे।

जब वह गड़बड़ी प्रारम्भ हुई जिससे क्रान्तिकारी युद्ध हुआ तो टामसन, राज्यपाल के प्रति कृतज्ञता की भावना से, झगड़े के टोरी पक्ष या राजभक्तों की ओर झुक गया किन्तु यह एक विचित्र बात प्रतीत होती है कि उसने किसी ओर की परवाह न की। अमेरिकन होने के कारण उसने अपने मित्रों और पड़ोसियों का पक्ष लेना चाहा किन्तु जब वह वाशिंगटन की सेना में कार्य-भार लेने केम्ब्रिज गया तो न्यू हैम्पशायर की सेना के ईर्ष्यालु अधिकारियों ने उसका इतना विरोध किया कि उसे सेना में पद देना अस्वीकार कर दिया गया। तब टामसन की भावना हुई, "अच्छा, यदि आप लोग इस प्रकार सोचते हैं तो मैं टोरी पक्ष में जाऊँगा।" इसमें उसे तनिक भी कठिनाई न हुई और वह तुरन्त ब्रिटिश सेना में एक अधिकारी बना दिया गया जिस स्थान पर वह युद्ध पर्यन्त रहा।

लड़ाई के अधिकतर वर्ष उसने इंगलैंड में ही व्यतीत किये। वह तुरन्त उपनिवेशों के मंत्री लार्ड जरमेन का कृपापात्र हो गया, जिन्होंने इस अमेरिकन

अमेरिकन किसान का लड़का पवित्र रोमन साम्राज्य का काउण्ट रमफोर्ड हो गया। रूप में वह विज्ञान के इतिहासों में मुख्यतः प्रसिद्ध है।

उसकी उपाधियों तथा सम्मानों का वहीं अन्त न था। अपने वैज्ञानिक कार्य से वह करीब करीब यूरोप की सभी महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक संस्थाओं का सदस्य चुन लिया गया। फ्रैंकलिन की भाँति जीवनस्तर ऊंचा करने के लिए, विशेषतया गरीबों का, उसने अपने विज्ञान के कामों को व्यावहारिक खोजों के साथ मिला दिया। उदाहरण-स्वरूप उसने घरों में गर्मी पैदा करने के अच्छे उपाय निकाले। उसने भाप की गर्मी को भी प्रचलित किया जो १५० वर्ष बाद यूरोप में साधारणतया सभी घरों में काम में आने लगी यहाँ तक कि अमीरों के यहाँ भी। खाना पकाने के लिए उसका रमफोर्ड रोस्टर बड़ा लोकप्रिय था, विशेषतः इंगलैंड में।

किन्तु उसकी वे सफलताएँ, जिनसे वह प्रसिद्ध वैज्ञानिकों में से एक माना जाता है, उसे भौतिक शास्त्र में प्राप्त हुई थीं। विस्फोटकों से काम करते समय तथा गोलियों की गति नापते समय उसने गैसों की शक्ति पर भी प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया। बवेरिया के एलेक्टर की अधीनता में, म्यूनिक में, सरकारी नौकरी करते हुए उसने एक बड़े महत्त्वपूर्ण तथ्य की खोज की। एक प्रधान अधिकारी ने इसके विषय में कहा है, "शक्ति के स्थायित्व का नियम मानव मस्तिष्क द्वारा आविष्कृत सबसे महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है।" जैसा पिछले अध्याय में हमने देखा था कि लैवोशिए ने यह दिखाया था कि पदार्थ के स्थायित्व का भी एक नियम है। शक्ति के स्थायित्व का नियम उससे भी महत्त्वपूर्ण एक दूसरा सिद्धान्त था।

टामसन ने जो खोज की वह किसी एक वैज्ञानिक के लिए पर्याप्त हुई होती किन्तु उसने एक और महत्त्वपूर्ण सच्चाई की खोज की। इस प्रश्न का कि "ताप क्या है?" उत्तर था "यह एक प्रकार का द्रव पदार्थ है।" किन्तु उसने

अमेरिकन किसान का लड़का पवित्र रोमन साम्राज्य का काउण्ट रमफोर्ड हो गया। रूप में वह विज्ञान के इतिहासों में मुख्यतः प्रसिद्ध है।

उसकी उपाधियों तथा सम्मानों का वही अन्त न था। अपने वैज्ञानिक कार्य से वह करीब करीब यूरोप की सभी महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक संस्थाओं का सदस्य चुन लिया गया। फ्रैंकलिन की भाँति जीवनस्तर ऊँचा करने के लिए, विशेषतया गरीबों का, उसने अपने विज्ञान के कामों को व्यावहारिक खोजों के साथ मिला दिया। उदाहरण-स्वरूप उसने घरों में गर्मी पैदा करने के अच्छे उपाय निकाले। उसने भाप की गर्मी को भी प्रचलित किया जो १५० वर्ष बाद यूरोप में साधारणतया सभी घरों में काम में आने लगी यहाँ तक कि अमीरों के यहाँ भी। खाना पकाने के लिए उसका रमफोर्ड रोस्टर बड़ा लोकप्रिय था, विशेषतः इंगलैंड में।

किन्तु उसकी वे सफलताएँ, जिनसे वह प्रसिद्ध वैज्ञानिकों में से एक माना जाता है, उसे भौतिक शास्त्र में प्राप्त हुई थीं। विस्फोटकों से काम करते समय तथा गोलियों की गति नापते समय उसने गैसों की शक्ति पर भी प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया। बवेरिया के एलेक्टर की अधीनता में, म्यूनिक में, सरकारी नौकरी करते हुए उसने एक बड़े महत्त्वपूर्ण तथ्य की खोज की। एक प्रधान अधिकारी ने इसके विषय में कहा है, "शक्ति के स्थायित्व का नियम मानव मस्तिष्क द्वारा आविष्कृत सबसे महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है।" जैसा पिछले अध्याय में हमने देखा था कि लैवोशिए ने यह दिखाया था कि पदार्थ के स्थायित्व का भी एक नियम है। शक्ति के स्थायित्व का नियम उससे भी महत्त्वपूर्ण एक दूसरा सिद्धान्त था।

टामसन ने जो खोज की वह किसी एक वैज्ञानिक के लिए पर्याप्त हुई होती किन्तु उसने एक और महत्त्वपूर्ण सच्चाई की खोज की। इस प्रश्न का कि "ताप क्या है?" उत्तर था "यह एक प्रकार का द्रव पदार्थ है।" किन्तु उसने

विभिन्न प्रकार से सोचा। उसने प्रयोग किया और इस परिणाम पर पहुँचा कि "ताप एक प्रकार की गति है।" उसकी पुस्तक, जिससे यह पता लगता है कि उसने किस प्रकार इस सत्य को सिद्ध किया, वैज्ञानिक पुस्तक-लेखन का एक ज्वलन्त उदाहरण है। क्रिया की रीति का अर्थ यह होता है कि जब कोई वस्तु गर्म की जाती है तो उसके अणुओं में अधिक तेजी से कम्पन होता है और हमारी त्वचा पर इस कम्पन का प्रभाव गर्मी के रूप में पड़ता है।

यह दो महान् खोजें उस मेधावी वैज्ञानिक के नाम के साथ संयुक्त होने के लिए पर्याप्त होगी। वे आज भी उतनी ही ठोस हैं जितनी डेढ़ सौ वर्ष पूर्व थी, और आज वे आणविक भौतिक-शास्त्र की नीव हैं।

फ्रान्स मे बेन्जामिन टॉमसन लॅवोशिए की विधवा पत्नी से मिला और वह भी उससे आकर्पित हुई; सम्भवत : इस कार्य मे उसकी उपाधि—काउन्ट रमफोर्ड—ने भी सहायता की। जो कुछ भी हो, अपने प्रथम पति के मृत्युदंड प्राप्त करने के दस वर्ष बाद उसने उससे विवाह कर लिया। किन्तु बाद मे ऐसा लगा कि वह केवल प्रीतिभोजों और सत्कारो की ही परवाह करती थी जिनसे वह घृणा करता था। विज्ञान के अतिरिक्त उसका दूसरा प्रिय विषय बागवानी था। एक दिन बिना उसको आगाह किये, उसकी स्त्री ने एक बड़े स्वागत-समारोह का आयोजन किया। उसने जब उस समारोह को सम्पादित होते हुए देखा तो वह भाग गया और उसके समाप्त होने तक ईंटो की एक दीवाल के पीछे छिपा रहा। उसकी स्त्री ने इसका बदला उसके प्रिय गुलाब के फूलो पर उबलता हुआ पानी डालकर लिया। इस प्रकार यह विवाह-संबंध भी टूट गया।

टामसन के जीवनकाल में बहुत-से लोग उसे संगठित करनेवाले तथा लोकोपकारी व्यक्ति के रूप मे जानते थे जो अपने वैज्ञानिक कार्यों की प्रशंसा न करता था। जब वह बवेरिया के सैनिक विभाग का प्रधान था तब उसने

राजधानी म्यूनिक की गलियों को भिखमंगों के झुंड से रहित कर दिया और कारखाने खोले जहाँ ये गरीब विना भीख माँगे रहें तथा कमायें। उन दिनों फौज या नौ-सेना में भर्ती होनेवाले व्यक्तियों के विषय में कोई न सोचता था। किन्तु टामसन ने सैन्यावास का, जिसमें ववेरिये सिपाही रहते थे, और उनके भोजन में भी वहुत सुधार किया। साधारण लोगों की दशा की उन्नति करने में भी उसको वड़ी अभिरुचि थी। उदाहरणार्थ, म्यूनिक की वाह्य-सीमा पर एक वेकार जमीन का टुकड़ा था जिसमें उसने वगीचा वनवा दिया जिसका जनता स्वतंत्रतापूर्वक आनन्द ले सके। सभी अमरीकी जो म्यूनिक गये हैं इसे "इंगलिश गार्डेन्स" के नाम से स्मरण करते हैं। जब अन्त में टामसन ववेरिया से इंगलेण्ड वापस हुआ तो इस वगीचे में लोगों ने कृतज्ञता के चिह्नस्वरूप उसकी पत्थर की एक मूर्ति वना दी।

जव वह लन्दन में और बाद में डब्लिन में था तव गरीवों में उसने फिर वही अभिरुचि दिखाई। धनी होने के कारण वह उदार दान देने के योग्य था। उनमें से उसका एक उदारतापूर्ण कार्य, लन्दन में रायल इंस्टीट्यूट की, गरीव नवयुवक विद्यार्थियों की विज्ञान में सहायता के लिए, स्थापना थी। दूसरा विज्ञान में हारवर्ड प्राध्यापक पद के लिए उसका वसीयत करना था। आज भी वहाँ "रम्फोर्ड प्राध्यापक" रहता है और वह विश्वविद्यालय में फ्रांस में उसकी कब्र की देखभाल करता है।

जव यूनाइटेड स्टेट्स की मिलिटरी एकेडमी की योजना वनाई जा रही थी तो टामसन से लन्दन में अमरीकी मन्त्री मिले और उससे "वेस्ट प्वाइन्ट" में स्थापित होनेवाली सैनिक अधिकारियों की नई पाठशाला के लिए योजना वनाने की प्रार्थना की। उसने इसे सहर्ष किया किन्तु जब राष्ट्रपति जॉन एडम्स ने उसे अमरीकी सेना की तोपों के निरीक्षक तथा मिलिटरी एकेडमी के व्यवस्थापक का संयुक्त स्थान दिया तो उसने अस्वीकार कर दिया।

इससे आश्चर्य होता है कि ऐसा स्थान एक ऐसे अमरीकी को देने के लिए सोचा गया जिसने क्रान्ति के युद्ध मे सदैव टोरी पक्ष का समर्थन किया था; किन्तु उसके व्यक्तित्व, अमरीकी विज्ञान की ओर उसका उदार दृष्टिकोण तथा वैज्ञानिक के रूप मे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति होने के कारण उन पूर्ववर्ती बातों पर ध्यान न दिया गया।

इस अध्याय के उप-शीर्षक में टामसन को "भौतिकशास्त्र का अग्रगामी" कहा गया है। सम्भवत. बिना अतिशयोक्ति के यह कहा जा सकता है कि टामसन अग्रगामी से कुछ और अधिक था। वह एक ऐसा अन्वेषक था जिसने पदार्थ तथा शक्ति के विषय में सत्य का पता लगाया जिससे ज्ञान के एक नवीन प्रदेश का द्वार खुला तथा भौतिक विज्ञान को उस रूप मे सम्भव बनाया जिसमें वह आज है।

जीन एन्ट्वायन बैपटिस्टे पियरे डी लामार्क



जीन एन्ट्वायन बैपटिस्टे पियरे टी लामार्क

था जो केवल देखकर ही अपने शिकार को जान से मार सकता था। वास्तव में यह एक कुरूप छिपकली है जिसका नाम बेसिलिस्क रखा गया है किन्तु इसकी ओर देखना पूर्णरूपेण निरापद है। इन काल्पनिक जीवों में शायद सबसे आश्चर्यजनक जीव हिपोग्रिफ था। इसके एक बड़े उकाब (Eagle) का सिर तथा गर्दन थी; शरीर, पूंछ, पैर तथा और सब घोड़े जैसा था, केवल खुर के स्थान पर बड़े पंजे थे।

इन तथा और काल्पनिक जीवों के अतिरिक्त यूरोप के लोगों का वास्तविक जीवों के विषय में भी कुछ विचित्र चीजों का विश्वास था। उदाहरण के लिए एक चीते में बड़ी अच्छी सुगन्ध की कल्पना की जाती थी। राजहंस जिसकी चीख अच्छी नहीं है, उसके विषय में विश्वास किया जाता था कि मृत्यु के समय वह सुन्दर गाना गाता है। राजहंस के गाने के मुहाविरे का अब भी किसी की अन्तिम विदा के अर्थ में प्रयोग किया जाता है। पेलिकन संसार में करीब-करीब सबसे कुरूप पक्षी है और अमेरिकी यात्री इसे यूरोप के प्राचीन गिरजाघरों की सजावट में देखकर चकित हो जाता है—विशेषकर वहाँ यह पेलिकन धब्बेदार शीशे में प्रायः अपने बच्चे के साथ घोंसले में दिखलाया गया है। इसका अर्थ यह है कि मध्यकाल में सभी लोग विश्वास करते थे कि मादा पेलिकन अपने रक्त को, बच्चे को खिलाने के लिए, अपनी छाती में चोंच से घाव कर लेती थी। किसी ने भी यह सोचने की कोशिश नहीं की कि बड़ी चोंच से छाती में घाव करना एक असाधारण मरोड़ पैदा करनेवाला कार्य होगा। किन्तु इसी विश्वास के कारण पेलिकन को ईसा का प्रतिरूप माना गया जिसने मानव जाति के लिए अपना रक्त बहाया और यही कारण है कि मध्यकालीन गिरजाघरों में प्रायः हम इसे देखते हैं।

एक हजार वर्षों या इससे भी अधिक तक किसी ने ऐसे प्रश्न न पूछे, "हिपोग्रिफ किसने देखा है?" या "किसी ने वास्तव में कभी मरते हुए राज-

हंस को गाते सुना है ?" इस प्रकार ये विश्वास शताब्दियों तक बिना किसी प्रकार की शंका के चलते रहे।

वास्तव में विज्ञान के नवीन काल के प्रारम्भ होने के बहुत दिनों बाद जन्तुओं के जीवन का वास्तविक अध्ययन हुआ जो आज प्राणि-विद्या कहलाता है। एन्ट्वायन डी लामार्क प्रसिद्ध वैज्ञानिकों में चुना गया है क्योंकि वह इस उपेक्षित क्षेत्र मे महान् तथा बहुत दूर तक जाँच करनेवाला था।

जैसा कि उसका लम्बा नाम, 'जौन एन्ट्वायन बैपटिस्टे पीयरे डी लामार्क,' कुल-नाम के साथ डी होने से बतलाता है, 'वह फ्रांसीसी उच्च परिवार का था यद्यपि वह बहुत उच्च श्रेणी का नहीं था। बहुत से फ्रांसीसी उच्च लोगो की भाँति उसके माता-पिता के यहाँ रुपये से अधिक खानदानी रईसी थी। और एन्ट्वाइन अपने परिवार का ग्यारहवाँ बच्चा था। यह स्पष्ट था कि उसे एक भद्र पुरुष के अतिरिक्त खानदानी रईस होते हुए भी कुछ और बनना था। जेसुइट स्कूल मे शिक्षा प्राप्त कर उसे प्रथम पुरोहित बनना था (किन्तु अपने पिता की मृत्यु होने पर सोलह वर्ष की आयु में उसने एक पुराना घोड़ा खरीदा, एक ग्रामीण छोकरे को साईस नियुक्त किया और अपना भाग्य आजमाने चल पड़ा। अपनी शिक्षा चालू रखकर वह अपनी विधवा माता पर भार नही बन रहा था।

चूंकि सप्तवर्षीय युद्ध उस समय जारी था, इससे उसे फ्रांसीसी सेना में—जो तब जर्मनी मे लड़ रही थी— सिपाही बनने मे कोई कठिनाई न हुई। जल्दी ही एक लड़ाई मे उसका दल एक भयंकर गोलाबारी मे पड़ गया। सभी सेनाधिकारियो के मारे जाने के पश्चात् नवयुवक सैनिक ने नायक का कार्यभार स्वयं अपने हाथो में ले लिया और यह निश्चय कर लिया कि वह तब तक पीछे न हटेगा जब तक कि उसे सेनापति का आदेश न मिल जायगा। उस समय केवल चौदह व्यक्ति शेष रह गये थे। इस भयंकर अग्नि-वर्षा में महान् साहस दिखाने के कारण वह एक उच्च सेनाधिकारी बना दिया गया।

समय पाकर कदाचित् एन्ट्वायन नेपोलियन की अधीनता में एक बड़ा सेनानी हो गया होता किन्तु इसी बीच एक बड़ी करुण घटना घट गई। एक दिन एक साथी सेनाधिकारी ने, व्यावहारिक परिहास के रूप में, उसे गला पकड़कर, उठाने की चेष्टा की। इससे उसकी गले की मांस-पेशियों और ग्रंथियों पर भयंकर जोर पड़ गया। उसे ठीक करने के लिए वह पेरिस के एक चिकित्सालय में भेजा गया। वहाँ उसे चीर-फाड़ की चिकित्सा में बड़ा कष्ट हुआ। चिकित्सालय में उसे अच्छा होने में कई महीने लग गये। वह एक कक्ष में, गवाक्ष के नीचे, एक कोठे पर चारपाई पर पड़ा रहता था। इस विवेकहीन कार्य से नवयुवक सेनाधिकारी का सैनिक जीवन-क्रम समाप्त हो गया; किन्तु विज्ञान के क्षेत्र में इसके महान् परिणाम निकले। जिस समय ला मार्क अच्छा हुआ उस समय उसकी आयु इक्कीस वर्ष की थी।

एक दिन जब वह सीन नदी के किनारे टहल रहा था तो वहाँ उसकी भेंट सुप्रसिद्ध लेखक जीन जेक्विस रूसो से हो गई जो उस समय नदी-तट पर वनस्पतिशास्त्र का अध्ययन कर रहा था। उनमें प्रगाढ़ मैत्री हो गई। उस मैत्री के परिणामस्वरूप एन्ट्वायन भी वनस्पतिशास्त्र में अभिरुचि लेने लगा और वह तत्कालीन महान् वनस्पतिशास्त्रियों को भी जान गया।

इस प्रकार एक नये अध्याय का आरम्भ हुआ। नवयुवक वनस्पतिशास्त्र का उद्भट विद्वान् हो गया। उसने अपने जीवन के अगले दस वर्ष उसी विषय के अध्ययन में बिताये। उसने एक पुस्तक लिखी जिसके कारण वह शीघ्र ही 'एकेडमी ऑफ साइंस' का सदस्य निर्वाचित कर लिया गया। १७८१ में उसके मित्र महान् प्रकृति-अध्येता बफन ने उसके लिए यूरोप के सुप्रसिद्ध उपवनों का घूम-घूमकर अध्ययन करने के लिए अभिनिवेश भी प्राप्त कर लिया और वहाँ से लौटने के पश्चात् बफन के ही प्रभाव के कारण वह पेरिस के राजकीय उपवन का एक अधिकारी बना दिया गया। फ्रांसीसी क्रांति की अन्तरा में उसने इस उपवन

से ही बच गया, बल्कि उस समय जब कि चारों ओर आतंक के साम्राज्य (Reign of terror) का बोलबाला था, वह संग्रहालय में मेरुदण्ड-विहीन प्राणि-शास्त्र विभाग में उच्च पद पर नियुक्त कर दिया गया। आगामी वसन्त-काल में लैवोशिए मार डाला गया किन्तु लामार्क कभी भी कर-समाहर्ता न रहा था और संयोगवश गण-तंत्र की शिक्षा-समिति का अध्यक्ष स्वयं एक विज्ञानवेत्ता तथा लामार्क का मित्र था। वह लामार्क की बड़ी प्रशंसा किया करता था। उसने लामार्क को अपने प्रभाव से बचा लिया, अन्यथा उसकी भी वही दशा हुई होती जो लैवोशिए की हुई थी।

मेरुदंड-विहीन प्राणि-शास्त्र विभाग के नये अध्यक्ष ने अपने अगले आठ वर्षों को इन जीवों के अध्ययन में पूर्ण रूप से लगा दिया। १८०१ में उसने इस विषय पर एक नई पुस्तक प्रकाशित की। इस पुस्तक ने न केवल मेरुदंड-विहीन प्राणियों के वर्गीकरण की समस्त पद्धति में ही आमूल सुधार किया प्रत्युत उसमें जीवों की उत्पत्ति के विषय में भी ऐसी नई भावनाओं का प्रतिपादन किया गया था जिससे लोगों की आँखें चकाचौंध हो गईं। तत्पश्चात् १८१५ से १८२२ की अन्तरा में लामार्क ने सात जिल्दों में अपना The Natural History of Invertebrate Animals (मेरुदंड-विहीन प्राणियों का प्राकृतिक इतिहास) नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया जिसकी कीर्ति सतत अक्षुण्ण बनी रहेगी। ग्यारह जिल्दों में इसका दूसरा संस्करण हुआ। पच्चासी वर्ष की परिपक्वावस्था में लामार्क का देहान्त हुआ; किन्तु ज्ञान के अन्य क्षेत्रों में अन्य बहुसंख्यक पूर्ववर्तियों की भाँति वह दीर्घकाल तक यह देखने के लिए जीवित न रह सका कि उसकी भावनाओं को अन्य वैज्ञानिकों ने भी अंगीकार कर लिया। इसके विपरीत वैज्ञानिक उसकी बातों को बच्चों-सरीखी एवं अपरिपक्व बतलाते थे।

अब उसकी कुछ भावनाओं का निरूपण किया जा रहा है। वह कहता

था कि जीवों के शिलीभूत कंकाल अपने पूर्वजों के रूप को दिखाते हैं। किन्तु पृथ्वी के इतिहास में उनके बीच बहुत समय का अन्तर पड़ चुका है। उसने लोगों को आश्चर्य में डालनेवाली एक दूसरी भावना का प्रतिपादन किया कि भूतत्त्वीय परिवर्तन पृथ्वी के परिवल्क में होनेवाले आकस्मिक और आंदोलनकारी उपप्लवों पर नहीं आधारित होते प्रत्युत वे धीरे-धीरे होते हैं। लामार्क के देहान्त के थोड़े ही समय पश्चात् लायल नामक एक अँगरेज ने अपना एक ग्रंथ प्रकाशित किया जिसमें यह सिद्ध किया गया था कि लामार्क का कथन सत्य था।

आगे चलकर जल और स्थल की जलवायु में धीरे-धीरे होनेवाले परिवर्तनों ने जीवों की जीवन-परिस्थितियों में पर्याप्त अन्तर डाल दिया था। अपने वंश की रक्षा के लिए जीवों ने उन परिवर्तनों के अनुसार अपने को बदल लिया था। कभी-कभी उनके शारीरिक ढाँचे में भी बहुत परिवर्तन हो गया। जो जीव अपने को उन परिवर्तनों के अनुसार न बदल सके वे नष्ट हो गये। साथ ही जीवों के जिन अंगों की परिवर्तित परिस्थितियों में कोई उपादेयता न था वे धीरे-धीरे सिकुड़ने लगे और अन्त में एकदम विलुप्त हो गये। दृष्टान्त-स्वरूप ह्वेल के पूर्वजों के पैर होते थे किन्तु कालान्तर में [illegible] हो गये, यद्यपि अब भी उनमें जंघास्थियाँ पाई जाती हैं। [illegible] मछलियाँ बिना आँखों की देखी जाती हैं किन्तु उनमें आँ[illegible] [illegible]मान रहते हैं। कभी मनुष्य के कृमिकावशेष (Verm[illegible] [illegible] बड़ी उपादेयता थी; किन्तु अब वह केवल शल्य-शास्त्र[illegible] [illegible]षय-मात्र रह गया है।

लामार्क के पीछेवाला [illegible] [illegible]विवाद उसके [illegible] सिद्धान्त के सम्बन्ध में [illegible] [illegible] प्रवृत्तियों [illegible] माध्यमों के कारण उनके [illegible] [illegible]ते हैं वे उनके [illegible]

मे भी आ जाते हैं। यह सम्प्राप्त विशेषताओं का उत्तराधिकरण कहलाता है। उदाहरणस्वरूप हम कह सकते हैं कि दक्षिणी भारत के किसी आदिवासी का चमड़ा इसलिए काला होता है कि उसके पूर्वज लाखों वर्ष तक कर्करेखीय सूर्य के उग्र ताप में रह चुके थे और उनकी त्वचा की रक्षा के लिए उनका वर्ण यहाँ तक वैसा हो गया था कि यदि कोई हिंदू बच्चा कनाडा में भी पैदा हो तो भी उसका चमड़ा काला ही होगा। ऐसा इसलिए होगा कि उसने अपने पूर्वजों की बहुत परम्पराओं से चली आती हुई विशेषता का अनुसरण किया था। संक्षेप में लामार्क का सिद्धान्त यह था कि जीवन की नई परिस्थितियों के कारण जीवों में जो शारीरिक परिवर्तन और नई प्रवृत्ति आती है वह शारीरिक गठन में ऐसा परिवर्तन कर सकती है जो आगे आनेवाली पीढ़ियों में भी पाये जा सकते हैं।

उसके जीवन-काल में अधिकांश वैज्ञानिकों ने उसके विकास सम्बन्धी विचारों पर बहुत थोड़ा या प्रायः नहीं के बराबर ध्यान दिया। वे उनका उपहास करते थे। मेरुदंडीय प्राणिशास्त्र के एक सुप्रसिद्ध विशेषज्ञ क्यूवियर ने उनकी मृत्यु के एक वर्ष पश्चात् उसकी एक तथाकथित प्रशंसा में उक्त भावना का उपहास किया था। किन्तु अगली शताब्दी में डार्विन के ओरिजिन ऑफ स्पिसीज (जीवों की उत्पत्ति) नामक ग्रंथ के प्रकाशित हो जाने के पश्चात् लामार्क के 'सम्प्राप्त विशेषताओं के उत्तराधिकरण सिद्धान्त' को लेकर वैज्ञानिकों में बड़ा वाद-विवाद चलता रहा। यह बड़ा रोचक सिद्धान्त है, साथ ही अत्यन्त विश्वसनीय भी प्रतीत होता है। कई बार वह सत्य-सा सिद्ध हो चला था किन्तु अब जीव-शास्त्रवेत्ताओं में प्रायः मतैक्य हो चला है कि अधिकांश प्रमाण उसके विरुद्ध हैं। कुछ भी हो, इस विषय में इस विवाद का अन्त नहीं हुआ है।

यद्यपि अधिकांश अर्वाचीन जीवशास्त्रवेत्ता इस सिद्धान्त के विरोधी हैं

अग्रगामी था। जिस समय पचासी वर्ष की आयु में उसका देहान्त हुआ उस समय चार्ल्स डारविन नाम का एक बीस वर्षीय अंगरेज युवक इस विस्मय में पड़ा हुआ था कि वह जीवन में अपने को क्या बनाये। इसी चार्ल्स डारविन ने आगे चलकर लामार्क द्वारा प्रारम्भ किये हुए अत्यन्त महान् कार्य को बहुत आगे बढ़ाया।

सर हम्फ्री डेवी



सर हम्फ्री डेवी

पढ़कर आता था तो उसे बाजार में खड़ी चौपहिया गाड़ी के पिछले भाग में खड़ा होकर अन्य बालकों को भी सुनाता था।

जब वह पाठशाला में विद्याध्ययन के लिए भेजा गया तो उसे लैटिन और ग्रीक से बड़ी विरक्ति हो गई जो उन दिनों अंगरेज बालकों के मस्तिष्क में बलात् ठूंसी जाती थीं। किन्तु ईश्वर ने उसे बड़ी विलक्षण स्मरण-शक्ति दी थी। उसने बहुत-सी कविताएं कंठस्थ कर ली थीं और स्वयं भी पद्य-रचना की चेष्टा करता था। उसके पिता के देहान्त के कारण उसका विद्याध्ययन समाप्त हो गया। पिता ने एक विधवा पत्नी और पांच बच्चे छोड़े थे किन्तु रुपये बिलकुल न थे। हम्फ्री ही अपने पिता की सन्तानों में सबसे बड़ा था। वह पेन्जान्स में एक शल्य-शास्त्री और औषधिविक्रेता के यहां अविशिक्षार्थी (Alapscutic) बन गया। किशोर हम्फ्री यह कार्य करते हुए एक नवीन विषय अर्थात् विज्ञान के सम्पर्क में आया और उसे इसमें बड़ी अभिरुचि उत्पन्न हो गई। वह गणित और प्राकृतिक विज्ञानों का स्वयं अध्ययन करने लगा। शीघ्र ही वह एक क्वेकर—शान्ति-प्रचारक मंडल के सदस्य—के सम्पर्क में आया। इस व्यक्ति को रसायन-शास्त्र सम्बन्धी प्रयोगों से अत्यधिक अनुराग था। उसने अपने साधारण उपकरणों से हम्फ्री को नाना प्रकार के अत्यन्त रोचक प्रयोग दिखाये। अनेक वर्ष पश्चात् हम्फ्री डेवी भी जनता में व्याख्यान देते समय इन प्रयोगों में से कुछ को बड़ी सफलतापूर्वक दोहराया करता था।

तदनन्तर वह डाक्टर बेडोज के साथ काम करने लगा। इस डाक्टर ने क्लिफ्टन नगर में एक "वायविक संस्था" स्थापित कर रक्खी थी। उसका विश्वास था कि कुछ गैसों में व्याधियों को अच्छा करने का गुण होता है। तरुण डेवी इस बात से इतना आकृष्ट हुआ कि उसने गिनी पिग के सदृश अपने ऊपर बहुत से प्रयोग किये। इसमें, उन्नीस वर्ष की आयु प्राप्त करने के पूर्व ही, तरुण वैज्ञानिक कई बार अपने प्राण गंवाने-गंवाते बचा। उसकी मां कई

जाती थी—विशेषकर लंदनवासियों की। थोड़े ही समय पश्चात् वह पूरा प्राध्यापक बना दिया गया।

१८०६ में तरुण वैज्ञानिक ने "विद्युत् के कुछ रासायनिक साधन" विषय पर बहुत से व्याख्यान दिये। इन व्याख्यानों से इतनी प्रतिभा और मौलिकता टपकती थी कि जब वे विशद निबन्धों के रूप में प्रकाशित किये गये तो सभ्य संसार के सभी रसायन-शास्त्रियों और विज्ञान-वेत्ताओं ने उनकी बड़ी प्रशंसा की। फ्रांसीसी प्रसंस्था ने उसे एक पुरस्कार प्रदान किया, यद्यपि उस समय ब्रिटेन का नैपोलियन से युद्ध चल रहा था। लोगों ने डेवी से कहा कि वह शत्रु-देश के पुरस्कार को न स्वीकार करे; किन्तु उसने उत्तर दिया कि वैज्ञानिक क्षेत्र में काम करनेवाले व्यक्तियों में कभी युद्ध का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। डेवी के जन्म के समय बेन्जामिन फ्रैंकलिन ने भी यही बात कही थी। फ्रैंकलिन ने अमेरिकी युद्ध-पोतों के नायकों को यह आदेश दे रखा था कि वे कैप्टेन कुक और उसके दो छोटे जहाजों को, मार्ग में पा जाने पर, व्यर्थ तंग न करें क्योंकि उस समय कैप्टेन कुक एक वैज्ञानिक अभियान पर जा रहा था। फ्रैंकलिन का विचार था कि अमेरिकी उपनिवेशों की विज्ञान से कोई लड़ाई न थी।

कुछ भी हो, डेवी द्वारा लिखा हुआ वह विशद निबन्ध रसायनशास्त्र का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और अन्यतम ग्रन्थ समझा जाता है। उस निबन्ध में सबसे प्रमुख और मौलिक बात यह कही गई थी कि वस्तुओं के रासायनिक यौगिक का कैसे निर्माण होता है। उसका कहना था कि ऐसा अणुओं में परस्पर विद्युतीय-आकर्षण के कारण होता है। डेवी अपने मार्ग में आगे बढ़ता रहा और उसने प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि लेवोज़िये के कुछ सिद्धान्त वस्तुतः सत्य थे। किन्तु उसने यह भी दिखाया कि पोटाश और सोडा, जिन्हें उक्त महान् फ्रांसीसी रसायनशास्त्री तत्त्व

समझता था, वस्तुतः धातुओं और ओषजन के यौगिक हैं। उसने इन धातुओं अर्थात् पोटाशियम और सोडियम को पृथक् कर दिखाया और तत्पश्चात् बेरियम और स्ट्रान्टियम के विघटन में भी सफलता प्राप्त की। यह भी एक महान् कार्य था।

ये सभी एवं इनसे भी अधिक कार्य उसने रसायन-शास्त्र के लिए किये थे। किन्तु फ्रैंकलिन की भाँति वह भी यही सोचा करता था कि वैज्ञानिक क्षेत्र में ऐसे कार्य किये जायँ जिससे विज्ञान मानवता की अधिकाधिक सेवा कर सके। जब उसका ध्यान न्यू गेट के कुख्यात कारावास के भयानक रूप से अस्वास्थ्यकर दूषित वातावरण की ओर आकर्षित किया गया तो उसने उसे नि.संक्रामक बनाने का कार्य स्वयं अपने हाथों में लिया। यह १८०८ की बात है। इसका परिणाम यह हुआ कि उसे भी एक भयंकर सम्पर्कजन्य रोग हो गया जिसके कारण वह वर्ष के कार्य करने योग्य सबसे अच्छे महीनों में रुग्ण होकर पड़ा रहा और यदि उसकी तरुणावस्था तथा उसके शरीर की गठन बहुत अच्छी न रही होती तो कदाचित् उसका प्राणान्त ही हो जाता।

अपनी प्रयोगशाला में लौटने के थोड़े ही समय पश्चात् उसने दूसरा आविष्कार किया। जैसा पहले ही कहा जा चुका है कि प्रीस्टले ने जिसे गैस को पृथक् किया था उसको लैवोशिये ऑक्सीजन या अम्ल-निर्माता कहता था। उसकी मूलगत भावना यह थी कि सभी अम्लों का निर्माण ऑक्सीजन से होता है किन्तु डेवी ने यह दिखाया कि हाइड्रोक्लोरिक अम्ल में ऑक्सीजन बिल्कुल होता ही नहीं। वह हाइड्रोजन और क्लोरिन के संयोग से बनता है। अतएव अम्ल के निर्माण के लिए ऑक्सीजन अत्यावश्यक नहीं है। रसायन-शास्त्र के क्षेत्र में यह आविष्कार भी बड़ा युग-प्रवर्तक सिद्ध हुआ।

अब तक डेवी की कीर्ति चतुर्दिक् ऐसी फैल चुकी थी कि १८१२ में राजा ने उसे "नाइट" की उपाधि प्रदान की। तत्पश्चात् वह अधिकृत रूप से सर हम्फ्री डेवी बार्ट कहलाने लगा। एक बड़े सम्पन्न परिवार में विवाह हो जाने के कारण उसकी आर्थिक चिन्ताएं भी दूर हो गई। इससे उसने राजकीय प्रसंस्था के प्राध्यापक पद से त्याग-पत्र दे दिया तथा ज्वालामुखियों-विषयक अपनी एक नई भावना के सम्बन्ध में अध्ययन करने के लिए वह महाद्वीप की यात्रा के लिए प्रस्तुत हुआ। १८१२ के उस वर्ष में तब भी इंगलैण्ड और फ्रान्स में युद्ध चल रहा था किन्तु नेपोलियन ने सुरक्षित रूप से उसके आने-जाने के लिए बहुत अच्छा प्रबन्ध करवा दिया। इस यात्रा-काल में सर हम्फ्री के साथ माइकेल फैराडे नाम का उसका एक तरुण सचिव भी था। वह मुस्कराते हुए कहा करता था, "फैराडे मेरा सबसे बड़ा आविष्कार था।" कालान्तर में वह तरुण सहायक भी अपने स्वामी हम्फ्री डेवी से प्रेरणा प्राप्त कर एक विख्यात वैज्ञानिक हुआ।

ज्वालामुखियों के पर्यन्वेषण के सम्बन्ध में जितनी आशा की जाती थी उतनी सफलता न मिली, हालांकि डेवी यूरोप में जहां-जहां गया वैज्ञानिकों ने उसका अत्यन्त आदरपूर्वक हार्दिक स्वागत किया। स्वदेश लौटने के पश्चात् उसने एक दूसरे पर्यन्वेषण का कार्य अपने हाथ में लिया। इसमें उसने बड़ी आश्चर्यजनक बातें ढूंढ निकालीं। यद्यपि वैज्ञानिक महत्त्व की अपेक्षा मानवता के कल्याण-साधन के दृष्टिकोण से वे अधिक उल्लेख्य थीं। १८१५ में एक धर्माधिकारी ने उसका ध्यान इस ओर आकृष्ट किया कि कोयले की खानों में प्रतिवर्ष न जाने कितने व्यक्ति अपने प्राण गंवाते हैं। केवल तीन वर्ष पहले एक ही स्थान में विस्फोट होने के कारण बानवे पुरुषों और बालकों का प्राणान्त हो गया

था। ये दुर्घटनाएँ इतनी संख्या में होने लगी थीं कि खान के स्वामियों ने अपनी खानों को बन्द करना प्रारम्भ कर दिया और ऐसा दिखाई पड़ने लगा कि इंगलैण्ड के एक महान् उद्योग का अब अन्त हो जायगा।

बात यह थी कि खानों को खोदते समय चट्टानों की दरारों से अग्नि-सील नामक एक गैस निकलती थी और जब वह खनिकों की मोमबत्ती के सम्पर्क में आती थी तो उससे भयंकर विस्फोट होता था। खनिकों को, काम करते समय, कुछ प्रकाश रखना आवश्यक था, अतएव ऐसा लगता था कि इस समस्या का कोई समाधान ही नहीं है। डेवी को उसमें तुरन्त अभिरुचि उत्पन्न हो गई। उसने न्यू कैसल में जाकर खानों का पर्यन्वेषण किया। खान के स्वामी ने अत्यन्त उदास होकर कहा, "कोई उपाय नहीं है"। किन्तु डेवी ने वैसा न सोचा। वह कुछ अग्निसील अपने साथ ले गया और उसका अध्ययन करने लगा। तीन महीने के भीतर ही उक्त खान के स्वामी को डेवी का एक पत्र और एक विचित्र प्रदीप मिला। वैज्ञानिक ने अपने पत्र में लिखा था "मैं सोचता हूँ, इससे काम चल जायगा"। किसी ने इस पर विश्वास न किया। एक दिन खानों का स्वामी स्वयं खानों के कुछ कार्यकर्ताओं को साथ लेकर खान में उतरा। उस समय उन कार्यकर्ताओं की पत्नियाँ बहुत रो-पीट रही थीं और उन्होंने उन्हें रोकने के लिए बहुत उपद्रव भी किया। वे बहुत बिलखती रहीं कि "अब हम उन्हें पुन जीवित न देख पायेंगी।" किन्तु फिर भी दल खानों में उतर ही गया। नीचे मारक गैस खान में सर-सर करती हुई घुस गई। उन पुरुषों ने उस सरसराहट को सुना और उनके हृदय की धड़कन मन्द पड़ने लगी किन्तु कोई विस्फोट न हुआ। नये प्रदीप ने वस्तुतः काम किया। विख्यात वैज्ञानिक ने वह कार्य कर दिखाया जिसको सम्पादित

करने में आज तक किसी दूसरे को सफलता न मिली थी। उसने खनिकों के प्राणों की अग्निसील से रक्षा की। कृतज्ञ खनिक, उसके पश्चात्, सौ वर्ष से भी अधिक समय तक उसे डेवी दीपक के नाम से पुकारते थे। इस प्रदीप ने संसार की कोयले की खानों में काम करने वाले अगणित व्यक्तियों के प्राण बचाये।

डेवी ने समझाया कि उसने क्या किया था। उसने अनुसन्धान द्वारा ढूंढ निकाला कि अग्निसील में विस्फोट तभी होता था जब वायु बहुत मात्रा में विद्यमान होती थी। अतएव उसने धातु की जाली का एक लम्बा बेलन बनाया था। जब वह गैस खानों में पहुँचती थी तो वह प्रदीप की लपट में श्वेत पीली चमक के साथ जल उठती थी। इससे खानों में काम करने वाले व्यक्तियों को यह संकेत मिल जाता था कि अब वहां से हट जाना चाहिए क्योंकि सूंघने से उस भयानक गैस का पता न चल पाता था। लपट की कुछ उष्णता धातु की जाली में समा जाती थी और वायु केवल थोड़े परिमाण में ही भीतर प्रवेश कर पाती, इससे विस्फोट रुक जाता था।

दो वर्ष के पश्चात् जब नये प्रदीप का पूरा-पूरा परीक्षण किया जा चुका तो कृतज्ञता से भरे हुए खान के स्वामियों ने हम्फ्री डेवी को एक भोज दिया जिसमें उन्होंने उसे भोज में काम आने वाली छः सहस्र डॉलर की चांदी की वस्तुएं प्रदान कीं। खनिक और उनके परिवार उसके आभार से और भी दबे हुए थे यद्यपि अर्थाभाव के कारण वे उसे भोज या कोई उपहार न दे सकते थे किन्तु वे हम्फ्री डेवी के नाम का आदर एक प्राणदाता साधु की भांति करते थे। बहुत से लोगों ने उसे सुझाव दिया कि वह अपने सुरक्षा-प्रदीप का सर्वाधिकार सुरक्षित करा ले और उससे प्रचुर सम्पत्ति अर्जित करे किन्तु इस बार भी उसने बेन्जामिन फ्रैंकलिन की भांति उत्तर दिया कि वह मानवता की सेवा करने वाले किसी आविष्कार से कोई लाभ उठाना नहीं चाहता। उसके

आविष्कार से बहुसंख्यक खनिकों के प्राण बचे, यही उसके लिए सबसे बड़ा पुरस्कार है। उसने केवल इतना ही कहा कि, "मुझे पर्याप्त पुरस्कार मिल गया।"

इस स्थल पर एक बात और कह देनी चाहिए कि डेवी कृषि-सम्बन्धी रसायन शास्त्र मे भी संसार का उद्भट विद्वान् समझा जाने लगा था और उस रूप मे वह किसानो का भी परम मित्र बन गया था। अब तक उनमें से बहुत से किसानो का यह अन्धविश्वास था कि लौह हल से पृथ्वी विषाक्त हो जाती है। किन्तु उसके जीवन में विज्ञान और आविष्कार केवल ये ही दो वस्तुएँ न थी। वह अब भी अपने अवकाश के समय में घर में बैठकर बड़े प्रेम से कविताएँ पढ़ा करता था। दी एन्शियन्ट मैरिनर का रचयिता सैमुअल टेलर कॉलरिज उसके मित्रो मे से था। घर से बाहर जाकर सॉलमन मछली मारना उसका बड़ा प्रिय कार्य था, और उसने अपने विज्ञान-संबन्धी कार्यों से समय बचाकर बंशी पर कीड़ो को रख कर सॉलमन मछली मारने के संबन्ध में एक पुस्तक भी लिखी जिसने बंशी से मछली मारने वालो मे बड़ी ख्याति प्राप्त की।

१८२० मे वह रॉयल सोसाइटी का सभापति निर्वाचित किया गया जो पद कभी आइज़क न्यूटन द्वारा सुशोभित किया गया था। (अब रॉयल सोसाइटी विज्ञान के क्षेत्र म महान् कार्य करने के लिए हम्फ्री डेवी पदक भी प्रदान करती है।) तत्पश्चात् उसने जलयानो के ताम्र से बने हुए पेंदो को लवण जल के घर्षणजन्य प्रभावो से बचाने के विषय में भी बहुत काम किया। जब वह इस कार्य में संलग्न था तभी अस्वस्थ हो गया और स्विटजरलैण्ड के जिनवा नामक नगर मे एक अवकाश मे उसका देहान्त हो गया जहाँ वह आरोग्य लाभ करने की आशा से गया था। उस प्रतिभाशाली को ऐसी कीर्ति थी कि जिनेवा की नगर-सरकार ने, सार्वजनिक सम्मान के साथ, उसकी

अन्त्येष्टि क्रिया की, यद्यपि वह इंगलैण्ड का निवासी था। संसार के सभी देशों के वैज्ञानिकों ने उसकी बड़ी प्रशंसा की। मृत्यु के समय, तुलनात्मक दृष्टि से, उसकी आयु कुछ अधिक न थी। उस समय वह केवल इक्यावन वर्ष का था। इसी आयु में लैवोशिए का देहान्त हुआ था जिसका वह अनन्य उपासक था। इंगलैण्ड और वेल्स के कोयले की खानों वाले जिले में साधारण कोटि के सहस्रों नर-नारियों में महान् विषाद छा गया यद्यपि वे यह न जानते थे कि हम्फ्री डेवी ने रसायन-शास्त्र के क्षेत्र में कितने महान् कार्य किये थे। वे विषाद भरे शब्दों में केवल यही कहते थे "हमने खनिकों का सर्वोत्तम सुहृद् आज खो दिया।"

जॉन डाल्टन



जान गन्थर

जॉन डाल्टन

(१७६६-१८४४)

परमाणु की खोज

इस अध्याय में जिस व्यक्ति का जीवन-वृत्त दिया जा रहा है उसके संसार के अत्यन्त महान् वैज्ञानिक होने का कारण यह है कि उसने पदार्थों के सम्बन्ध में बहुत सी बातें निकाली थीं और उन सिद्धान्तों को ढूंढा था जो, उसकी मृत्यु के पश्चात् एक सौ वर्ष से अधिक समय व्यतीत हो जाने पर भी, रसायन-शास्त्र के क्षेत्र में काम करनेवाले व्यक्तियों के लिए मूलभूत सिद्धान्तों का काम देते हैं। फिर भी जैसी कहावत है, उसने अपना जीवन अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थितियों में आरम्भ किया था। जॉर्ज इलियट की कथा के एक पात्र साइलस मारनर की भाँति उसका पिता कम्बरलैण्ड के एक अंगरेजी ग्राम में एक निर्धन कपड़ा बुननेवाला था। उसका पिता अपने जीवन में अपनी निर्धनता से कभी मुक्ति न प्राप्त कर सका। उसकी माता बहुत शक्तिशाली थी किन्तु वह स्वयं अपने परिवार को निर्धनता से न छुड़ा सकी। उन्हें केवल जीवित रहने के लिए आजीवन अभावों से लड़ते रहने पड़ा।

जॉन के माता-पिता क्वेकर–शान्ति-प्रचारक दल के सदस्य थे। अतः विद्याध्ययन के लिए वह क्वेकरों की एक पाठशाला में भेजा गया। वहाँ वह गणित में शीघ्र ही विशेष प्रतिभाशाली दिखाई पड़ा। उस समय से लेकर, जब तक वह पढ़ाने योग्य हो सका, मृत्युपर्यन्त वह प्रमुखतया गणित पढ़ाकर ही

अपना जीवन-निर्वाह करता था। एक सज्जन क्वेकर अंकों के क्षेत्र में जॉन की प्रखर-बुद्धि देखकर, अपना कार-बार करनेवाले सेवक लड़के की भांति, अपने घर ले गया और बल-बूते कुछ गणित पढ़ाया। जब किशोर जॉन १८ वर्ष का हुआ तो उसने स्वयं अपने पैरों पर एक पाठशाला स्थापित करने की चेष्टा की। यह पाठशाला एक खलिहान में आरम्भ की गई थी और पीछे क्वेकरों के एक सभा-गृह में स्थानान्तरित कर दी गई। उसकी पाठशाला में छोटे शिशुओं से लेकर, जिन्हें वह अपनी गोद में बैठाये रहता था, बड़े-बड़े बालक भी थे उनको जब वह छड़ी से मारने लगता था तो वे उससे लड़ भी बैठते थे अर्थात् इसमें सभी अवस्था के बालक थे। सप्ताह के अन्त में वह उन बालकों से माता-पिता द्वारा शुल्क के रूप में भेजे हुए पैसों को एकत्र करता था। इससे उसे प्रति सप्ताह प्रायः एक डालर की आय हो जाती थी।

किन्तु इस भारी श्रम के कार्य के दो सप्ताह बाद ही उसे विवश होकर अपने भरण-पोषण के लिए एक खेत में काम करने जाना पड़ा। पर थोड़े ही समय पश्चात् वह अपने अध्ययन के क्षेत्र में पुनः लौट आया। इसमें उसे अब भी बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। सौभाग्यवश उसकी एक अन्धे व्यक्ति से मैत्री हो गई। इस व्यक्ति ने उसके स्वयं के अध्ययन में पर्याप्त सहायता की। उसे कुछ लैटिन, ग्रीक और फ्रेञ्च भाषा सिखाई तथा प्रमुख अंगरेज गणितज्ञों की पुस्तकों का अध्ययन करने में भी उसे बहुत कुछ सहायता दी। किन्तु जॉन और निर्धनता का संघर्ष सतत चलता ही रहा। यद्यपि कालान्तर में उसने पर्याप्त ख्याति प्राप्ति की किन्तु उसे इस जीवन-संग्राम ने मृत्युपर्यन्त कभी भी छुटकारा न मिला।

दूसरी बात यह है कि जॉन डाल्टन के समस्त जीवन में कोई आकर्षण न था। वह वैसा ही था जैसा कि उसका क्वेकर कोट। वह मैनचेस्टर नामक

उद्योग-धन्धोवाले एक उदास नगर में रहता था। उसका बिना सजा हुआ कमरा उसकी निर्धनता को स्पष्ट द्योतित करता था। उसका व्यक्तित्व भी कोई आकर्षक न था। वह समाज मे भी बहुत न चमक सका। क्योकि वह देखने म साधारण था और उसके आचार-व्यवहार भी कुछ भद्दे ही थे। वस्तुत उसे बेन्जामिन टॉमसन का ठीक विलोम कहा जा सकता है। यद्यपि टॉमसन भी एक निर्धन परिवार मे ही उत्पन्न हुआ था किन्तु उसके व्यक्तित्व म कुछ ऐसा आकर्षण था जिससे वैज्ञानिक, राजवृत्तिज्ञ, बड़े-बड़े सामन्त, राजकुमार और नरेश सभी उसके सम्पर्क में आने पर मन्त्र-मुग्ध हो जाते थे। सबसे बड़ी बात यह थी कि डाल्टन के लिए समस्त जगत् ही एक आकर्षणविहीन चित्र के सदृश था, क्योकि उसे वर्णान्धता का रोग था। यह ध्यान देने की बात है कि उसने वर्णान्धता के विषय में सर्वप्रथम विवरण लिखा था और इस कारण वह रोग डाल्टनिज्म के नाम से पुकारा जाने लगा था। उसके परवर्ती जीवन म, जब उसने पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर ली थी, एक अवसर पर उसके मित्रो ने बड़ी कठिनाई से उसे राज-सभा मे चलने के लिए तैयार किया। उन दिनो राज-सभा के औपचारिक पहनावे म अन्य आटोपपूर्ण वस्तुओ के साथ तलवार भी धारण करने की प्रथा थी। क्वेकर होने के कारण डाल्टन ने तलवार धारण करना अस्वीकार कर दिया किन्तु कहा कि वह ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के विद्वानो के पहनावे में राज-सभा में चल सकता है। यह पहनावा उक्त विश्वविद्यालय ने उसे सम्मानात्मक उपाधि प्रदान करते समय भेंट किया था। अत वह उसी पहनावे में राज-सभा मे उपस्थित हुआ। उसकी आँखो मे उसके पहनावे का रग सड़क की कीचड़ के सदृश था, किन्तु वस्तुत ऑक्सफोर्ड का पहनावा चटकीले लाल रंग का होता है। अत भड़कीले पहनावो से दूर भागनेवाला यह साधारण क्वेकर जब राज-सभा मे उपस्थित हुआ तो वह काले पादियो के बीच एक कैथोलिक पुरोहित की भाँति दीख पड़ता था।

डाल्टन के जीवन का सिद्धान्त था "अध्यवसाय से अवश्य काम होता है।" यद्यपि वह असाधारण रूप से प्रतिभाशाली नहीं था किन्तु उसमें अविराम श्रम करने की अनुपम दृढ़ता थी। केवल सप्ताह में एक बार गेंद खेलना ही उसका बड़ा प्रिय विषय था। वर्ष में वह थोड़ा अवकाश लेकर अपने जन्म-स्थान कम्बरलैण्ड में जाकर पहाड़ों पर भी चढ़ता था। ऐसा भास होता है कि वह इस प्रकार अपना मनोरंजन करता था तो उसके हृदय में सदैव यह बात खटका करती थी कि वह अपने बहुमूल्य समय को व्यर्थ अतिवाहित कर रहा है। जब उससे कोई पूछता था कि उसने विवाह क्यों नहीं किया तो वह उत्तर देता था कि "मुझे कभी समय ही न मिला।"

विज्ञान के क्षेत्र में डॉल्टन का नाम परमाणु सिद्धान्त के लिए विशेष प्रसिद्ध है। प्राचीन यूनानियों और फ्रांसिस बेकन तथा आइजक न्यूटन ने भी यह घोषित किया था कि पदार्थ छोटे-छोटे कणों से मिलकर बने होते हैं। ये कण इतने छोटे होते हैं कि आँखों से नहीं देखे जा सकते। न्यूटन के समकालीन एक फ्रांसीसी वैज्ञानिक ने इन कणों को एटम (परमाणु) की संज्ञा दी थी। एटम शब्द यूनानी भाषा से बना है जिसका अर्थ वस्तुओं का वह भाग है जिसके उससे छोटे भाग नहीं किये जा सकते। डाल्टन ने उस सिद्धान्त को अंगीकार किया और उसे एक नया अर्थ प्रदान किया। उसका विचार था कि परमाणु पक्षियों को मारने-वाले छर्रों के सदृश अति सूक्ष्म अनन्त गेंदों जैसे होते हैं और वे इतने सूक्ष्म होते हैं कि उन्हें सबसे शक्तिशाली अणुवीक्षण यन्त्र के द्वारा भी नहीं देखा जा सकता। अब सर्वविदित हो चुका है कि परमाणुओं के जितना छोटा होने की कल्पना उसने की थी वे उससे कहीं अधिक सूक्ष्म होते हैं। गणना द्वारा यह निकाला गया है कि यदि संसार के निवासी केवल परमाणुओं के तुल्य बड़े हों तो वे सभी एक पिन के सिरे पर एक साथ खड़े हो सकते हैं और फिर भी उनकी कोहनियाँ एक-दूसरे को नहीं छू सकतीं।

जैसा पिछले अध्याय मे कहा जा चुका है, लैवोशिए ने गैसो को तोलने की प्रथा चलाई थी । अब स्वभावत. इसके आगे दूसरा कार्य यह था कि उन तत्त्वो को ठीक-ठीक तौला जाय जिनसे कोई वस्तु बनी होती है । अणु शब्द, जिसका अर्थ होता है थोड़ी पदार्थ-मात्रा, किसी यौगिक वस्तु की इकाई द्योतित करता है और पदार्थ के तत्त्व परमाणु कहलाते हैं । उदाहरणार्थ, जल के एक अणु मे दो अभिद्रवजन के परमाणु और एक ऑक्सीजन का परमाणु होता है । अत वह H_2O के प्रतीक द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है । डॉल्टन के अन्वेषण को साधारण शब्दो में इस प्रकार रखा जा सकता है कि उसने यह प्रतिपादित किया कि प्रत्येक तत्त्व का अपना निजी भार होता है । उसने सबसे हल्के तत्त्व हाइड्रोजन को इकाई माना और उसी से अन्य तत्त्वो के भार का मापन किया ।

सितम्बर १८०३ में डाल्टन ने परमाणु-भारो की अपनी प्रथम तालिका प्रकाशित की । इसम तुलनात्मक रूप से केवल थोड़े से ही तत्त्वो के परमाणु-भार दिये हुए थे । किन्तु उसके परमाणुवाद से यह निर्दर्शित किया जा सका कि किस प्रकार परमाणु संयुक्त होकर अणुओ का निर्माण करते हैं । उसने यह दिखाया कि रासायनिक सयोग वस्तुओ मे एक निश्चित अनुपात मे घटित होते हैं । यथा, जल के किसी अणु का परमाणु-भार सदैव उसके दूसरे अणु के तुल्य होता है अर्थात् उसम हाइड्रोजन के दो परमाणु और ऑक्सीजन का एक परमाणु होता है ।

डॉल्टन की तत्त्वो की प्रथम तालिका द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धान्त के आधार पर पदार्थों के परमाणुवाद के साथ ही साथ समस्त आधुनिक रसायन शास्त्र का जन्म हुआ ।

इस सिद्धान्त के आधार पर तत्त्वो की एक सारिणी बनाई जा सकी जिसम हाइड्रोजन को इकाई मान कर विभिन्न तत्त्वों के व्यक्तिगत भार दिये गये । डॉल्टन की निजी सारिणी म इक्कीस तत्त्व थे। अब उन तत्त्वों की संख्या

डाल्टन के जीवन का सिद्धान्त था "अध्यवसाय से अवश्य काम होता है।" यद्यपि वह असाधारण रूप से प्रतिभाशाली नहीं था किन्तु उसमें अविराम श्रम करने की अनुपम दृढ़ता थी। केवल सप्ताह में एक बार गेंद खेलना ही उसका बड़ा प्रिय विषय था। वर्ष में वह थोड़ा अवकाश लेकर अपने जन्म-स्थान कम्बरलैण्ड में जाकर पहाड़ों पर भी चढ़ता था। ऐसा भास होता है कि जब वह इस प्रकार अपना मनोरंजन करता था तो उसके हृदय में सदैव यह बात खटका करती थी कि वह अपने बहुमूल्य समय को व्यर्थ अतिवाहित कर रहा है। जब उससे कोई पूछता था कि उसने विवाह क्यों नहीं किया तो वह उत्तर देता था कि "मुझे कभी समय ही न मिला।"

विज्ञान के क्षेत्र में डॉल्टन का नाम परमाणु सिद्धान्त के लिए विशेष प्रसिद्ध है। प्राचीन यूनानियों और फ्रांसिस बेकन तथा आइजक न्यूटन ने भी यह घोषित किया था कि पदार्थ छोटे-छोटे कणों से मिलकर बने होते हैं। ये कण इतने छोटे होते हैं कि आँखों से नहीं देखे जा सकते। न्यूटन के समकालीन एक फ्रांसी वैज्ञानिक ने इन कणों को एटम (परमाणु) की संज्ञा दी थी। एटम शब्द यूनानी भाषा से बना है जिसका अर्थ वस्तुओं का वह भाग है जिसके उससे छोटे भाग नहीं किये जा सकते। डाल्टन ने उस सिद्धान्त को अंगीकार किया और उसे एक नया अर्थ प्रदान किया। उसका विचार था कि परमाणु पक्षियों को मारने-वाले छर्रों के सदृश अति सूक्ष्म अनन्त गेंदों जैसे होते हैं और वे इतने सूक्ष्म होते हैं कि उन्हें सबसे शक्तिशाली अणुवीक्षण यन्त्र के द्वारा भी नहीं देखा जा सकता। अब सर्वविदित हो चुका है कि परमाणुओं के जितना छोटा होने की कल्पना उसने की थी वे उससे कहीं अधिक सूक्ष्म होते हैं। गणना द्वारा यह निकाला गया है कि यदि संसार के निवासी केवल परमाणुओं के तुल्य बड़े हों तो वे सभी एक पिन के सिरे पर एक साथ खड़े हो सकते हैं और फिर भी उनकी कोहनियाँ एक-दूसरे को नहीं छू सकतीं।

जैसा पिछले अध्याय में कहा जा चुका है, लैवोशिए ने गैसों को तौलने की प्रथा चलाई थी। अब स्वभावत: इसके आगे दूसरा कार्य यह था कि उन तत्त्वों को ठीक-ठीक तोला जाय जिनसे कोई वस्तु बनी होती है। अणु शब्द, जिसका अर्थ होता है थोड़ी पदार्थ-मात्रा, किसी यौगिक वस्तु की इकाई द्योतित करता है और पदार्थ के तत्त्व परमाणु कहलाते हैं। उदाहरणार्थ, जल के एक अणु में दो अभिद्रवजन के परमाणु और एक ऑक्सीजन का परमाणु होता है। अत: वह H_2O के प्रतीक द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है। डॉल्टन के अन्वेषण को साधारण शब्दो में इस प्रकार रखा जा सकता है कि उसने यह प्रतिपादित किया कि प्रत्येक तत्त्व का अपना निजी भार होता है। उसने सबसे हल्के तत्त्व हाइड्रोजन को इकाई माना और उसी से अन्य तत्त्वो के भार का मापन किया।

सितम्बर १८०३ मे डाल्टन ने परमाणु-भारो की अपनी प्रथम तालिका प्रकाशित की। इसमे तुलनात्मक रूप से केवल थोड़े से ही तत्त्वो के परमाणु-भार दिये हुए थे। किन्तु उसके परमाणुवाद से यह निदर्शित किया जा सका कि किस प्रकार परमाणु संयुक्त होकर अणुओं का निर्माण करते हैं। उसने यह दिखाया कि रासायनिक संयोग वस्तुओ मे एक निश्चित अनुपात मे घटित होते हैं। यथा, जल के किसी अणु का परमाणु-भार सदैव उसके दूसरे अणु के तुल्य होता है अर्थात् उसमे हाइड्रोजन के दो परमाणु और ऑक्सीजन का एक परमाणु होता है।

डॉल्टन की तत्त्वो की प्रथम तालिका द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धान्त के आधार पर पदार्थों के परमाणुवाद के साथ ही साथ समस्त आधुनिक रसायन शास्त्र का जन्म हुआ।

इस सिद्धान्त के आधार पर तत्त्वो की एक सारिणी बनाई जा सकी जिसमे हाइड्रोजन को इकाई मान कर विभिन्न तत्त्वो के व्यक्तिगत भार दिये गये। डॉल्टन की निजी सारिणी मे इक्कीस तत्त्व थे। अब उन तत्त्वो की संख्या

अस्सी से ऊपर जा चुकी है। उस तालिका को प्रत्येक रासायन-शास्त्र की कक्षा में आज देखा जा सकता है।

डाल्टन ने जिन उपकरणों से काम किया था वे बिल्कुल शुद्ध न थे। अतएव उसके आंकड़े सर्वथा ठीक नहीं हैं, किन्तु १८०८ में प्रकाशित उसकी "दि न्यू सिस्टम ऑफ केमिकल फिलॉसफी" नामक पुस्तक ने रसायन-शास्त्र के समस्त क्षेत्रों में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया। एक लेखक ने कहा है कि, "उसके आधार पर इतनी बहुसंख्यक उपयोगी बातें ढूंढ़ी गईं जितनी भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में अन्य किसी भावना द्वारा न ढूंढ़ी जा सकीं" और यह कोई सामान्य श्लाघा नहीं है।

यद्यपि विज्ञान के क्षेत्र में डाल्टन का यही कार्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण है किन्तु उसने अन्य क्षेत्रों में भी काम किया था। दृष्टान्तस्वरूप उसे फ्रेंकलिन की भांति ऋतु-सम्बन्धी बातों में भी बड़ी अभिरुचि थी। उसने अपनी एक डायरी पीछे छोड़ी जिसमें ऋतु-निरीक्षण की बहुत-सी बातें लिखी हैं। उनमें सहस्रों बड़ी महत्वपूर्ण बातें हैं। वे इस विषय के परवर्ती विद्यार्थियों के लिए नितान्त उपयोगी सिद्ध हुई हैं।

रेडियम के आविष्कार और उससे जितनी अन्य बातों का पता लगा है उससे विज्ञान में यह सिद्ध हुआ है कि अविभाज्य परमाणु स्वयं अनन्त रूप से और सूक्ष्म कणों से मिलकर बना है। परमाणु को एक प्रकार का सौर-मण्डल कहा जा सकता है जिसके चारों ओर ये कण अथवा शक्ति की इकाइयां सतत सहकम्पन और परम वेगमान उद्वेलन में निरत रहती हैं। किन्तु यह दूसरी और बहुत परवर्ती कथा है। कुछ भी हो, परमाणु-भार की डाल्टन की तालिका अब भी ठीक मानी जाती है, यद्यपि वह तब से अब बहुत विस्तृत हो चुकी है।

यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि यद्यपि ऊटपटांग पहनावे में रहनेवाले इस असम्भ्रान्त से दिखाई पड़नेवाले व्यक्ति का कोई प्रभावशाली मित्र न था और समाज में भी उसका कोई आदर न था, फिर भी ब्रिटेन और अन्य देशों की वैज्ञानिक संस्थाओं और विश्वविद्यालयों ने उसे मान्यता दी और उसको अतिशय आदर प्रदान किया। प्रायः यह नियम है कि किसी महान् व्यक्ति की मृत्यु के अनन्तर ही उसके सम्मानार्थ उसकी मूर्ति कहीं स्थापित की जाती है किन्तु यह बड़ी विचित्र बात है कि १८३३ में डाल्टन के मित्रों ने उसकी मूर्ति बनवाने के लिए चन्दे से २०० पौण्ड एकत्र किये और अगले वर्ष मैनचेस्टर रॉयल इन्सटीट्यूशन के सामने उसे स्थापित किया गया। यह कार्य उसकी मृत्यु के १० वर्ष पूर्व किया गया। बहुत से लोगों को यह जिज्ञासा होगी कि जब यह आकर्षणविहीन साधारण व्यक्ति उस संस्था के पास से होकर जाता था तो अपनी प्रतिमा को देखकर उसके हृदय में कैसी भावनाएं उत्पन्न होती रही होंगी। कदाचित् वह उधर से तभी जाता था जब उसे आवश्यकता पड़ती थी, अन्यथा वह उस मार्ग से कभी न जाता था।

परमाणु-भार-सम्बन्धी और रासायनिक संयोगों के डाल्टन के नियमों द्वारा रसायन-शास्त्र के क्षेत्र में एक नये युग का आरम्भ होता है। भयंकर कठिनाइयों के बीच, निर्धनता और थोड़ी शिक्षा की बाधाओं से लड़ते हुए, उसने जितने अप्रतिहत साहस से अपने कार्य का सम्पादन किया, यह स्वयं नितान्त उत्साहप्रद है।

माइकेल फैराडे



माइकेल फैराडे

माइकेल फैराडे

(१७९१-१८६७)

वैद्युतिक युग का अग्रगामी

'बेन्जामिन फ्रैंकलिन' अठारहवीं शताब्दी में विद्युत् क्षेत्र का महान् अग्रगामी हुआ है। उसकी मृत्यु के एक वर्ष पश्चात् लन्दन के निकट एक लड़का पैदा हुआ जिसके भाग्य में विज्ञान के इतिहास में किसी और दूसरे व्यक्ति से विद्युत् के क्षेत्र मे अधिक काम करना लिखा था। उसका नाम माइकेल फैराडे था, और वह एक लोहार का पुत्र था। वह बड़ा होकर अच्छे मुख तथा आचारवाला एवं हँसमुख प्रकृति का सुन्दर नवयुवक बना। उसका नाम आयरिश मालूम पड़ता था। इससे उसने आयरिश ढंग से बोलने का अभ्यास कर लिया। इसमें वह ऐसा निपुण हो गया जिससे वह अपने मित्रो का मनोरंजन करता था और नवागतों को चकित कर देता था।

उसकी सबसे बड़ी शारीरिक विशेषता यह थी कि उसका सिर असाधारण रूप से लम्बा था जिसके कारण उसे, अपने जीवन के पिछले वर्षों में, विवश होकर विक्रेताओं से कहकर अपने लिए विशेष हैट बन-वाना पड़ता था। 'लम्बा सिरा' सदैव एक सम्मानसूचक पद है, क्योंकि लम्बे सिर वाले व्यक्ति के सम्बन्ध मे सदैव यह समझा जाता है कि उसे ईश्वर ने अधिक बुद्धि प्रदान की है। माइकेल फैराडे का जीवन इस धारणा

को और अधिक पुष्ट करता था, क्योंकि उसकी लम्बी खोपड़ी में विस्मयावह रूप से उत्कृष्ट प्रतिभा भरी हुई थी।

लोहार के कुल में उत्पन्न होने के कारण वह सुचारु रूप से शिक्षा प्राप्त करने की आशा न कर सकता था और यद्यपि वह भट्टी पर अपने पिता के कौशल की बड़ी प्रशंसा किया करता था किन्तु उसे स्वयं उस वृत्ति को अपनाने की कोई इच्छा न थी। जब वह तेरह वर्ष का था तो उसने एक पुस्तक और कागज-कलम-विक्रेता की दूकान में एक संदेशवाहक बालक के रूप में अपना जीवन आरम्भ किया। इस काम में उसने इतनी योग्यता का परिचय दिया कि दूकान के स्वामी ने उसे अपने यहाँ अधिशिक्षार्थी के रूप में रख लिया और उसके लिए उसने कोई शुल्क नहीं लिया। माइकेल इस काम को आठ वर्ष तक करता रहा और ऐसा लगता था कि अब वह आगे कभी न बढ़ पायेगा।

परन्तु इन सभी अन्तरालों में विज्ञान से उसका अनन्य प्रेम बना रहा। उसने लन्दन में उस विषय पर एक व्याख्यानमाला सुनी और उसे विदित हुआ कि यदि वह अपने गाढ़े पसीने की कमाई से एक शिलिंग प्रवेश के लिए दे सके तो वहाँ उसे प्रवेश मिल सकता है। वह मंत्र-मुग्ध होकर व्याख्यानों को सुनता था जैसे उसकी कल्पना में एक नये संसार की सृष्टि हो गई हो। कुछ काल पश्चात् दूकान के एक ग्राहक ने तरुण अधि-शिक्षार्थी के हृदयहारी आचार-विचार और सम्भाषण से मुग्ध होकर तथा यह देखकर कि उसे विज्ञान से बड़ा प्रेम था, उसे प्रसिद्ध सर हम्फ्री डेवी के व्याख्यानों को सुनने के लिए चार टिकट दिये। माइकेल फैराडे को किसी अन्य उपहार से इतनी अधिक प्रसन्नता न हुई होती। वह कागज-पेन्सिल लेकर व्याख्यान सुनने गया और बड़ी द्रुत गति से उसे लिख लिया। प्रत्येक व्याख्यान के पश्चात् उसने बड़े-बड़े कागजों पर बड़ी सावधानी से उनका

पूर्ण विवरण लिखा। चारों व्याख्यानों की समाप्ति पर उसने उन विवरणों को सर हम्फ्री के पास भेजा और उसके साथ उसे एक प भी लिखा कि यदि वह महान् व्यक्ति उसके सहायतार्थ उसे कोई छोटा से छोटा काम भी दे सके तो बड़ा अच्छा हो। माइकेल ने यह भी लिखा था कि उसे पुस्तक-विक्रय के व्यापार में या अन्य किसी व्यापार में कोई अभि-रुचि न थी। वह अपना जीवन विज्ञान की सेवा मे लगाना चाहता था।

१८१२ के दिसम्बर में, एक रात को, जब माइकेल सोने जा रहा था तो उसे बाहर पहियों की कुछ खड़खड़ाहट सुनाई पड़ी जो उसके द्वार के सामने आकर रुक गई और फिर किसी ने जोर से उसका दरवाजा खट-खटाया। जब उसने द्वार खोला तो उसने देखा कि विशिष्ट वस्त्र पहने एक आदमी खड़ा है। इस आगन्तुक ने उसे एक पत्र दिया और फिर चुपचाप जाकर गाड़ी मे बैठ गया। जब नवयुवक ने पत्र खोला तो उसे विदित हुआ कि वह सर हम्फ्री डेवी का पत्र था। उसमे सर डेवी ने उसे अपनी प्रयोगशाला म २५ शिलिंग प्रति सप्ताह पर एक सहायक नियुक्त करने का संवाद दिया था और उसे यह आदेश दिया था कि अगले दिन वह राजकीय संस्था में उपस्थित होकर अपना कार्य-भार ग्रहण करने की सूचना दे। यह वैज्ञानिक संस्था निर्धन तरुण वैज्ञानिकों के अध्ययन में सहायता पहुँचाने के लिए बेन्जामिन टॉमसन काउन्ट रमफोर्ड द्वारा स्थापित की गई थी। यदि उक्त संस्था ने केवल माइकेल फैराडे की ही सहायता की होती तब भी यह कहा जा सकता था कि केवल उस एक व्यक्ति की सहायता से ही उस संस्था में लगे हुए सभी धन का बहुत सुन्दर उपयोग हो गया।

उस कार्य से तरुण फैराडे के वैज्ञानिक जीवन का आरम्भ होता है। सहायक के रूप म उसे बहुत सी बोतलें और परीक्षण-नलिकाएँ साफ करनी पड़ती थी। साथ ही प्रयोगशाला की मेजों को भी झाड़-पोंछ करनी पड़ती थी

और २५ शिलिंग प्रति सप्ताह कोई ऐसी धन-राशि न थी जिससे वह धनी हो सकता था, फिर भी वह उससे प्रसन्न था। इस कालावधि में वह सदैव अपना ज्ञान बढ़ाता रहा और उसे इस बात का बड़ा गर्व था कि वह इंगलैण्ड के सबसे अधिक प्रसिद्ध जीवित वैज्ञानिक स्वयं सर हम्फी डेवी की सेवा में था। कुछ समय पश्चात् उसे व्याख्यानों में सर हम्फी डेवी को सहायता प्रदान करने का अवसर दिया गया और उसमें उसने ऐसी अपूर्व योग्यता का परिचय दिया कि समय पाकर वह सर हम्फी डेवी से भी अधिक प्रसिद्ध और जन-प्रिय वैज्ञानिक व्याख्यानदाता बन गया। यहाँ एक बात यह भी कही जा सकती है कि अवस्था बढ़ जाने पर भी डेवी की इस विषय में बालकों सरीखी अभिरुचि कम न हुई थी कि नये-नये रासायनिक संयोगों पर प्रयोग करके देखा जाय कि विभिन्न परिस्थितियों में उनमें क्या परिवर्तन होते हैं। उसे और उसके सहायक दोनों को ही अप्रत्याशित विस्फोटों से कई बार चोट भी पहुँची किन्तु सौभाग्य-वश वे कभी भयंकर रूप से आहत न हुए।

एक वर्ष के पश्चात् सर हम्फी ने योरोप महाद्वीप की यात्रा करने का निश्चय किया और उस यात्रा में वह तरुण फैराडे को अपना निजी सचिव बना-कर ले गये, परन्तु फैराडे को सभी काम करने पड़ते थे। श्रीमती हम्फी उससे घृणा करती थीं, क्योंकि वह एक लोहार का लड़का था। उसका जन्म किसी सम्भ्रान्त कुल में न हुआ था। वे उसे अपने परिचारकों के साथी रखती थीं और उसके साथ साधारण सेवकों सा ही व्यवहार करती थीं। उसे सर हम्फी के सचिव का काम तो करना ही पड़ता था किन्तु इसके साथ-साथ वह उसके परिचारक का भी काम करता था। एक बार जब वह एक फ्रान्सीसी व्यक्ति डी ला राइव के यहाँ डेवी और उनकी पत्नी के साथ ठहरा हुआ था तो वह फ्रान्सीसी फराडे के आचार-व्यवहारों और बुद्धिमत्ता से इतना प्रभावित हुआ कि उसे फैराडे के साथ किये जाने वाले बर्ताव को देख कर बड़ा क्षोभ हुआ।

इसके पश्चात् जितने दिनों तक वे उस फांसीसी के यहाँ अतिथि रहे, वह फैराडे के प्रति विशेष अनुग्रह दिखाते हुए एक पृथक् कमरे में उसका भोजन भिजवाता था। उस सद्व्यवहार के लिए फैराडे डी ला राइव का आजीवन आभार मानता रहा।

समग्र यूरोपीय यात्रा में फैराडे ने एक विवरण पुस्तिका बनाई था और विभिन्न नगरों में मिलनेवाले वैज्ञानिकों के प्रयोगों को वह बड़े ध्यान से देखता था। १८१५ में इंगलैण्ड लौटने के पश्चात् उसने अपने द्वारा किये हुए कुछ प्रयोगों और निकाली हुई बातों का विवरण अपने स्वामी को बताया। इनमें गैसों को संकुचित कर तरल बनाने की बात सबसे महत्त्वपूर्ण थी। सर हम्फी ने भी उसकी इन बातों में बड़ी अभिरुचि ली। सौभाग्यवश सर हम्फी के प्रभाव के कारण फैराडे को रॉयल इन्स्टीट्यूशन में फिर से सहायक नियुक्त कर दिया गया; परन्तु इस बार उसे वस्तुतः वैज्ञानिक के कार्य दिये गये, बोतल धोनेवाले के नहीं। वह उत्सुकतापूर्वक अपने अनुसन्धान के कार्य में एकदम संलग्न हो गया और उसे ऐसी सफलता मिली कि १८२४ में वह रॉयल सोसाइटी का सदस्य निर्वाचित कर लिया गया तथा अगले वर्ष रायल इन्स्टीट्यूशन की प्रयोगशाला का संचालक बना दिया गया। थोड़े ही समय पश्चात् वह सर हम्फी के स्थान पर रसायन-शास्त्र का प्राध्यापक हो गया।

इसके बहुत पूर्व ही उसने विद्युत् को अपने विशिष्ट अध्ययन का विषय चुन लिया था। १८२१ में उसने डाइनेमो के सिद्धान्त का आविष्कार किया। वह चुम्बकीय विद्युत् तथा उपपादन (Induction) के क्षेत्र में प्रयोग करता रहा। १८३१ तक उसने सभी चुम्बकीय और डाइनेमो इन्जनों तथा तत्सम्बन्धी अन्य बहुत-सी महत्त्वपूर्ण बातों का आविष्कार कर लिया था।

उसने विद्युत्-विश्लेषण के क्षेत्र में भी बहुत से आविष्कार किये हैं। विद्युत्-विश्लेषण का अर्थ है विद्युत्-धारा द्वारा रासायनिक यौगिकों का विश्लेषण।

इस कार्य से बहुत से नये रासायनिक यौगिकों का जन्म हुआ जिनमें बेंजॉल भी एक है। इससे बहुत से रासायनिक रंग बनाये जाते हैं।

१८३१ से १८४१ तक का दशक उसके जीवन में वैज्ञानिक कार्यों के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। किन्तु आगे आनेवाले वर्षों में प्रयोगों और आविष्कारों की छानबीन तथा उन आविष्कार-सम्बन्धी सिद्धान्तों के प्रतिपादन में उस पर इतना अधिक जोर पड़ा कि उसे महती दुर्बलता हो गई। आधुनिक काल में उसकी व्याधि को भयंकर स्नायविक दुर्बलता कहा जा सकता है। जिस समय वह अपने महान् कार्य में लगा हुआ था उस समय उसके इस स्नायु-दौर्बल्य के कारण उसके तीन अमूल्य वर्ष व्यर्थ नष्ट हो गये। उन दिनों में वह वैज्ञानिक पत्रिका में छपे हुए किसी एक निबन्ध पर भी अपना चित्त एकाग्र न कर पाता था। आरोग्य-लाभ के लिए वह अपनी पत्नी और उसके भाई को साथ लेकर स्विट्जरलैण्ड गया। उसमें शारीरिक शक्ति इतनी थी कि वह अपने साले के साथ कई मील घूम लेता था और पहाड़ों पर भी चढ़ लेता था किन्तु उसकी मानसिक शक्ति ऐसी क्षीण हो गई थी कि वह साधारण संलाप में भी प्रायः असमर्थ था।

सौभाग्यवश इस दीर्घकालीन विश्राम से उसे बड़ा लाभ पहुँचा जिससे उसे आरोग्य-लाभ हुआ और वह इंगलैण्ड में अपनी प्रयोगशाला में पुनः लौट गया। अब विद्युत् के क्षेत्र में उसके आविष्कार का दूसरा युग आरम्भ होता है। इस बार वह विद्युत् तथा चुम्बकत्व का प्रकाश से क्या रहस्यमय सम्बन्ध है, यह जानने के लिए पर्यन्वेषण में दत्तचित्त हो गया। जब वह विद्युत् के क्षेत्र में नये-नये आश्चर्यजनक आविष्कार करने लगा तो उसे नये शब्दों के निर्माण की आवश्यकता पड़ी। उसके बनाये हुए शब्द अब भी प्रयोग में आते हैं; यथा एलेक्ट्रोलिसिस, एलेक्ट्रोड और एनोड। यह बड़ी रोचक बात है कि यद्यपि इस लोहार के पुत्र ने कभी ग्रीक भाषा का अध्ययन न किया था किन्तु

किन्तु फैराडे के मित्रों को बड़ा आश्चर्य हुआ, जब उसने दोनों सभापति के पदों को ग्रहण करना अस्वीकार कर दिया। उसने कहा, "मैं आजीवन केवल साधारण माइकेल फैराडे ही रहना चाहता हूँ।" उसे अपने कार्यों के लिए सम्पूर्ण यूरोप में कुल ९७ उपाधियाँ और पदक प्रदान किये जा चुके थे किन्तु उसने उनकी गिनती करने पर कभी ध्यान नहीं दिया। दोनों वैज्ञानिक संस्थाओं के सभापति के पद को अस्वीकार करने के दो कारण थे। एक तो वह स्वभावतः संकोची व्यक्ति था और दूसरा कारण यह था कि उसके मस्तिष्क की शक्ति उत्तरोत्तर क्षीण होती जा रही थी। यह बड़ा करुण कारण था। किन्तु उसके मित्र इस बात को न समझ सके। वस्तुतः १८३१ में उसे जो स्नायु-दौर्बल्य हुआ था उसने उसके अति प्रखर मस्तिष्क की जड़ ही हिला दी थी और उसका यह रोग पूर्णतया कभी भी अच्छा न हो सका था। उसके जीवन के अन्तिम ६ या ७ वर्ष बड़े कष्ट में बीते। बहुत वर्षों तक वह अन्यतम वैज्ञानिक व्याख्यानदाता रहा और क्रिसमस के अवसर पर वह रॉयल इन्स्टीट्यूशन में, पाठशाला में, छोटे-छोटे बालकों के लिए व्याख्यान दिया करता था। उसने १८६० में "मोमबत्ती के रासायनिक इतिहास" पर जनता के समक्ष अपना अन्तिम भाषण दिया था।

इस बीच, अपने पति के सुझाव से, महारानी विक्टोरिया ने हैंपटन कोर्ट प्रासाद के पास एक हरे-भरे स्थान में उसे बहुत अच्छा आवास प्रदान किया। किन्तु जब उसे पहले-पहल यह आवास प्राप्त हुआ तो वह अत्यन्त विचित्र परिस्थिति में पड़ गया, क्योंकि उसे रहने योग्य बनाने के लिए जितने व्यय की आवश्यकता थी वह उसकी सामर्थ्य के बाहर था। यह बात किसी ने महारानी से कह दी और उन्होंने, उसे देने के पूर्व, उस आवास की पूर्ण रूप से मरम्मत करवा दी।

एक बार एक राजकीय भोज में फैराडे को वेलिंगटन के ड्यूक की बगल में स्थान दिया गया। सम्भ्रान्त ड्यूक ने अपनी सुप्रसिद्ध नासिका के भड़कीले

किनारे की ओर देखकर फैराडे को यह परामर्श दिया कि वह अपने विज्ञान को कुछ "व्यावहारिक उपयोग" का बनाये। एक बार प्रधान मंत्री ग्लैड्स्टन ने उससे कहा था कि उसके विद्युत् विषयक पर्यन्वेषणो का क्या उपयोग है ? उसने मुस्कराते हुए उत्तर दिया "शीघ्र ही आप इससे भी कर उगाहेंगे।" जब हम सार्वजनिक कार्यों पर लगनेवाले समस्त करों के विषय में सोचते हैं तब हमें यह ध्यान आता है कि फैराडे सचमुच बड़ा भारी भविष्यवक्ता भी था।

इसमें सन्देह नहीं कि यदि वह व्यावहारिक न रहा होता तो वह कुछ भी नही था। उसने इमारती लकड़ी को घुन से बचाने के विषय मे अनुसन्धान किये। उसने प्रकाश-गृहो के प्रदीपों के सुधार के विषय में भी अध्ययन किया। उसने, सर चार्ल्स लॉयल के साथ, खानों मे होनेवाले धड़ाकों के रोकने के विषय में भी काम किया; क्योंकि 'डेवी-प्रदीप' के निकल जाने के बाद भी खानों मे कभी-कभी विस्फोट हो ही जाते थे। किन्तु फैराडे ने सबसे महान् कार्य यह किया कि उसने उद्योग-धन्धों और गृहों मे विद्युत् को नितान्त उपयोगी बना दिया। फैराडे के आविष्कार के आधार पर ही एडीसन और स्टेनमेट्ज ने अपने ऐन्द्रजालिक भवन का निर्माण किया। वेलिंगटन और ग्लैडस्टन को चिन्ता करने की कोई आवश्यकता न थी।

किन्तु फैराडे ने डाइनेमो और विद्युत्-प्रदीपो के केवल व्यावहारिक क्षेत्र मे ही काम न किया था, प्रत्युत उसने बहुत-सी मौलिक एवं अत्यन्त रहस्यमयी बातो का भी अनुसंधान किया था। वह शुद्ध विज्ञान के क्षेत्र मे भी अग्रगामी था। उसी ने यह दिखाया था कि तथाकथित "शून्य अन्तरिक्ष" मे विद्युत् चुम्बकीय विशेषताएँ होती हैं और उसी ने विद्युत् चुम्बकत्व के साथ प्रकाश के रहस्य का संयोग किया। ऐसा करने मे उसने ऐसे-ऐसे प्रश्न उठाये जिससे अब भी वैज्ञानिक जगत् चकित हो रहा है। हम माइकेल फैराडे के जीवन के कार्यों का, एक उसको जाननेवाले व्यक्ति के शब्दो मे, इस प्रकार सिंहावलोकन कर सकते

है, "विशुद्ध और प्रयोगात्मक विज्ञान के इतिहास में उसके आविष्कार अप्रतिम हैं।"

जीवन के अन्तिम दिनों में उसे बहुत उदासी ने आ घेरा था। उसकी विलक्षण प्रतिभा उत्तरोत्तर क्षीण होती जा रही थी। इस समय वह अपनी खिड़की के पास बैठकर मन बहलाया करता था। जब आकाश में अन्धड़ उठते थे तो उन्हें देखकर उसे बड़ा आनन्द आता था। सूर्यास्त को देखकर वह मंत्र-मुग्ध हो जाता था और जब उसका जीवन-सूर्य अस्ताचलावलम्बी हुआ तो जैसा बहुत से लोग सोचेंगे, वह वेस्ट मिनिस्टर एबे में नहीं समाधिस्थ किया गया; किन्तु एक अत्यन्त साधारण और अनालंकृत समाधि में एक गिरजाघर के प्रांगण में भूमिस्थ किया गया। उसकी यही इच्छा भी थी; क्योंकि जब वह जगत्-विख्यात वैज्ञानिक हुआ और चारों ओर से सम्मानों से लद गया तब भी वह पुस्तक-विक्रेता की दूकान के अप्रशिक्षार्थी की भाँति ही अत्यन्त साधारण रूप से रहता था। उस समय भी उसमें दिखावा बिल्कुल ही न आ पाया था। जब किसी ने उसे "सर" की उपाधि प्रदान करने का प्रस्ताव रखा तब भी उसने यही कहा था कि, "मैं जीवन पर्यन्त साधारण माइकेल फेराडे ही रहना चाहता हूँ।"

सर चार्ल्स लॉयल



सर चार्ल्स लॉयल

सर चार्ल्स लॉयल

(१७६७-१८७५)

भूगर्भशास्त्र का संस्थापक

अन्य क्षेत्रों में हुए महापुरुषों की भाँति बहुत से महान् वैज्ञानिक भी अत्यन्त निर्धन परिवारों में ही उत्पन्न हुए थे और उन्हें अपनी परिस्थितियों से कठिन संघर्ष करना पड़ा था किन्तु चार्ल्स लॉयल का जन्म स्कॉटलैण्ड के एक सम्भ्रान्त कुल में हुआ था। उन दिनों वैसी परिस्थितियों में उत्पन्न हुए व्यक्ति को अपने जीविकोपार्जन के लिए कोई काम नहीं करना पड़ता था। चार्ल्स का पिता साहित्य-सेवा में लगा रहता था जैसे डाण्टे का अंगरेजी अनुवाद करना, क्योंकि उसे कोई आर्थिक चिन्ता तो था नहीं।

स्वभावतः बालक चार्ल्स के समुचित विद्याध्ययन का प्रबन्ध किया गया जैसा उस समय के सम्भ्रान्त व्यक्तियों की सन्तानों के लिए किया जाता था। उसे दक्षिणी इंगलैंड के ऐसे विद्यालय में भेजा गया जो विद्यार्थियों को अपने यहाँ रख कर अध्यापन का प्रबन्ध करता था। किन्तु वहाँ उसका मन बिलकुल न लगा और अन्ततः स्वास्थ्य खराब हो जाने के कारण उसे वहाँ से हट जाना पड़ा। उस समय अध्यापक ऐसा क्रूर अनुशासन चलाते थे और शिक्षा-पद्धति ऐसी नृशंस, पशुतापूर्ण और तंग करने वाली थी कि आज के लोग उस पर विश्वास न करेंगे। किन्तु चार्ल्स ने इधर-उधर करके इतनी शिक्षा प्राप्त कर ली कि जब वह उन्नीस वर्ष का हुआ तो उसे ऑक्सफ़ोर्ड विश्वविद्यालय में प्रवेश मिल गया।

उन दिनों अंगरेजी सम्भ्रान्त कुल के बालक सेना, नौ-सेना और पुरोहिती कार्य को छोड़ कर विधि-वृत्ति के क्षेत्र में भी जाने की सोचते थे। चार्ल्स का पिता उसे विधि-वृत्ति में ही लगाना चाहता था, किन्तु ऑक्सफोर्ड में तरुण व्यक्ति एक ऐसे प्राध्यापक के सम्पर्क में आ गया जो ऐसा विषय पढ़ाता था जिसे वह भूगर्भ-शास्त्र कहता था। उन दिनों इस विषय का बहुत प्रचलन न था और युवक को केवल यही विषय अत्यधिक रोचक लगा। जब चार्ल्स एक अवकाश में अपने परिवार के साथ योरोप महाद्वीप की यात्रा में गया तो वह आल्प्स पर्वत के विभिन्न भागों में बहुत घूमा और अपने पर्यटन-काल में भूतल के निर्माण के सम्बन्ध में पर्यन्वेषण करता रहा। उसे इस बात पर बड़ा आश्चर्य होता था कि ये सब बातें हुईं कैसे।

किन्तु कर्तव्य-प्रिय चार्ल्स ने पिता को प्रसन्न करने के लिए अपने विधान-ग्रन्थों का अध्ययन पुनः आरम्भ कर दिया। पर उसकी दुर्बल और क्षीण आँखों ने जवाब दे दिया और वह अपनी द्वितीय महाद्वीपीय यात्रा के लिए चल पड़ा। इस बार वह फ्रांस गया और पेरिस में वैज्ञानिक व्याख्यानों के सुनने में अपना सारा समय लगाने लगा। अन्त में उसने इतना विधान पढ़ लिया कि वह विधि-वृत्ति आरम्भ कर सकता था। किन्तु वह वैधानिक परि-पत्रों के अध्ययन की अपेक्षा शिलीभूत जीवावशेषों के पर्यन्वेषण में ही अपना अधिक समय लगाता रहा, क्योंकि उसे वैधानिक कार्यों से घृणा हो गई था। दो वर्ष पश्चात् उसने विधि-वृत्ति को सदा के लिए त्याग दिया।

उसका एक स्कॉट मित्र मरचिसन भी भूगर्भ-शास्त्र में पर्याप्त अभिरुचि लेने लगा। दोनों ने मिल कर योरोपीय महाद्वीप के एक भूतत्त्वीय अभियान के लिए योजना बनाई। विज्ञान के इतिहास में कदाचित् यह सबसे अद्भुत अभियान था, क्योंकि उस दल में केवल लॉयल और मरचिसन ही नहीं थे प्रत्युत उसमें मरचिसन की पत्नी

और उसकी दासी भी सम्मिलित थी। चारो ओर बाहर काम करने के लिए वे पेरिस से एक गाड़ी में एक साथ चले। परन्तु जिस व्यक्ति ने गाड़ी दी थी उसने उन्हें ठग लिया; क्योंकि वह प्रस्थान करने के बहुत थोड़े ही समय पश्चात् टूटने लगी और सारे मार्ग भर उसकी यही दशा रही। मरचिसन सरायों के भोजन का अभ्यस्त न था। अतः उसे सदैव अजीर्ण रहने लगा। ग्रीष्म ऋतु का अत्यधिक ताप भी उनके लिए प्रायः असह्य हो गया; क्योंकि वे स्कॉटलैण्ड की ठंडी ग्रीष्म ऋतु के अभ्यस्त थे। किन्तु नाना प्रकार की बाधाओं के रहते हुए भी मरचिसन और लॉयल किसी न किसी प्रकार प्राचीन सूखी हुई झीलों की तलों और समाप्त ज्वालामुखियों तथा शिलीभूत जीवावशेषों का अध्ययन करते ही रहे। वे प्रतिदिन प्रात काल ५-६ बजे से लेकर सूर्यास्त तक काम करते थे। परन्तु मरचिसन की पत्नी और उसकी दासी क्या करती थी, यह पता नही।

लॉयल ने अपने इंगलैण्ड प्रतिवर्तन के पश्चात् अपने महान् प्रग्रन्थ 'दि प्रिंसिपिल ऑफ जियालोजी' (The Principles of Geology) की प्रथम जिल्द को लिखना आरम्भ कर दिया। अगली वसन्त ऋतु में १८३० में यह प्रकाशित हो गया। तदनन्तर १८३२ में द्वितीय जिल्द छपी और इसके अगले वर्ष तक उक्त ग्रन्थ की अंतिम जिल्द भी प्रकाशित हो गई। ये तीनों जिल्दें यद्यपि एक ऐसे विद्याव्यसनी व्यक्ति द्वारा लिखी गई थी जिसकी अवस्था तीस वर्ष से कुछ ही अधिक थी; किन्तु प्रकाशन के थोड़े ही समय पश्चात् विज्ञान के क्षेत्र म वे अत्यन्त युगान्तरकारी सिद्ध हुईं। वस्तुत. उन्ही के प्रकाशन से भूगर्भ-शास्त्र का वास्तविक आरम्भ होता है।

ये सिद्धान्त क्या थे? लॉयल का ग्रन्थ छपने के समय अधिकाश लोग यही समझते थे कि पृथ्वी ईसा से ४००४ वर्ष पूर्व केवल एक भूसृष्टि-

विलास मात्र से रची गई थी। लामार्क ने बताया था कि शिलीभूत जीवा-वशेषों के बनने में समय की बहुसंख्यक अन्तराएं बीत चुकी होंगी; किन्तु उसकी बातों पर किसी ने कुछ ध्यान न दिया था। फिर भी उद्भिजों और जीवों के पृथ्वी में दबे हुए, विशेषतया चट्टानों की मोटी तहों और गहरी खानों में पाये जाने वाले, शिलीभूत अवशेषों की यह समस्या वैज्ञा-निकों के लिए एक विचित्र पहेली बन गई थी। साधारणतया इसका कारण लोग यही समझते थे कि जब पृथ्वी अपनी तरुणावस्था में थी तो उसमें भयंकर कम्पन हुए थे जिससे कहीं पर्वत-शृंखलाएं उत्पन्न हो गईं और कहीं गहरे समुद्र बन गये। यह सिद्धान्त इस बात को भी समझाने की चेष्टा करता था कि पृथ्वी के परिवल्क की विभिन्न तहें कहीं-कहीं इतनी अधिक मुड़ी हुई और कहीं-कहीं एक दूसरे से चिपकी हुई क्यों हैं।

यह बात प्रायः सभी को युक्ति-युक्त और सन्तोषजनक प्रति-भासित होती थी; किन्तु तरुण चार्ल्स लॉयल इस पर विश्वास न कर सका। उसने देखा कि भूतल में सदैव परिवर्तन होते रहते हैं। हाँ; इन परिवर्तनों की गति अवश्य बहुत क्रमिक होती है। भयंकर भूचाल या ज्वालामुखी के उद्गार केवल कभी-कभी होते हैं और इनका प्रभाव केवल स्थानीय होता है।

लॉयल के पूर्व स्कॉटलैण्ड में हट्टन नामक एक और व्यक्ति हुआ जिसने "पृथ्वी का इतिहास" (The History of the earth) नामक एक पुस्तक लिखी थी और यह कहा था कि हम पृथ्वी के परिवल्क में होनेवाले आधुनिक परिवर्तनों को देखकर यह अध्ययन करने की चेष्टा कर सकते हैं कि उसके भूत में क्या हुआ था। किसी ने हट्टन की बातों पर ध्यान न दिया था; किन्तु अपने घर के समीपस्थ भागों की शिलाओं का अध्ययन करने के पश्चात् लॉयल को विश्वास हो गया कि हट्टन का कथन यथार्थ था और वैज्ञानिक जगत् में

लॉयल ने सबसे महान् कार्य यह किया कि उसने बहुसंख्यक तत्वों के आधार पर दिखा दिया कि यह अनुमान सत्य था। समस्त जगत् में अर्वाचीन युग में होनेवाले विभिन्न प्रकार के परिवर्तनों का उसने बड़े अध्यवसायपूर्वक गहरा अध्ययन किया तथा जहाँ कहीं सम्भव हो सका, उसने उनके प्रभावों को भी आँकने की चेष्टा की। लॉयल की अत्यन्त बुद्धिमती सचिव अराबेला बकले ने इन शक्तियों की एक तालिका बनाई थी। बकले ने लॉयल की मृत्यु के पश्चात् स्वयं विज्ञान का एक इतिहास लिखा था। लॉयल उसकी तालिका का विवरण निम्न प्रकार से देता है—

१—जल-वृष्टि पृथ्वी का अपक्षय कैसे करती है और उसकी मिट्टी कैसे बहा ले जाती है ?

२—नील तथा मिसिसिपी जैसी महान् नदियाँ, अत्यन्त विशाल मात्रा में, अपने साथ मिट्टी बहा ले जाती हैं और समुद्र में अपने मुहानों पर उसे जमा कर देती हैं। लॉयल ने दिखाया कि भारत की गंगा नदी प्रति वर्ष समुद्र में इतनी मिट्टी जमा करती है जिससे मिस्र के ६० सबसे बड़े कोण-स्तूप या पिरामिड बनाये जा सकते हैं।

३—सोते बहुत बड़े परिमाण में चूना, लोहा तथा अन्य धातुएँ पृथ्वी-तल पर जमा करते रहते हैं।

४—ज्वार-भाटा और समुद्री-लहरें किस प्रकार कुछ स्थानों में नये भूभाग का निर्माण करती हैं और कुछ स्थानों में पुराने भूखण्डों का अपक्षय करती हैं।

इतिहास में इस बात के बहुत रोचक दृष्टान्त मिलते हैं। उदाहरण-स्वरूप १३४० में अंगरेजों और फ्रान्सीसियों की नौ-सेनाओं में स्लूज नामक इस्चुअरी में एक युद्ध हुआ था। उस समय जहाँ-जहाँ युद्ध-पोतों में लड़ाई हुई थी वहाँ अब पशु चरते हैं। इंगलिश जल-पथ की दूसरी ओर ब्रिटिश द्वीप-समूह

धीरे-धीरे वैठते जा रहे हैं। राजा आर्थर का जहाँ पहले लियोनीज साम्राज्य था, वह अव एकदम समुद्र के नोचे डूब गया है, केवल सिलो द्वीप ऊपर रह गया है। यही दशा मध्ययुगीय नगर बेञ्चेल्सिया की है। ब्राइटनबीच रानी एलिजाबेथ के समय में जहाँ था अव उससे आध मील पोछे हट गया है और ग्रीनलैण्ड विगत काल में इतनी द्रुत गति से धँसता गया है कि मछली मारने वाले ग्रामों को कई बार समुद्र से पीछे हटना पड़ा है।

५—भूचाल—जो भूखंडों में कभी-कभी व्यतिक्रम उत्पन्न करते रहते हैं। कभी किसी भाग को ऊँचा उठा देते हैं, कभी किसो भाग को नोचा।

६—वह रीति जिस प्रकार उद्‌भिज जीव कीचड़ में पड़ गये और झीलों के कीचड़, नदियों के मुहाने, रेत और दलदलों से धँस गये।

लॉयल का कहना था कि ये सभी परिवर्तनकारी शक्तियाँ अब भी काम करती जा रही हैं। वस्तुतः पृथ्वी के परिवल्क का सारा इतिहास शनैः शनैः होने वाले परिवर्तनों पर आधारभूत है जो अनुदिन सर्वत्र होते रहते हैं। किन्तु यदि यह सत्य हो तो पृथ्वी की अवस्था अत्यधिक होनी चाहिए। भूगर्भ-शास्त्र में सहस्रों वर्षों की अवधि में कोई नहीं सोचता। वहाँ तो समय की गणना लाखों और करोड़ों वर्षों में की जाती है। वर्तमान शताब्दी में विकीरणशील पदार्थों के अध्ययन द्वारा अब एक कालमापक यन्त्र की सो कल्पना की जा चुकी है, जिससे ये लम्बे-लम्बे युग अब केवल अनुमान की वस्तु नहीं रह गये हैं।

अरावेला बकले ने लॉयल के निष्कर्षों का सारांश इस संक्षिप्त वाक्य में दिया था, "पृथ्वी के परिवल्क में होनेवाले परिवर्तन वहुत प्राचोन काल को अन्तरा में उन्हीं कारणों से हुए हैं जैसे कारण अब भी क्रियाशील हैं।" एक महान् प्रकृतिशास्त्री वफन ने, जो लामार्क का बड़ा घनिष्ट मित्र था, कहा था कि हो सकता है कि पृथ्वो दस लाख वर्ष से भी अधिक पुरानी हो। इस पर

इसने और लामार्क ने साथ-साथ विमर्श किया था किन्तु उसे ऐसी मूर्खतापूर्ण बात कहने के लिए केवल गालियाँ ही सुननी पड़ी।

लॉयल की भूगर्भ शास्त्र के सिद्धान्त नामक पुस्तक के प्रकाशन के पश्चात् ही उसे बड़ी सफलता मिली। उसे सर्वोत्तम विक्रयशील कहा जा सकता था। उसके नये संस्करणों के लिए बहुत माँग होने लगी। उन माँगो को पूरी करने के लिए उसे १२ बार मुद्रित करना पड़ा। लन्दन विश्वविद्यालय में लॉयल का व्याख्यान सुनने के लिए बहुसंख्यक विद्यार्थी तो आते ही थे, साथ ही असंख्य बाहरी लोग भी एकत्र होते थे। १८४१ में उसने कनाडा और संयुक्तराष्ट्र की यात्रा की। उसने बोस्टन में १२ व्याख्यान दिये। वे इतने जनप्रिय हुए कि जिस कक्ष मे वह व्याख्यान देता था उसमें सभी उत्सुक श्रोता न समा सके जिससे उसे विवश होकर अपने व्याख्यानों की पुनरावृत्ति करनी पड़ी। इसके कुछ समय पश्चात् उसने कहा था कि उसे यह देखकर बड़ा हर्ष हुआ कि अमेरिका का साधारण जनवर्ग, शिक्षित और पर्याप्त पैसेवाले व्यक्ति भी उसके श्रोताओं में से थे।

इंगलैण्ड लौटने के पश्चात् उससे कई सार्वजनिक समितियों में कार्य करने के लिए कहा गया। उनमें से एक समिति ऐसी भी थी जो विश्वविद्यालय की शिक्षा का सुधार करने के लिए बनाई गई थी। इस समिति में उसकी नियुक्ति कदाचित् अत्यन्त आह्लादपूर्ण थी, क्योंकि उसे अपने विद्यार्थी-जीवन की बात पूर्णतया स्मरण थी जब कि कक्षाओ में पढ़ने में कुछ भी आनन्द नही आता था। इन बहुसंख्यक समितियो म उसने महारानी विक्टोरिया के पति के साथ भी काम किया। रानी के पति से उसकी व्यक्तिगत मैत्री हो गई। १८४८ मे लोयल को सर की उपाधि प्रदान की गई। यह उपाधि प्राप्त करने के लिए उसे स्कॉटलैण्ड के बालमोरल प्रासाद म जाना पड़ा, क्योंकि उस समय राज परिवार वहीं रह रहा था। १६ वर्ष पूर्व जब लॉयल ने अपना विवाह किया

था तो वह अपनी पत्नी के साथ भूतत्त्वीय यात्राओं में ही अपना विवाहोल्लास मनाता रहा। अपने जीवन की इस प्रसन्नता के अवसर पर वह रानी के पति के साथ अपने अवकाश के समय में सदैव डी नदी के तटों पर घूमा करता था। वे अपने इस पर्यटन में भूतत्त्वीय बातों का अनुसंधान करते थे और खूब छक कर साथ-साथ छुट्टी मनाते थे। कुछ काल पश्चात् इस प्रसिद्ध वैज्ञानिक की मर्यादा और बढ़ गई और वह लार्ड बना दिया गया। साधारण कुल में उत्पन्न होने वाले व्यक्ति के लिए यह सबसे बड़ी मर्यादा की बात समझी जाती थी।

चार्ल्स डारविन नामक वय में छोटे उसके एक मित्र ने जब अपनी 'जीवों की उत्पत्ति' (origin of speceis) और 'मनुष्य का विकास' (The descent of man) पुस्तकों के प्रकाशन से बहुत कीर्ति प्राप्त की तो लॉयल इस भावना से बहुत प्रभावित हुआ कि मनुष्य का विकास शनैः शनैः हुआ है। तब उसने, ६३ वर्ष की आयु में, अपने भूगर्भ-शास्त्र को छोड़ कर प्राचीन मनुष्यों के अवशेषों का अध्ययन करने के लिए कार्य आरम्भ किया। इसके परिणाम-स्वरूप उसने The antiquity of man नामक दूसरा ग्रन्थ लिखा। यह भी बड़ा जनप्रिय रहा। किन्तु चार्ल्स लॉयल ने भूगर्भ-शास्त्रों के क्षेत्र में ही सबसे महान् कार्य किया था और उसी के लिए आज भी संसार उसका स्मरण करता है। इसी कारण वह नितांत आदर-पूर्वक वेस्ट-मिनिस्टर-एबे में समाविस्थ किया गया, जहाँ केवल ब्रिटेन की महान् विभूतियाँ ही भूमिस्थ की जाती हैं।

वृद्धावस्था में उसकी आँखों की ज्योति नष्ट-सी हो गई थी किन्तु उसकी सचिव मिस बकले घण्टों उसे पुस्तकें पढ़ कर सुनाया करती या जैसा लामार्क की पुत्री लामार्क के लिए किया करती थी। जब उसकी आँखें बहुत अच्छी थीं तब भी उसे दूर की वस्तुएं इतनी कम दिखाई पड़ती थीं कि वह संलाप करते समय किसी व्यक्ति को, उसके चेहरे पर झुक कर ही, पहिचान सकता था।

किन्तु उसने न जाने कैसे शिलाओं के निर्माण तथा जीवों और उद्भिजों के शिलीभूत अवशेषों का इतना ठीक-ठीक अध्ययन किया कि वह संसार का सर्वाग्रणी भूगर्भशास्त्री बन गया। प्रतिभा और दृढ़ संकल्प की गाथा का यह एक और दृष्टान्त है कि मनुष्य अपनी बाधाओं पर कहाँ तक विजय प्राप्त कर सकता है।

चार्ल्स डारविन



चार्ल्स डारविन

चार्ल्स डारविन

(१८०६-१८८२)

जीवों की उत्पत्ति

इंगलैण्ड के श्रयूस्बरी नगर में वर्तमान नगर-संग्रहालय भवन के दूसरे किनारे पर, जहाँ पहले श्रयूस्बरी का प्रसिद्ध प्राचीन विद्यालय था, एक दाढ़ीवाले व्यक्ति की काँसे की मूर्ति बनी हुई है जिसकी मुद्रा अत्यन्त गंभीर है। यह मूर्ति श्रयूस्बरी विद्यालय के अन्यतम विख्यात पुत्र-रत्न चार्ल्स डारविन की है। अपने अधिकांश जीवन में वह बिना दाढ़ी के ही था। उसके साथ संलाप करने में बड़ा आनन्द आता था। वह बहुधा इतना कठोर न दिखाई पड़ता था जितना उसकी मूर्ति की मुद्रा से व्यक्त होता है। उन्नीसवीं शताब्दी में प्राकृतिक विज्ञानों पर डारविन का इतना अधिक प्रभाव था जितना किसी अन्य व्यक्ति का न था। तिस पर भी बहुसंख्यक जीव-शास्त्री यही घोषित करते थे कि वे शब्द उसके उस प्रभाव का वर्णन कुछ न्यून करके ही करते हैं।

अपने, वय में बड़े, भूगर्भ-शास्त्री मित्र सर चार्ल्स लॉयल की भाँति वह अच्छी आर्थिक परिस्थितियों में उत्पन्न हुआ था और उसके अनुवर्ती जीवन में उसके पिता ने भी उसको आर्थिक सहायता दी। यद्यपि उसे डाल्टन की भाँति निर्धनता का कष्ट तो न सहना पड़ा पर उसे आजीवन उससे भी भारी कठिनाई का सामना करते रहना पड़ा। मरणपर्यन्त उसका स्वास्थ्य कभी अच्छा न रहा।

यात्रा के लिए समुद्र में उतर पड़ा। वह सप्ताहों तक अन्तिम आदेश की प्रतीक्षा में पोत-स्थान में पड़ा रहा। इस सारी अन्तरा में शीत ऋतु में चलनेवाले झंझावात समुद्र की ओर से बड़ी तेजी से चलते रहे, इस कारण पोत-स्थान प्रायः अशान्त सा रहा। जैसे ही यान प्रस्थित हुआ, डारविन को समुद्री व्याधि ने आ घेरा। यह वस्तुतः यात्रा प्रारम्भ होने के बहुत पूर्व की बात है। यह कल्पना करना कठिन नहीं है कि इस अप्रिय बात को देखकर यान के कप्तान ने उसे कितने अकरुण शब्द कहे होंगे। आगे परिस्थिति और विकट थी, क्योंकि जब बीगिल अन्ततोगत्वा एकदम खुले समुद्र में चल पड़ा तो वह काग की भाँति आगे-पीछे, ऊपर-नीचे और इधर-उधर ढुलकने लगा। तदनन्तर चार्ल्स डारविन को ५ वर्षों तक सदैव रुग्णता का सामना करना पड़ा। उसे निरन्तर ऐसी समुद्री व्याधि हुई जिससे उसे कभी छुटकारा न मिल पाया। उसे इस बात से भी विशेष कष्ट उठाना पड़ा कि १८३० के आस-पास अँगरेजी यानों में जो भोजन मिलता था वह १७३० में मिलनेवाले भोजन से कुछ अच्छा न होता था। उनमें प्रायः लवण-मिश्रित गोमांस, सुअर का मांस और अन्य कड़े भोज्य पदार्थ दिये जाते थे जो विविध प्रकार के घुनों से भरे रहते थे।

इस दीर्घकालिक अस्वस्थता का परिणाम यह हुआ कि डारविन का स्वास्थ्य सदैव के लिए खराब हो गया। जैसा अपनी वृद्धावस्था में उसने स्वयं कहा था कि उस समुद्र-यात्रा के आगे आनेवाले चालीस वर्षों में उसके जीवन में एक दिन भी ऐसा न आया जब वह पूर्ण स्वस्थ रहा हो। कुछ दिनों तो वह प्रतिदिन केवल एक घंटा ही काम कर पाता था। अन्य लोग अपना कारबार छोड़कर रुग्ण जीवन बिताने लगते किन्तु चार्ल्स डारविन ऐसा व्यक्ति न था। सौभाग्यवश उसे अप [illegible] पोषण न करना पड़ता था।

उसका पिता बहुत उदार था और उसकी पत्नी (एम्मा वेजवुड जो मिट्टी के बर्तन बनाने में अत्यन्त प्रसिद्ध परिवार की लड़की थी) दोनों उसे बहुत प्रोत्साहित करते थे। चाहे कुछ भी हो, चाहे वह स्वस्थ रहा हो या रुग्ण, उसने जिस महान् कार्य का लक्ष्य अपने सम्मुख रखा था, उससे वह कभी विचलित नहीं हुआ।

ये सब कार्य उन शुभ दिनों में आरम्भ हुए जब बीगिल द्वारा यात्रा की अन्तरा में वह स्थल पर उतर गया। प्रमुख स्थल भाग से बहुत दूर स्थित द्वीपों में पाये जानेवाले उदभिजों और जीवों में उसे विशेष अभिरुचि थी। दृष्टान्तस्वरूप, दक्षिणी अमेरिका के पश्चिमी तट से कुछ दूर पर स्थित गैलापागस द्वीपों में उसने देखा कि वहाँ के पक्षियों में कुछ ऐसी विशेषताएं पाई जाती थीं जो प्रमुख स्थल भाग में उस प्रकार के पक्षियों में न थीं। उसने जब अपनी यात्रा का आरम्भ किया था तो उसका भी यही विश्वास था जैसा कि उस समय के सभी लोगों का था कि जीवों की जातियाँ निश्चित और अपरिवर्तनशील हैं। किन्तु जब उसने द्वीप के इन पक्षियों का अध्ययन किया तो उसे बिल्कुल नई बात दिखाई पड़ने लगी। सम्भवत इन द्वीपों के प्राणी, जहाँ की परिस्थितियाँ प्रमुख स्थल भाग की परिस्थितियों से भिन्न थीं, नई परिस्थितियों के कारण कुछ बदल गये हों या अपने को परिस्थितियों के अनुकूल बनाने में उनमें कुछ परिवर्तन हो गये हों और हो सकता है कि बहुत अधिक समय बीत जाने पर उनकी जाति ही एकदम बदल जाय। वह लॉयल-कृत भूतत्वीय समयों की अनन्त रूप से दीर्घकालिक अवधियों का विवरण पढ़ चुका था जिन्होंने भूतत्व में महान् परिवर्तन किये थे। उन दीर्घकालिक युगों ने प्राणियों के भी जीवन में महान् परिवर्तन क्या नहीं किया? यह अतिशय आह्लादकर भावना थी। डारविन ने सोचा, "हो सकता है मैं कोई अत्यन्त महान् आविष्कार करने जा रहा हूँ। इसके विषय में कुछ कहने के पूर्व यह आवश्यक है कि मैं पर्याप्त प्रमाण एकत्र कर लूँ जिससे उसके विषय में कोई कुछ सन्देह न कर सके।"

अतएव इस रुग्ण-से रहनेवाले व्यक्ति ने अपने जीवन के अगले बीस वर्षों का सारा समय और शक्ति अपने सिद्धान्त के प्रतिपादन के लिए प्रमाण एकत्र करने में लगा दिया।

परन्तु बीस वर्ष के पश्चात् एक दिन डारविन और उसकी पत्नी पर चिन्ता और दु:ख का पहाड़ सा टूट पड़ा। उनके चारों बच्चे भयंकर रूप से लाल ज्वर से पीड़ित हो गये। वस्तुतः बालक चार्ल्स मर रहा था। उस अशुभ दिन एक अज्ञात तरुण प्रकृति-शास्त्री अल्फ्रेड रसेल वैलेस का एक पत्र मिला जो हिन्द महासागर के एक अत्यन्त छोटे द्वीप से लिखा गया था। उसने अपनी आयु से बड़े व्यक्ति के पास एक नई बात लिखकर भेजी थी जिसका पता उसे तब चला था जब वह कर्क रेखा पर स्थित प्रदेशों में आनेवाले ज्वर में पड़ा हुआ था। जब डारविन ने वह पत्र पढ़ा तो उसने देखा कि वैलेस की यह भावना प्राकृतिक चयन द्वारा विकासवाद की थी जिस सिद्धान्त को डारविन स्वयं पिछले २० वर्षों से बड़ा परिश्रम कर गुप्त रूप से सिद्ध करने में लगा हुआ था। अब वह बड़ी विचित्र परिस्थिति में पड़ गया कि अब क्या होगा। उसके हृदय में सर्वप्रथम यह बात आई कि उस बात को ढूंढ़ने का सारा श्रेय तरुण वैलेस को प्रदान कर दिया जाय। उसने इस समस्या को अपने दो बड़े अच्छे मित्रों के सम्मुख रखा जिन्हें उसकी खोजों का रहस्य पहले से विदित था। उनमें एक उद्भिजशास्त्री हूकर था और दूसरा चार्ल्स लॉयल। उन्होंने आग्रह किया कि डारविन ने प्रमाणों को एकत्र करने में जो इतने वर्ष लगाये हैं, उन्हें व्यर्थ न जाने दे। अन्ततः सबने यह निर्णय किया कि हूकर और लॉयल उस सिद्धान्त को डारविन और वैलेस द्वारा संयुक्त रूप से प्रतिपादित घोषित करें। इस प्रकार इस खोज का विवरण १ जुलाई सन् १८५८ को लिनियन सोसाइटी के सम्मुख पढ़ा गया।

आइजक न्यूटन को भी कभी-कभी छोटे-छोटे व्यक्तियों से तङ्ग होना

पड़ता था; क्योंकि वे उसके आविष्कारों के श्रेय को चुराने का प्रयत्न करते थे। परन्तु डारविन और वैलेस की बात उससे बिल्कुल भिन्न है। वह दोनो के महान् सौजन्य के अत्यन्त उदात्त दृष्टान्त के रूप में सतत चमकती रहेगी। जब वैलेस को वस्तु-स्थिति विदित हुई तो उसने यह घोषित किया कि वह केवल इतना ही चाहता था कि लोग उसे डारविन का एक शिष्य समझें। उसने कहा था, "मैं सोचता हूँ कि इस खोज का श्रेय दोनो को उसी अनुपात में मिलना चाहिए जिस अनुपात में प्रत्येक ने उस पर समय लगाया है। मैंने प्राकृतिक चयन की भावना का अनुसंधान करने में ६ सप्ताह लगाये हैं किन्तु डारविन ने उस पर २० से अधिक वर्ष लगाये हैं।" जहाँ तक डारविन का सम्बन्ध था, वह भी वैलेस को पूर्ण श्रेय या आदर देने के लिए कब उत्सुक न था?

अगले वर्ष अर्थात् १८५९ में डारविन की दी ओरिजिन ऑफ स्पिशीज नामक पुस्तक प्रकाशित हुई। यह ग्रन्थ लगभग समग्र जीवन के परिश्रम और चिन्तन के आधार पर लिखा गया था। उसके छपते ही चारो ओर सनसनी फैल गई। बहुत से लोग सोचते हैं कि डारविन ने ही सर्वप्रथम विकासवाद का प्रतिपादन किया था अर्थात् यह सिद्धान्त कि प्राणियों का विकास अत्यन्त साधारण रूप से हुआ है। जैसे अत्यन्त पुरानी चट्टानों में दबे हुए उद्भिजों और जीवों के ऐसे शिलीभूत अवशेषों में पाये जाते हैं, जिनमें कभी प्राण होने के प्रमाण मिलते हैं और आधुनिक अत्यन्त सुविकसित अवयवियों की उत्पत्ति भी उसी शृङ्खला में हुई है। किन्तु किसी ने यह भी दिखाया है कि डारविन के पहले प्राचीन यूनान के एनेक्सागोरस और इमपेडोक्लीज से लेकर लामार्क तक ऐसे सैकड़ों व्यक्ति हुए थे जो विकासवाद के सिद्धान्त की बात कह गये थे। जैसे लामार्क का "पहला महान् विकासवादी" कहा गया है और डारविन के पितामह चिकित्सक एरेस्मस डारविन ने स्वयं लामार्क की कुछ बातें वंशानुगत विशेषताओं के संबंध

में ढूंढ़ निकाली थीं, यद्यपि लामार्क को यह कभी विदित न हो पाया था। दी ओरिजिन ऑफ स्पिशीज पुस्तक ने सबसे महान् कार्य यह किया कि उसने प्रमाणों द्वारा यह दिखाया कि विकास हुआ कैसे। इसे डारविन ने प्राकृतिक चयन के नाम से अभिहित किया था और उसके मित्र हरबर्ट स्पेन्सर ने उसे केवल योग्यतम प्राणियों का रक्षण कहा था।

उपर्युक्त सिद्धान्त के अर्थ को थोड़े शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है : प्राणधारी जीव इस द्रुत गति से बढ़ते हैं कि उनमें सभी जीवित नहीं रह सकते। सभी के लिए न तो खाद्य पदार्थ होता है और न रहने के लिए स्थान। इसके परिणामस्वरूप उनमें से बहुसंख्यक को तो शैशवावस्था में ही कालकवलित हो जाना पड़ता है। जैसे टोड प्रतिवर्ष २० हजार अण्डे देता है जिसमें अन्त में केवल दो ही विकसित हो पाते हैं। वे जीव जो बच जाते हैं और जिनकी पीढ़ियाँ चलती रहती हैं वे ऐसे जीव होते हैं जो अपनी विशिष्ट परिस्थितियों में रहने के लिए सबसे अधिक उपयुक्त होते हैं।

यह भी सर्वविदित ही है कि कोई दो अवयवीय (Organism) कभी सर्वथा एक सदृश नहीं होते। किसी सन्तान में कोई ऐसी विशेषता आ जाती है जो उसे अपनी परिस्थितियों से लड़ने-झगड़ने में अधिक योग्य बना देती है और ये विशेषताएं अगली पीढ़ियों में भा पहुँच जाती हैं। जब कोई अवयवीय अपने जननी-जनक से कुछ भिन्न हो जाता है तो वह जाति-भिन्न (Sporc) कहलाता है। डारविन का अनुमान था कि समय पाकर इन जाति-भिन्नों से नई जाति की सृष्टि होती है और यद्यपि वह लामार्क की बात से पूर्णतया सहमत न था परन्तु यह स्वीकार करता था कि हो सकता है कि विकास में वंशानुगत विशेषताओं का क्रम चलता हो। किन्तु उसका कहना था कि इनमें प्राकृतिक चयन का सिद्धान्त सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। डारविन ने वैज्ञानिक क्षेत्र में सबसे महान् कार्य यह किया कि वह विकासवाद के सिद्धान्त का पहला प्रति-

पादक था जिसने बहुसंख्यक तथ्यों को एकत्र किया, उनका वर्गीकरण किया और उन्हें ऐसा प्रस्तुत किया कि जिससे विकासवाद के सिद्धान्त को खड़े होने के लिए एक आधार भूमि प्राप्त हो गई।

स्वभावतः दि ओरिजिन ऑफ स्पिशीज नामक पुस्तक के प्रकाशन के पश्चात् लगभग जो सौ वर्ष बीते हैं उनमें वैज्ञानिकों ने वंशानुगत विशेषताओं के सम्बन्ध में बहुत-सी नई बातें मालूम कर ली हैं। उदाहरणस्वरूप यदि डारविन को ऑस्ट्रिया के ईसाई साधु ग्रेगरमेण्डेल के उस विशिष्ट खोजपूर्ण लेख की बात विदित हुई होती, जो उसने दी ओरिजिन ऑफ स्पिशीज के प्रकाशन के कुछ ही वर्षों बाद लिखा था, तो उसने उससे अवश्य लाभ उठाया होता। इसी प्रकार डी ब्रीज नामक एक डच उद्भिज-शास्त्री ने भी जाति-भिन्नों (Spores) के विषय में पर्याप्त अन्वेषण किये। यदि डारविन ने अपने समय में उन सभी बातों को जाना होता तो हो सकता है कि उसने उससे कुछ और नई बातें निकाली होतीं।

कुछ भी हो, अब हम लोगों को इस बात का अनुभव हो गया है कि प्राकृतिक चयन यद्यपि महत्त्वपूर्ण है किन्तु वह पृथ्वी के प्राणधारियों की उत्पत्ति का कार्य-कारण सम्यक्रूप से नहीं समझा पाता। विकासवाद का पूरा ढांचा अब भी एक महान् पहेली है। विज्ञान के क्षेत्र का प्रत्येक व्यक्ति विकासवाद को स्वीकार करता है किन्तु वह सब है कैसे? इसका कोई उत्तर नहीं है। सम्भव है, वंशानुगत विशेषताओंवाली लामार्क की भावना सत्य के अधिक समीप हो, जितना कि आधुनिक वैज्ञानिक उसे स्वीकार करने के लिए सहमत हों। वस्तु-स्थिति जो भी हो, लगता है बहुत-सी ऐसी बातें होंगी जिनका अभी अनुसन्धान नहीं हो सका है। उनको सम्पूर्ण रूप से जानने के लिए उन अज्ञात बातों का अनुसंधान आवश्यक है। जीवन की उत्पत्ति कैसे होती है और उसका स्वरूप क्या है? ये बातें अब भी वैसी ही रहस्यपूर्ण

वनी हुई हैं जैसी वे उस समय थीं जब वैवीलोनिया और मिस्रवासियों ने तारों का देखना आरंभ किया था और उन्हें यह आश्चर्य होता था कि वे क्या हैं। इसके अतिरिक्त उस मार्ग में और भी बहुत-सी असंख्य बातें हैं।

दुर्भाग्यवश दी ओरिजिन ऑफ स्पिशीज और उसका पूरक डारविन कृत दी डोसेन्ट ऑफ मैन नामक ग्रन्थों का, धार्मिक आधार पर, कुछ लोगों ने बहुत विरोध करना आरम्भ कर दिया। (कुछ सीमा तक ऐसी ही बात तब भी हुई थी जव लॉयल का भूगर्भशास्त्र-सम्बन्धी ग्रन्थ प्रकाशित हुआ था।) तत्पश्चात् व्यर्थ वड़ा खेदकर वाद-विवाद चलता रहा। जब डारविन पर आक्रमण किये जाते थे तो वह उनका कोई प्रत्युत्तर न देता था यद्यपि उनसे उसके हृदय को वड़ी चोट पहुँचती थी, क्योंकि वे एकदम अनुचित होते थे। उसके विरोधी अपने धर्मोत्साह से ऐसे अन्धे हो जाते थे कि वे यह भूल जाते थे कि एक सहस्र वर्ष पूर्व महान् सन्त ऑगस्टाइन ने अपने अनुयायियों से कहा था, "पृथ्वी, आकाश और इस जगत् के अन्य प्रश्नों को तर्क और निरीक्षण के लिए छोड़ दो" अर्थात् प्रकृति के सम्वन्ध में कोई वास्तविक सत्य कभी धर्म के विरुद्ध नहीं हो सकता।

परन्तु दुर्भाग्यवश यह सत्य है, कि जब से डारविन की पुस्तकें प्रकाशित हुई है तव से वहुसंख्यक वैज्ञानिकों और उनके शिष्यों ने उन्हें ईश्वर के अस्तित्व को अस्वीकार करने का बहाना बना लिया है। वे चट से इस अवैज्ञानिक निष्कर्ष पर पहुँच जाते हैं कि कहीं से किसी प्रकार अणु और तारे टपक पड़े और ब्रह्माण्ड टाप्सी घास की भाँति स्वयं अपने से बिना किसी स्रष्टा के उत्पन्न हो गया। डारविन ने स्वयं अपने एक पत्र में कहा था, "मैं कभी नास्तिक नहीं रहा हूँ। मैं कह सकता हूँ कि मुझे यह असम्भव सा प्रतीत होता है कि इतना ऐश्वर्यशाली और विस्मयावह व्रह्माण्ड, जिसमें हम जैसे चेतन जीव रहते हैं, केवल संयोग से उत्पन्न हुआ होगा। यही वह सवसे महान् तर्क है जिसके आधार पर मुझे ईश्वर के अस्तित्व पर विश्वास करना पड़ता है।"

यद्यपि सज्जन और दयालु डार्विन पर नाना प्रकार से आक्रमण किये गये और उस पर बहुत कीचड़ उछाला गया, और उसने यह इच्छा प्रकट की थी कि उसे उस छोटे ग्राम के गिरजे के प्रांगण में ही समाधिस्थ किया जाय जहाँ उसने अनेक वर्षों में अपना घर बना लिया था; किन्तु उसके देशवासियों ने इस बात पर आग्रह किया कि उसके समाधिस्थ करने के लिए वेस्ट मिनिस्टर एबे ही उपयुक्त स्थान है और वह परम सम्मानपूर्वक अपने सर्वोत्तम मित्र चार्ल्स लॉयल की समाधि के समीप ही समाधिस्थ किया गया।



ग्रेगर जॉन मेण्डेल



ग्रेगर जॉन मेण्डेल

ग्रेगर जॉन मेण्डेल

(१८२२ १८८४)

वंशानुगमन के नियम

यह एक निर्धन कृषक बालक की कहानी है जो समय पाकर विख्यात वैज्ञानिक हुआ। वह एक छोटे ग्राम में पैदा हुआ था जो पहले आस्ट्रिया के बोहेमिया प्रान्त में स्थित था, किन्तु अब वह चेकोस्लोवाकिया में है। अपनी बाल्यावस्था में वह फल के वृक्षों, मधुमक्खी के छत्तों और साग भाजी के उपवन की रखवाली में अपने पिता की सहायता किया करता था। किन्तु वह कृषक नहीं बनना चाहता था। उसकी पढ़ने की उत्कट इच्छा थी और उसने पुस्तकों के पढ़ने में अपनी प्रखर बुद्धि का भी परिचय दिया। परन्तु उन दिनों आस्ट्रिया के किसी कृषक बालक के लिए विद्याध्ययन करना बड़ा कठिन होता था। उसमें रुपये व्यय होते थे और मेण्डेल की कुटिया में रुपया का अभाव था।

सौभाग्यवश जान मेण्डेल के एक छोटी बहन थी जो यह भली भाँति समझती थी कि उसके भाई की शिक्षा-दीक्षा अत्यन्त अपेक्षित है। उसने इस कार्य में भाई को बड़ी सहायता दी—अपने दहेज का सारा रुपया उसे दे डाला। उन दिनों लड़कियों के पिता अपनी प्रत्येक पुत्री के विवाह के लिए एक निश्चित धन-राशि पृथक् कर देते थे। क्योंकि जिस कन्या के विवाह के लिए रुपया न होता था उसका विवाह होना प्राय असम्भव ही होता था, चाहे वह



ग्रेगर जॉन मेण्डेल

ग्रेगर जॉन मेण्डेल

(१८२२-१८८४)

वंशानुगमन के नियम

यह एक निर्धन कृषक बालक का कहानी है जो समय पाकर विख्यात वैज्ञानिक हुआ। वह एक छोटे ग्राम में पैदा हुआ था जो पहले ऑस्ट्रिया के बोहेमिया प्रान्त में स्थित था, किन्तु अब वह चेकोस्लोवाकिया में है। अपना बाल्यावस्था में वह फल के वृक्षों, मधुमक्खी के छत्तों और साग-भाजी के उपवन की रखवाली में अपने पिता की सहायता किया करता था। किन्तु वह कृषक नही बनना चाहता था। उसको पढ़ने की उत्कट इच्छा थी और उसने पुस्तकों के पढ़ने में अपनी प्रखर बुद्धि का भी परिचय दिया। परन्तु उन दिनो ऑस्ट्रिया के किसी कृषक बालक के लिए विद्याध्ययन करना बड़ा कठिन होता था। उसमे रुपये व्यय होते थे और मेण्डेल की कुटिया में रुपयो का अभाव था।

सौभाग्यवश जॉन मेण्डेल के एक छोटी बहन थी जो यह भली भाँति समझती थी कि उसके भाई की शिक्षा-दीक्षा अत्यन्त अपेक्षित है। उसने इस कार्य में भाई को बड़ी सहायता दी—अपने दहेज का सारा रुपया उसे दे डाला। उन दिनों लड़कियों के पिता अपनी प्रत्येक पुत्री के विवाह के लिए एक निश्चित धन-राशि पृथक् कर देते थे। क्योंकि जिस कन्या के विवाह के लिए रुपया न होता था उसका विवाह होना प्राय असम्भव ही होता था, चाहे वह

अनन्य सुन्दरी ही क्यों न हो। जोहन ने बड़ी कृतज्ञता के साथ उस दहेज के रुपये को स्वीकार कर लिया और यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि उसने उन रुपयों को उसे चुका भी दिया। अन्त में उसकी बहन का विवाह तो हो ही गया और उसके तीनों पुत्रों को मामा जॉन के अनुग्रह के कारण अच्छी शिक्षा भी मिली।

इस अन्तरा में उसने समीपस्थ ब्रून नगर में ऑगस्टाइन के अनुयायी भिक्षुओं के एक मठ में प्रवेश किया। वहाँ उसका मठ का नाम ग्रेगर रखा गया। साधारणतया वह इसी नाम से आज भी सर्वविदित है। यहाँ उसका जीवन अत्यन्त आनन्दमय रहा, क्योंकि यहाँ उसे बहुत-से अच्छे मित्र मिले और उसे ऐसा सुअवसर मिला जिसमें वह जी भर कर अध्ययन कर सका। १८४७ में वह पुरोहित नियुक्त किया गया। उसने वैज्ञानिक अध्ययन में इतनी अभिरुचि दिखाई कि उसे मठ के रुपये से वियना के विश्वविद्यालय में अध्ययन के लिए भेजा गया। वहाँ १८५१ से १८५३ तक उसने प्राकृतिक विज्ञानों का विशेष अध्ययन किया। ब्रून में निवर्तन के पश्चात् वह इस नगर के राजकीय विद्यालय में भौतिक विज्ञान का प्राध्यापक हो गया। उसे अध्यापन में आनन्द आता था। वह अपनी कक्षाओं के छात्रों से प्रेम करता था और वे भी उससे अनुराग रखते थे।

मठ में उसके पास एक बड़ा उपवन था। उसे एक विचार सूझा कि इस उपवन के एक भाग को पृथक् करा लिया जाय जिसमें वह पौधों की संकर उत्पत्ति 'के विषय में प्रयोग किया करें। ऐसा करने के लिए अनुमति प्राप्त करने में उसे कोई कठिनाई नहीं हुई। तदनन्तर वह उपवन में ही जुटा रहता था। उसके साथी भिक्षु इस विषय में उसकी खिल्लियाँ उड़ाया करते थे और आपस में बातचीत किया करते थे कि वह वहाँ बैठा-बैठा क्या किया करता है। एक कहता था, "मेरी समझ में नहीं

आता कि भाई ग्रेगर ने जो मटर के पौधे लगा रक्खे हैं उनसे वह क्या करता है ?" "वह उन्हें खाना भी नहीं और किसी दूसरे को छूने भी नहीं देता।" उसकी इस प्रवृत्ति को लोग बड़ी विचित्र बात समझते थे। परन्तु वह वर्षों बड़ी तत्परता और मनोयोगपूर्वक अपने कार्य में लगा रहा।

उस समय किसी ने इस बात का स्वप्न भी न देखा था कि यह दयालु अध्यापक ऐसी बातें निकालने में लगा हुआ था, जो नये विज्ञान की सृष्टि करनेवाली थी। मठ के उपवन में वह जो कार्य कर रहा था, उसे करने के पहले किसी ने सोचा भी नहीं था। वह केवल एक विशेषता को जानने के लिए—पौधों के संकर उत्पादन के प्रभाव को जानने के लिए बड़े एकाग्र चित्त से लगा हुआ था। १८५६ से १८६४ तक उसने १० सहस्र नमूनों की जाँच की। इसके लिए उसने उपवन में होनेवाली मटर चुनी थी। क्योंकि उसकी जीवनावधि छोटी होती है और उसकी दूसरों से भिन्न बातें बड़ी सरलता से समझी जा सकती थी। यहाँ दो विभिन्न जातियों की मटरों के संकर उत्पादन में वह एक के पराग को दूसरे के गर्भकेसर पर गिराया करता था।

दृष्टान्तस्वरूप मेण्डेल ने केवल वर्ण के लिए बहुसंख्यक प्रयोग किये। वह लाल या बैगनी रंग के फूलोंवाले पौधे का श्वेत फूल के पौधे से संकर किया करता था। एक प्रयोग में उसने एक चिकने बीज के पौधे का एक झुर्री पड़े हुए बीजवाले पौधे के साथ संकर किया। कभी-कभी वह वर्णों और बीजों दोनों का संकर करता था। एक दूसरी प्रयोग-माला में उसने नाटे पौधों का लम्बे पौधों से संकर किया। उसने अपने निष्कर्ष को पूर्ण निश्चित करने के लिए इस प्रयोग को ३७ बार दुहराया।

उसने दो विभिन्न जाति की मटरों के संकर करने के प्रयोग को नितान्त सावधानी से सम्पादित किया और उनके आधार पर वंशानुगमन के कुछ नियम निकाले। ये इतने जटिल हैं कि संक्षेप में भी उनका यहाँ विवरण देना असम्भव

है। किन्तु मेण्डेल ने अपने प्रयोगों को बार-बार दुहराकर उन प्रयोगों को सिद्ध किया था। वह इस बात को भली भाँति समझता था कि वे वस्तुतः नवीन आविष्कार थे और उसे इस बात से अपार हर्ष होता था कि उसे सर्वथा एक नूतन विज्ञान के क्षेत्र में सफलता मिली है। १८६५ में उसने स्थानीय वैज्ञानिक सभा के समक्ष उस विषय पर एक निबन्ध पढ़ा। उसने अपने श्रोताओं को यह बताने की चेष्टा की कि उसने अपने उपवन में क्या किया है और किन नये तथ्यों का पता लगाया है। उक्त सभा के सदस्यों ने बड़ी शिष्टतापूर्वक उसकी बातों को सुना तो अवश्य किन्तु उनकी समझ में तनिक भी न आया कि वह क्या कर रहा था। उसके समय में वंशानुगमन के सम्बन्ध में लोगों को भावनाएँ मिली-जुली और परस्पर-विरोधी थीं। यह बात बड़े-बड़े जीव-शास्त्रियों के सम्बन्ध में भी सत्य थी। उसके श्रोताओं में उस दिन इस बात का कोई भी अनुभव न कर सका किन्तु मेण्डेल ने अपने निबन्ध में एक सर्वथा नूतन विज्ञान की नींव डाली थी जो आजकल प्रजनन विज्ञान (Genetics) कहलाता है।

मेण्डेल के सिद्धान्त को अत्यन्त साधारण शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है। उसने दिखाया कि किसी पौधे का दो विभिन्न जातियों को संकर करने में ऐसा होता था कि सन्तानों में एक विशेषता अन्य विशेषताओं से बहुत अधिक मात्रा में पाई जाती थी। उदाहरणार्थ, बैंगनी या लाल रंग के फूलोंवाले पौधों को श्वेत फूलोंवाले पौधों के साथ संकर करते हुए उसे विदित हुआ कि अगली पीढ़ी में लाल और बैंगनी रंगवाले फूलों की संख्या श्वेत फूलों से कहीं अधिक थी। चिकने बीजवाली मटरों को जब उसने झुर्री पड़े हुए बीजोंवाली मटरों से संकर किया तो उसे विदित हुआ कि चिकने बीज वाली मटर के पौधे संख्या में अधिक थे। इसी प्रकार जब लम्बे और नाटे पौधों का संकर किया गया तब देखा गया कि लम्बे पौधे सबसे अधिक थे। इन्हें उसने प्रमुख विशेष-

ताओं (Dominant) के नाम से पुकारा। जो गुण संख्याओं में अधिक न ठहर सके उन्हें उसने "प्रच्छन्न-शील" (Recessive) की संज्ञा दी; क्योंकि सन्तानों में वे अन्य गुणों की अपेक्षा उत्तरोत्तर कम होते जाते थे। उसने इस दिशा में और भी बहुत-सी नई बातों का पता लगाया तथा प्रमुख और प्रच्छन्नशील प्रवृत्तियों में आगे आनेवाली विभिन्न पीढ़ियों में ठीक-ठीक क्या अनुपात होता है, इसका भी उसने पता लगा लिया।

मेण्डेल ने अपने साथी क्लब के सदस्यों के समक्ष जो विवरण पढ़ा था, हो सकता है वह अतिविशेष ज्ञान की अपेक्षा करता हो। उसने एक सार्वजनिक व्याख्यान में दूसरी बार अपने कार्यों के प्रस्तुत करने की चेष्टा की, किन्तु इस प्रयत्न में भी उसे पहले से कुछ अधिक सफलता नहीं मिली। प्रायः किसी की समझ में यह बात न आती थी कि वह इतनी सब बातें किस विषय में कह रहा था। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि इससे मेण्डेल अत्यन्त हतोत्साह हुआ। फिर भी उस समय उसके कहे हुए वे सिद्धान्त अब भी सत्य हैं और नवीन प्रजनन-विज्ञान उन्हीं पर आधारित है। यह विज्ञान वंशानुगत विशेषताओं के सिद्धान्त से सम्बन्ध रखता है। उसने घोषित किया था कि प्रत्येक उद्भिज या प्राणी में वंशानुगत विशेषताएँ होती हैं। ये विशेषताएँ "कुछ अदृश्य विशिष्ट वंशानुगत कणों" द्वारा अगली पीढ़ियों में भी पहुँच जाती हैं। आजकल "कणों" के स्थान में इन्हें जननि-अणु (Genes) के नाम से अभिहित किया जाता है, किन्तु नाम से कोई अन्तर नहीं पड़ता। मेण्डेल का कथन सत्य था। किसी वैज्ञानिक ने कहा है कि उसका कथन "उद्भिज और प्राणि-जगत् का एक प्रकार का परमाणु सिद्धान्त" है।

मेण्डेल के सिद्धान्त का मनुष्यों की वंशानुगत विशेषताओं से सम्बन्ध में जो प्रभाव होता है वह सबसे अधिक रोचक है। यह यथार्थ है कि

मनुष्यों के सम्बन्ध में उस प्रकार से प्रयोग नहीं किये जा सकते जैसे उपवन की मटरों के सम्बन्ध में। किन्तु वंशानुगमन की कुछ मानव-विशेषताओं का अध्ययन किया गया है। दृष्टान्तस्वरूप, मनुष्यों में प्रमुखतया दो वर्णों की आँखें पाई जाती हैं, भूरी या नीली। आँखों के अन्य सभी भेद उनके वीच में आते हैं। यदि तारा-मण्डल का ऊपरी तल एकदम भूरे वर्ण का होता है तो आँखें गहरे भूरे या काले रंग की कही जाती हैं। जव उनमें भूरा रंग नहीं होता तो आँखें नीली होती हैं। यदि उनमें तनिक भी भूरा रंग पाया जाता है तो आँखें लालिमा लिये भूरे रंग की कही जाती हैं। यह देखा गया है कि भूरी आँखें प्रमुख प्रवृत्ति हैं और नीली आँखें क्रमाभिन्यूनशील। अर्थात् जव भूरी आँखोंवाले और नीली आँखोंवाले व्यक्ति परस्पर विवाह करते हैं और उनकी सन्तानें उत्पन्न होती हैं तो उनकी नीली आँखें शनैः-शनैः लुप्त होने लगती हैं और उनके स्थान में भूरी आँखें अधिक दिखाई देती हैं।

जिस समय मेण्डेल अपने मठ के उपवन में मटरों पर वड़े धैर्य के साथ अपना प्रयोग कर रहा था उसी समय डारविन की 'ओरिजिन ऑफ स्पिशीज' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक में उसने विकासवाद के क्षेत्र में सवसे वड़ा काम यह किया था कि उसने जिस वात को प्राकृतिक चयन कहा था वह वहुत महत्त्वपूर्ण अपिकरण था और इसी के लिए उसने इसमें प्रमाण दिये थे। यदि डारविन को मेण्डेल के अनुसन्धान की वातें विदित रही होतीं तो उसे वड़ी सहायता मिली होती। यदि लामार्क भी ७५ वर्ष वाद हुआ होता तो उसने भी मेण्डेल के अनुसन्धानों का वड़ी उत्सुकतापूर्वक अध्ययन किया होता। किन्तु उस समय उसके कार्यों पर किसी ने तनिक भी ध्यान न दिया और न वह किसी की समझ में ही आया। उसका निवन्ध अन्य निवन्धों के साथ किसी कोने में डाल दिया गया जिसे किसी ने भी पढ़ने का कष्ट न उठाया।

यद्यपि लामार्क को भी कभी कोई सम्मान नहीं मिला और लोग उसका भी उपहास ही किया करते थे, किन्तु उसकी पुत्री उसे सदैव यह कह कर सान्त्वना दिया करती थी कि "आगे आनेवाली पीढ़ियाँ आपको स्मरण करेंगी।" परन्तु मेण्डेल का कोई ऐसा साथी न था जो उसे इस प्रकार सान्त्वना देता। वह स्वयं अपने को समझा कर अपने में किसी प्रकार साहस भरा करता था। जब विज्ञान के क्षेत्र में उसके कार्यों के सम्बन्ध में उससे कोई कुछ पूछता था तो वह मृदु मुस्कराहट से कहा करता था, "मेरा समय आवेगा।" परन्तु वह उस समय को देखने के लिए जीवित न रहा।

१८६८ में वह ब्रून के मठ का प्रधान धर्माधिकारी (Abbot) बना दिया गया। तत्पश्चात् उसके मठ सम्बन्धी कार्यों से उसके अनुसन्धानों में बाधा पड़ने लगी। जब कभी उसे मठ के कार्यों से थोड़ा-बहुत अवकाश मिल पाता था तो वह उसे विज्ञान की अन्य समस्याओं में लगाने लगा, यथा—सूर्य के धब्बे और ऋतु-परिवर्तन। किन्तु उसका स्वास्थ्य भी उसका साथ छोड़ने लगा। इसी समय सबसे अधिक दुःखद बात यह हुई कि वह ऑस्ट्रियन सरकार से चलने वाले एक झगड़े में फँस गया। ऑस्ट्रियन सरकार ने मठ पर एक विशेष कर लगाना चाहा, जैसा पहले कभी न हुआ था। मठ के अध्यक्ष के रूप में मेण्डेल ने उसका उग्र विरोध किया। इस कारण उसे विज्ञान के लिए अब बहुत कम समय मिल पाता था और उसके जीवन के अन्तिम वर्ष अत्यन्त विषादपूर्ण हो गये थे। केवल शतरंज के खेल में ही उसे अपनी रचना और चिन्ताओं के बीच कुछ सान्त्वना मिल पाती थी। शतरंज खेलते समय वह अपनी सारी चिन्ताओं और रुग्णता को भूल जाता था।

जब उसका देहान्त हुआ तो मठ के उसके साथी और उसके नगर के जानने वाले परिचित व्यक्ति समझते थे कि प्यारा एबट ग्रेगर मेण्डेल, जो दोनों के प्रति दया रखता था और जिसे उपवन में काम करने में बड़ा आनन्द आता

था, इस संसार से चल बसा। इसके अतिरिक्त उसके सम्बन्ध में उनकी कोई धारणा न थी। वस्तुतः मेण्डेल अपनी मृत्यु के पश्चात् १६ वर्ष तक अर्थात् १९०० तक विज्ञान के क्षेत्र में बिलकुल अज्ञात पड़ा रहा जब तक कि यूरोप के ३ वैज्ञानिकों ने लगभग एक ही समय में मेण्डेल के, न जाने कब के भूले हुए, खोज-पूर्ण निबन्ध को ढूंढ़ निकाला जिसे उसने १८६५ में अपने मित्रों के सम्मुख पढ़ा था। उन वैज्ञानिकों ने सोचा, "इसमें अवश्य कोई बड़ी बात है" और उन्होंने उसे संसार के समक्ष प्रस्तुत किया।

तभी से मेंडेल का महान् कार्य संसार के समक्ष आया और उसी समय नूतन प्रजनन विज्ञान का जन्म हुआ। किन्तु इतना समय बीतने के पश्चात् उसे जो कीर्ति प्राप्त हुई उसका कारण विश्वविद्यालयों के व्यक्ति और जीव-विज्ञान की प्रयोगशालाओं में अनुसंधान करनेवाले लोग थे। वह जिस नगर में पैदा हुआ था उस नगर के लोग भी यह बात न जानते थे। जेकोस्लोवाकिया का एक वैज्ञानिक थोड़े ही समय पूर्व मेंडेल पर एक व्याख्यान देने ब्रून्स गया था। उसने एक कहानी का वर्णन इस प्रकार किया है—वह दो पुराने नागरिकों के समीप खड़ा था जो एक पुस्तक की दुकान की खिड़की के सामने खड़े होकर बातचीत कर रहे थे। वहां मेण्डेल का एक चित्र लटक रहा था जिसके सम्बन्ध में उस दिन सन्ध्या समय व्याख्यान दिया जाने वाला था।

एक कह रहा था, "यह मेण्डेल है कौन—आजकल उसके सम्बन्ध में लोग सदैव बात किया करते हैं।"

उसके साथी ने उत्तर दिया, "आप नहीं जानते—यह वही व्यक्ति है जिसने ब्रून का नगर उत्तराधिकार में छोड़ा है।"

उक्त मनुष्य ने केवल वंशानुगमन शब्द मात्र सुन रखा था और उसका अर्थ वह केवल उत्तराधिकार समझता था।

अवयवियों (Organisms) को—विशेषतया उद्भिजों की प्रमुख और

क्रमाभिन्यूनशोत्र प्रवृत्तियों के सिद्धान्तों का पता लगाना विशुद्ध विज्ञान की एक और बात के सदृश माना जा सकता है। किन्तु उससे व्यावहारिक उपादेयता की बहुत-सी बातें निकली हैं। उदाहरणार्थ, मेंडेल के सिद्धान्तों के आधार पर विशिष्ट प्रकार के गेहूँ उत्पन्न किये गये हैं जो विभिन्न देशों की विभिन्न जलवायु में सरलता से उग सकते हैं। उसके सिद्धान्तों के आधार पर पशु-वर्गों में भी पर्याप्त सुधार किया गया है। हमारे लूथर बरबैङ्क ने उद्भिदों के क्षेत्र में इन्द्रजाल सदृश जो कार्य दिखाया है वह इस भिक्षु के आविष्कारों के ज्ञान के बिना सम्भव न हो पाया होता—जिसने अपने उपवन में ८ वर्षों तक मटरों के सम्बन्ध में प्रयोग करने में अनन्त धैर्य के साथ अथक परिश्रम किया था किन्तु जिसे अपने कार्यों के लिए मरण पर्यन्त कभी कोई सम्मान न प्राप्त हो सका।

मैथ्यू फॉण्टेनी मॉरी



मैथ्यू फॉण्टेनी मॉरो

मैथ्यू फॉण्टेनी मॉरी

(१८०६-१८७३)

समुद्रों का मार्ग-निर्देशक

हमारी यह प्रवृत्ति है कि हम अपने प्रतिभाशाली व्यक्तियों को निर्विघ्न सम्मान प्रदान करते हैं, परन्तु कभी-कभी हम सोचते हैं कि विदेशी उन लोगों को मान्यता प्रदान करने में बड़ी शिथिलता करते हैं। मैथ्यू फॉण्टेनी मॉरी की बात इससे भिन्न है। ऐसा अन्य कोई अमरीकी नहीं हुआ है जिसे बाहर तो महान् सम्मान मिला हो किन्तु स्वदेश में उसकी अत्यधिक उपेक्षा की गई हो। वर्जीनिया की उसकी जन्म-भूमि के प्रदेश के बाहर समस्त देश के बहुसंख्यक लोग उसका नाम तक नहीं जानते। फिर भी वह नये और महत्त्वपूर्ण समुद्र-विज्ञान का संस्थापक है। उसने समुद्रों के हर क्षेत्र में अनुसंधान किये और अपने समस्त जीवन में परिश्रम द्वारा उसने जो सिद्धान्त निकाले वे अब भी सत्य हैं। यदि कोई अन्य महासागर के आर-पार यात्रा करने वाले किसी आधुनिक युद्ध-पोत के मानचित्र के कमरे में देखे तो उसे विदित होगा कि समुद्र-संचालन-संबन्धी मानचित्रों आदि पर अब भी एक नाम इस प्रकार अंकित है "लेफ्टि-नेण्ट मैथ्यू एफ० मॉरी यू० एस० नेवी।"

यह वैज्ञानिक वर्जीनिया में फ्रेडरिक्सवर्ग के पास एक कृषि-क्षेत्र में पैदा हुआ था। किन्तु संसार में मैथ्यू के आने के पाँच वर्ष पश्चात् उसका पिता अपने भाग्य को सुधारने की आशा में पश्चिमी सीमा के टेनीसी नामक प्रदेश में

चला गया। जैसे ही बालक कुछ चलने-फिरने योग्य हुआ, उससे घर के कामों में सहायता ली जाने लगी। जिस स्कूल में वह भेजा गया वह एक फूहड़ झोपड़ी सरीखा था। उसमें न तो श्यामपट थे और न पुस्तकें। बैठने के लिए खूँटों पर कटे हुए लकड़ी के लट्ठे रखे हुए थे। मैथ्यू भी अपने पिता की भाँति एक कृषक ही हुआ होता किन्तु एक बार पेड़ से गिर जाने के कारण उसकी पीठ में ऐसी भारी चोट आ गई थी कि वह खेती के अति कठोर कार्यों के लिए अयोग्य हो गया था।

इस अन्तरा में मैथ्यू ने पढ़ने में ऐसी प्रखर बुद्धि का परिचय दिया कि उसके पिता ने उसे एक अच्छे विद्यालय में भेजा। वहाँ वह गणित में बहुत शीघ्र चमक उठा। उस समय उसका बड़ा भाई नौ-सेना में था और स्वभावत: मैथ्यू भी नौ-सेना में एक अधिकारी बनना चाहता था। अन्त में परिवार के बहुत आपत्ति करते रहने पर भी टेनीसी के तत्कालीन राज्यपाल सैम हौस्टन ने नौ-सेना में उसे मिडशिपमैन नियुक्त कर दिया। उसके एक अध्यापक ने उसकी यात्रा के लिए उसे ३० डॉलर दिये। एक पड़ोसी साथी ने एक भूरी घोड़ी प्रदान की और कहा कि अपने गंतव्य स्थान पर पहुँच जाने पर उसे बेच देना। तत्पश्चात् किशोर मैथ्यू अपनी लम्बी यात्रा के लिए रवाना हो गया। वह वर्जीनिया और वाशिंगटन होता हुआ न्यूयार्क जाने वाला था जहाँ उसे ब्रैण्डी-वाइन नाम के एक छोटे रणपोत पर अपना कार्य-भार ग्रहण करने का प्रतिवेदन देने का आदेश दिया गया था।

इस यान को उस क्रान्तिकारी युद्ध का नाम "ब्रैण्डीवाइन" दिया गया था जो १७७७ में लड़ा गया था और जिसमें लैफेयिट आहत हुआ था। अब १८२५ में पुराना शूरमा नये राष्ट्र की यात्रा के पश्चात्, जिसके लिए वह लड़ा था, फ्रांस लौट रहा था और उसको लौटा ले जाने का भार उसी यान को दिया गया था। जब उसकी मिडशिपमैन के रूप में नई-

नई नियुक्ति हुई तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ। वह सोचने लगा कि उसे उस महान् व्यक्ति से मिलने का बड़ा अच्छा अवसर मिलेगा। संयोगवश ऐसा हुआ भी। लैफेयिट ने उसे देखा और बड़े मधुर शब्दों में बातचीत की। परन्तु वृद्ध सेनानी सम्पूर्ण यात्रा में समुद्री व्याधि से आक्रान्त रहा। इस यात्रा में सभी लोग दुःखी रहे; क्योंकि मार्ग भर अन्धड़ चलता रहा। यान का डेक भी चूता रहा और समुद्री जीवनक्रम के लिए वह बढ़िया समारम्भ न रहा। किन्तु मैथ्यू तैयार था। वह समुद्र-सञ्चरण के विषय में बातें सीखने के लिए बहुत उत्सुक था और उसने उस विषय पर एक पुस्तक भी ढूँढ़ निकाली परन्तु वह पुस्तक स्पैनिश भाषा में छपी हुई थी। उसने उसे खरीद लिया और उसके पढ़ने के लिए स्पैनिश भाषा सीखी। सौभाग्यवश भाषाओं के सीखने में भी उसकी बुद्धि वैसी ही प्रखर थी जैसी कि गणित में और यह एक बहुत बड़ी बात है। जिस समय वह प्रहरी का काम करते समय यान के डेक के पिछले भाग में आगे-पीछे डग भरने लगता था तब वह गोलक त्रिकोणमिति के प्रश्न, मस्तूलों को बगल में रखे हुए पत्थरों पर के तोपों के गोलों पर लिख लेता था और खेल-खेल में स्वयं मौलिक रूप से उन्हें हल करता था।

उन दिनों मिडशिपमैनों को, जहाज पर यदि कोई पुरोहित होता तो वही पढ़ाता था अथवा उन्हें दुःखी एवं अत्यन्त कम [illegible] साधारण अध्यापक या गणित के प्राध्यापक पढ़ाते थे, [illegible] कारण अनुशासन रखने के अधिकार से वंचित होते थे और [illegible] उनका ज्ञान अपने शिष्यों से भी कम होता था। इन शिक्षकों का काम यह होता था कि वे मिडशिपमैनों को गणित की परीक्षाओं के लिए तैयार करते थे जो तब ली जाती थी जब वे पदोन्नति के लिए चेष्टा करते थे। जब मॉरी इस परीक्षा में बैठ रहा था तो उसे जो प्रश्न दिया गया उसे

उसने एकदम मौलिक रूप से लगाया। उसने बाउडिच की प्रैक्टिकल नैविगेटर नामक नौ-संचालकों की पाठ्य पुस्तक में दिये हुए सूत्र का अनुगमन न किया। मॉरी ने जिस रीति से उस प्रश्न को लगाया था वह अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्ण थी किन्तु वह शिक्षक के मस्तिष्क के बाहर की बात थी। उसने बड़े तपाक से घोषित कर दिया कि उसका संपूर्ण प्रश्न बिलकुल गलत था। मॉरी ने अत्यन्त क्रोध और घृणा से उसका बड़ा प्रतिवाद किया। जो अधिकारी-मण्डल परीक्षा ले रहा था उसकी समझ में यह बात न आई कि मॉरी क्या कह रहा था और गुप्त रूप से बड़ी शीघ्रता से परामर्श करने के अनन्तर उन्होंने यह निर्णय किया कि अनुशासन के लिए यही अच्छा होगा कि वे शिक्षक का ही समर्थन करें। अतएव गणित में अद्भुत प्रतिभा रखनेवाला यह व्यक्ति गणित में अनुत्तीर्ण कर दिया गया और उसकी पदोन्नति का अवसर जाता रहा। किन्तु उसके साथियों का, जिन्हें उसने बाउडिच को पुस्तक पढ़ाई थी, रंग चौकस था। वे सभी उत्तीर्ण हो गये।

१८३४ में अपने विवाह के पश्चात् उसने "ए न्यू थियोरेटिकल एण्ड प्रैक्टिकल ट्रीटाइज आन नैविगेशन" नामक पुस्तक लिखना आरम्भ किया। वह १८३६ में प्रकाशित भी हो गई। यह पुस्तक ऐसी अनुपम थी कि उससे वह एकदम प्रसिद्ध हो गया और वैज्ञानिक विषयों पर व्याख्यान देने के लिए उसके पास बहुधा आमन्त्रण आने लगे। अपने जीवन की इस अन्तरा में वह अत्यंत विश्वासपूर्वक यह सोचने लगा कि वह नौ-सेना में प्रचुर उन्नति करेगा।

किन्तु जब १८३९ में वह अपना जहाज पकड़ने के लिए न्यूयार्क जा रहा था तो मार्ग में उसे एक डाक ढोनेवाली गाड़ी द्वारा यात्रा करनी पड़ी। इस गाड़ी में उसने अपना स्थान एक स्त्री को दे दिया जिसके साथ एक बच्चा

भी था और स्वयं बाहर उसके स्थान पर जा कर बैठ गया। उन दिनों सड़कों के खराब होने के कारण—जैसा बहुधा हुआ ही करता था—गाड़ी मार्ग में अकस्मात् उलट गई। इससे मॉरी भूमि पर जा गिरा और उसका घुटना सरक गया और जांघों की हड्डी टूट गई। इसके लिए तीन महीने तक उसे बिस्तर पर लेटे रहना पड़ा। उसने इस विश्राम-काल का सदुपयोग फ्रान्सीसी भाषा का अध्ययन करके किया।

ज्यों ही वह यात्रा करने योग्य हो गया, एक स्लेज गाड़ी पर चढ़-कर अलेघनी पर्वत-माला पार करता हुआ अपना यान पकड़ने के लिए न्यूयार्क पहुंचा। किन्तु वहां पहुंचने के पश्चात् उसे विदित हुआ कि जलयान उसे बिना लिये ही चला गया था। अब वह नौसेना सेवा से कुछ समय के लिए उन्मुक्त हो गया और स्वास्थ्यलाभ करने के लिए घर लौट गया। उस समय नौ-सेना के सचिव के पास वेतन पर चलनेवाले पदाधिकारियों के लिए कोई काम न था। इससे मॉरी को लिखने का लिए अवसर मिल गया। इस समय उसने "हैरी ब्लफ यू० एस० एन०" नामक उपनाम से पत्रों में "स्क्रैप्स फ्राम द लकी बैग" शीर्षक लेखमाला प्रकाशित करवाई। उस समय नौ-सेना में बहुत-से दोष थे। मॉरी को उन पर बड़ा क्रोध आता था। इनमें अधिकांश दोष राजनैतिक थे। उसने विशेष रूप से यह बात कही कि अब नौ-सेनाधिकारियों की शिक्षा के लिए एक ऐसे विद्यालय की स्थापना आवश्यक है जैसा विद्यालय सेनाधि-कारियों के लिए वेस्टप्वाइन्ट में बना हुआ है। मॉरी स्वयं यान पर दी जाने-वाली नाममात्र की शिक्षा के कष्टों को भेल चुका था। उसकी इन बातों से नौ-सेना में एकदम सनसनी फैल गई। बहुसंख्यक अधिकारियों ने मिलकर उनका पूर्ण रूप से प्रचार करने के लिए उन्हें एक छोटी पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किया। उसने जितनी बातें कही थीं वे सर्वथा सत्य थीं किन्तु राजनीतिज्ञ और पुराने अधिकारियों में अन्त तक लड़नेवाले पुराणपंथियों ने उसे कभी भी

क्षमा प्रदान न की। पर कुछ तरुण अधिकारी इतने उत्साहित हो उठे थे कि उन्होंने कहा कि राष्ट्रपति को चाहिए कि वे लेफ्टिनेण्ट मॉरी को नेवी का सचिव नियुक्त कर दें।

प्रायः चार वर्ष के पश्चात् १८४५ में इतिहासज्ञ जॉर्ज बैन्क्राफ्ट ने, जो उस समय नौ-सेना का सचिव था, मेरीलैण्ड के अनापोलिस नगर में एक छोटा दुर्ग लिया और वहाँ, जैसे मॉरी कहता था वैसा ही, एक नौ-सेना-महाविद्यालय स्थापित किया, यद्यपि पुराने नौ-सेनाधिकारी उसका उपहास करते ही रहे। इसी कारण मैथ्यू मॉरी नौ-सेना-प्रशिक्षणपीठ (Naval Academy) का जन्मदाता माना जाता है और एनापोलिस में प्रशिक्षणपीठ के भवन में ग्रेनित-शिलाओं का बना हुआ एक बड़ा भारी भाग है जो मॉरी विकक्ष के नाम से पुकारा जाता है। वहाँ प्रतिवर्ष मॉरी पुरस्कार भी प्रदान किया जाता है।

जब १८४१ में मॉरी ने यह निवेदन किया कि उसे सक्रिय सेवा करने का अवसर प्रदान किया जाय तो डाक्टरों ने कहा कि पाँव खराब हो जाने के कारण वह समुद्री सेवाओं के लिए अयोग्य हो गया है। उस समय ऐसा प्रतीत हुआ कि इस प्रतिभाशाली तरुण अधिकारी का भविष्य पूर्णतया नष्ट हो गया। अब उसके आगे उन्नति की कोई आशा नहीं है। वस्तुतः उसे अपने शेष जीवन भर बैसाखी के सहारे ही चलना पड़ा। किन्तु, जैसा आगे आनेवाली घटनाएँ बतायेंगी, उसके भविष्य का मार्ग यहीं से प्रशस्त हो गया। यदि वह लड़कपन में पेड़ पर से न गिरा होता तो वह अपने पिता की भाँति कृषक हुआ होता। यदि वह अपनी तरुणावस्था में गाड़ी की छत से न गिरा होता तो उसने एक नौ-सेनाधिकारी का ही जीवन बिताया होता। उसमें उसका एक यान से दूसरे यान पर स्थानांतरण हुआ करता और अन्त में वह निवृत्त हो जाता। परन्तु विकलांग कर देनेवाली दुर्घटना से, जो उस समय एक महान् विपत्ति मालूम पड़ती थी, एक प्रकार से उसके महान् कार्यों के लिए द्वार खुल गया। क्योंकि

अब उसे तट पर रहने का अवसर मिल गया जिससे उसे अपने अनुसंधान-कार्यों के लिए यथेष्ट समय मिलने लगा।

१८४२ में उसके लिए एक पद ढूंढ़ा गया और वह मानचित्रों तथा उपकरणों के भंडार का संचालक नियुक्त किया गया। उस समय उक्त संचालक का कार्यालय वाशिंगटन के एक नये भवन में था। मॉरी ने अपने पद को सहर्ष ग्रहण किया और कुछ वर्षों में अपने कार्यालय को संसार भर में इतना प्रसिद्ध कर दिया कि लंदन की ग्रीनविच वेधशाला के बाद अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्यालयों में उसी के कार्यालय का स्थान आता था।

मॉरी के समय तक लोग यही समझते थे कि समुद्रों के मार्ग सर्वथा निश्चित नहीं हैं और उनको हवाओं के सम्बन्ध में पहले से कुछ भी नहीं कहा जा सकता। परन्तु बहुत समय से उसे यह अनुभव हो रहा था कि हवाओं और समुद्री धाराओं के वैज्ञानिक अध्ययन की अधिक आवश्यकता है। बेन्जामिन फ्रैंकलिन इस दिशा में अग्रदूत का काम कर चुका था, क्योंकि उसने एक शताब्दी पूर्व गल्फ स्ट्रीम के संबंध में अपने अध्ययन का विवरण प्रकाशित किया था। मॉरी ने निश्चय किया कि वह सभी समुद्री धाराओं और चलने-वाली हवाओं के मार्गों का मानचित्र तैयार करेगा जो जलयान के कप्तानों के लिए मार्ग-दर्शक के रूप में पर्याप्त सहायक सिद्ध होगा। उसने नौ-सेना की लोह-संचालन-संबंधी पुरानी लघुगणन की पुस्तकों की जाँच-पड़ताल करके [illegible] अपना कार्य आरम्भ किया। अपने इस अध्ययन के आधार पर उसने "विण्ड ऐण्ड करेण्ट चार्ट ऑफ दी नार्थ एटलांटिक" नामक अपना सुप्रसिद्ध [illegible] लिखा। तदनन्तर वह व्यापारी पोतों के पास प्रपत्र भेजता था जिनमें उनसे पोत-संचालन-संबंधी आंकड़ों को भरकर भेजने के लिए कहा जाता था। इन आंकड़ों का नौ-सेना की वेधशाला में अध्ययन किया जाता था। [illegible] आदेश का पालन करते थे उन्हें वह अपने "विण्ड एण्ड करेण्ट [illegible]

प्रतिलिपि, जिसका पहले से ही बड़ी उत्सुकतापूर्वक मांग थी, बिना मूल्य लिये भेजता था।

इन विवरणों पर अत्यधिक परिश्रम करने के पश्चात् मॉरी ने अपनी "सेलिंग डाइरेक्शन्स" नामक पुस्तक छपवाई। इसका परिणाम यह हुआ कि जिन जलयानों को साधारणतया रियो की यात्रा में ५५ दिन लगते थे वे मॉरी के पथों का अनुसरण करते हुए अपनी यात्रा को ३५ दिनों में ही समाप्त करने लगे। जब स्वर्ण-वहन का खूब दौर-दौरा चल रहा था तब द्रुतगामी यानों को न्यूयार्क से सैन्फ्रान्सिसको पहुँचने में १८० दिन लगते थे किन्तु जब उनके चालक मॉरी द्वारा निर्देशित पथों का अनुसरण करने लगे तो उन्हें उक्त यात्रा में औसत रूप से केवल १३३ दिन लगने लगे। कुछ यान यह यात्रा ११० दिन में ही समाप्त कर लेते थे। सुप्रसिद्ध द्रुतगामी जलयान "फ्लाइंग क्लाउड" ने एक बार यह यात्रा ८९ दिन और २१ घण्टों में समाप्त की थी।

समय की इस बचत से अमेरिका और इंगलैण्ड दोनों के व्यापारियों के प्रतिवर्ष लाखों रुपये बचने लगे और संसार ने मॉरी का इस बात के लिए बड़ा स्वागत किया कि उसने मानव-कल्याण-विधायक एक नये विज्ञान ओशनोग्राफी अर्थात् समुद्र-विज्ञान की स्थापना की। विदेशी राष्ट्र उस पर सम्मानों की वर्षा करने लगे; किन्तु उसके स्वदेश ने उस पर कोई विशेष ध्यान न दिया। केवल यहाँ के विश्वविद्यालयों और व्यापार-परिषदों ने अवश्य उसका कुछ सम्मान किया। अपने "स्क्रैप्स फ्राम ए लकी बैग" निबन्धों में उसने इस बात का बड़ी कटु आलोचना की थी कि समुद्र-संचार-सम्बन्धी बातों में राजनीतिज्ञ बहुत हस्तक्षेप करते हैं और उन्होंने उसे उसके लिए कभी भी क्षमा न किया। वह बहुत समय तक केवल लेफ्टिनेण्ट के ही छोटे पद पर रखा गया। तदनन्तर १८५५ में "नौ-सेना की कार्य-पटुता में सुधार करने के लिए" कांग्रेस की विधि द्वारा नौ-सेनाधिकारियों का एक मण्डल बनाया गया। इस मण्डल ने जान-

बूझकर उसे बहुत नीचा दिखाया। उसने यह सुझाव दिया कि उसे "अनुपस्थिति छुट्टी" प्रदान की जाय, क्योंकि उसका पैर ठीक नहीं है। इसका तात्पर्य यह होता था कि से उस सेवा से बहिष्कृत कर दिया जाय और वहाँ किसी गन्दे व्यक्ति को रख दिया जाय। ये व्यक्ति वस्तुत. उसकी कीर्ति से जलने लगे थे। उन्हे इस बात से और भी ईर्ष्या होती थी कि वह सदैव तट ही पर रहता था। अत. वे उसे राज-सेवा से निकाल बाहर करना चाहते थे। इसका चारो ओर ऐसा प्रतिवाद होने लगा कि राष्ट्रपति बुकानन ने १८५८ मे उसे सक्रिय सेवा मे नियुक्त कर दिया तथा उसे कमाण्डर का पद प्रदान किया।

इस अन्तरा मे भी वह बड़े-बड़े कार्य करता ही गया। उसने "दी फिजिकल ज्योग्रफी ऑफ दी सी" (समुद्र का प्राकृतिक भूगोल) नामक तीसरे ग्रन्थ का प्रणयन किया। इस पुस्तक मे उसने समुद्रो की गहराइयो के सम्बन्ध मे अपने अनुसंधानो का विवरण लिखा था तथा अन्ध महासागर का नीचोच्चतादर्शक पहला मानचित्र (Contour) तैयार किया था। उसमें समुद्र के विभिन्न भागो की गहराइयाँ दिखाई गई थी। तत्पश्चात् जब अन्ध महासागर में समुद्री तार बिछाने का कार्य हाथ मे लिया गया तो मॉरी से परामर्श माँगा गया कि वह बताये कि उसम तार बिछाना सम्भव है कि नही और यदि है तो कहाँ पर। उसने तुरन्त बताया कि न्यूफाउण्डलेण्ड और आयरलैंड के बीच एक पठार है जो इस कार्य के लिए सबसे उपयुक्त होगा।

कम्पनी का कार्य-कर्त्ता सिरसफील्ड मॉरी के इस परामर्श के लिए उसका अत्यन्त आभारी हुआ। पहली बार तार बिछाने में सफलता न मिली किन्तु अन्ततोगत्वा १८५८ मे उस महान् कार्य में पूर्ण सफलता मिली। सफलता के उपलक्ष म दिये गये एक भोज में फील्ड ने कहा था, "मै बहुत अधिक कहना नही चाहता। मॉरी ने मानसिक शक्ति प्रदान की, इंगलेण्ड ने रुपये दिये और मैने काम किया।"

तीन वर्ष पश्चात् फोर्ट समटर पर अग्निवर्षा आरम्भ हुई। रावर्ट ई० ली० की भाँति मॉरी ने विच्छेदन का विरोध किया था। किन्तु अन्त में जब पृथक्करण हो ही गया तो उसने अपना कर्त्तव्य यही निर्धारित किया कि वह अपनी जन्म-भूमि के प्रदेश वर्जीनिया का ही साथ देगा। दुर्भाग्यवश वाशिंगटन में रहनेवाले उसके दो घोर शत्रुओं के हाथ में ही शासन-सूत्र आ गया। एक संघ का राष्ट्रपति हो गया और दूसरा नौ-सेना का सचिव। मॉरी को इंगलैण्ड भेज दिया गया। यहाँ वह अपना अधिकांश समय विद्युत् सुरंगों पर कार्य करने में विताने लगा जो उस समय में टारपीडो कहलाती थीं।

जव युद्ध समाप्त हो गया तव जार और फ्रान्स के सम्राट् ने उसके पास अत्यन्त आकर्षक प्रस्ताव भेजे कि वह उनके देशों में राजकीय खगोल-शास्त्री वन जाय। किन्तु मैक्सिको के सम्राट् मैक्सीमिलियन के साहचर्य में कोई वड़ी अप्रिय घटना घट गई। तदनन्तर मॉरी वर्जीनिया लौट गया और वहाँ अपने पराभूत प्रदेश के पुनर्निर्माण की वात सोचने लगा और यह निश्चय किया कि वह अपने जीवन के शेष वर्षों को उसी में लगा देगा। उसने वर्जीनिया के लेक्सिंग्टन के मिलिटरी इन्स्टीच्यूट में भौतिक विज्ञान के प्राध्यापक का पद स्वीकार कर लिया। वहीं पास में संघ का महान् नेता रावर्ट इ० ली० भी वाशिंगटन कालेज के सभापति के रूप में कार्य कर रहा था।

मॉरी लेक्सिंग्टन में जितने दिनों रहा उतने दिनों वह घूम-घूम कर किसानों से कहा करता था कि वे अपने कांग्रेसी प्रतिनिधियों से यह निवेदन करें कि वे एक ऋतु-कार्यालय स्थापित करें। अपने देहान्त के पूर्व उसे इस वात से सन्तोष हुआ कि वह कार्य आरम्भ हो गया था। इस प्रकार मैथ्यू मॉरी को ऋतु-कार्यालयों का भी जन्मदाता कहा जा सकता है।

मॉरी के समुद्री हवाओं और धाराओं-सम्बन्धी अनुसंधानों से जिन द्रुतगामी जलयानों ने अत्यधिक लाभ उठाया था अब वे, बहुत समय हुए, लुप्त हो चुके हैं। किन्तु इस्पात और वाष्प का प्रयोग करनेवाले पोत अब भी उसके मानचित्र का प्रयोग करते हैं। अभी तक उसके कार्यों में कोई भी संशोधन या परिवर्धन नहीं कर पाया है। परन्तु १९३० तक उसको कोई अधिक न जानता था। वस्तुतः उसके पश्चात् ही उसे अत्यधिक कीर्ति प्राप्त हुई। वह उन वैज्ञानिकों में से है जिनके सम्बन्ध में हम अमरीकी इस बात का गर्व कर सकते हैं कि वह हमारे देश का था, क्योंकि उसने ऐसे विज्ञान की नींव डाली जिसे पहले कोई जानता भी न था। उसने समुद्र की गहराइयों के सम्बन्ध में अनुसंधान किया, धाराओं के मानचित्र बनाये, समुद्र में चलनेवाली हवाओं को निर्दिष्ट किया और अपने ढूँढ़े हुए तथ्यों के आधार पर "मार्गविहीन अनन्त सागर" के मार्गों का पता लगाया।

विल्हेल्म कानरड राँजन, मेरी स्क्लोडोस्का क्यूरी,
पियरे क्यूरी



मेरी स्क्लोडोस्का क्यूरी, पियरे क्यूरी

रॉंजन और क्यूरी

विल्हेल्म कानरड रॉंजन

(१८४५-१९२३)

मेरी स्क्लोडोस्का क्यूरी

(१८६७-१९३४)

पियरे क्यूरी

(१८५९-१९०६)

एक्स-रे और रेडियम की खोज

एक दिन जर्मन विश्वविद्यालय का विल्हेल्म रॉंजन नामक एक प्राध्यापक शून्य परीक्षण-नलिकाओं के साथ यह प्रयोग कर रहा था कि जब परीक्षण-नलिकाओं की विरलभूत गैसों में विद्युत्धारा प्रवाहित की जाती है तो उसका क्या परिणाम होता है। उसने अपनी परीक्षण-नलिका को एक मोटी और काली दफ्ती से आवृत कर रखा था, जिससे विद्युत्-शक्ति के अपनयन से जो प्रकाश उत्पन्न हो वह बाहर न जा सके। पास की एक बेंच पर कागज का एक ऐसा टुकड़ा पड़ा हुआ था जिस पर इस प्रकार का रासायनिक लेप किया हुआ था कि जब उस पर अल्ट्रा वॉयलेट किरणें पड़ें तो वह चमकने लगे। यह चमकने का गुण स्फुर दीप्ति (Phosphorescence) से भिन्न होता है। क्योंकि स्फुर दीप्ति साधारण प्रकाश में आने के पश्चात् कुछ समय तक स्वयं ज्योतित रहती

है। किन्तु उद्दीप्ति तल (Fluorescent surface) तभी तक चमकता है जब तक उस पर किरणें पड़ती हैं।

जब रॉंजन ने विद्युत्-धारा आवृत परीक्षण-नलिका में प्रवाहित की तो उसे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि लेप किया हुआ कागज उद्दीप्त हो उठा। वह चमकता रहा! किन्तु प्रच्छन्न प्रकाश ढकी हुई परीक्षण-नलिका में से निकल न सकता था। इससे स्पष्ट था कि उससे अवश्य कोई अदृश्य किरणें निकल रही थीं जिनसे कागज इस प्रकार चमकने लगा था। जब रॉंजन ने परीक्षण-नलिका को ढंकनेवाली काली दफ्ती के पिधान के अतिरिक्त अन्य वस्तुओं का परीक्षण किया यथा लकड़ी, कागज और कपड़ा तो उसने देखा कि इन्होंने भी उनका कोई प्रतिरोध न किया। वे भी इन अदृश्य किरणों के लिए पारदर्शी थे। उसने छाया-चित्रों के फलकों के साथ भी प्रयोग किया और देखा कि उन पर कुहरा-सा पड़ा हुआ था मानो उन पर प्रकाश पड़ा हो; किन्तु धातुएं उनके मार्ग में प्रतिरोध करती थीं। विशेषकर सीसा, केवल बहुत पतले पत्तरों को छोड़-कर, उन किरणों को एकदम काट देता था। अस्थि और मांस इन किरणों का विभिन्न रूप में प्रतिरोध करते थे। इस अन्तर के कारण जीवित शरीर में नर-कंकाल का देखना सम्भव हो सका।

नवम्बर १८९५ में रॉंजन ने इन नई रहस्यमयी किरणों के सम्बन्ध में, जिन्हें उसने केवल संयोगवश ढूंढ़ निकाला था, एक निबन्ध पढ़ा। उस निबन्ध से बड़ी सनसनी फैल गई। उसने उनका नाम "एक्स-किरणें" रखा था, क्योंकि गणित में एक्स से अज्ञात राशियां अभिव्यक्त की जाती हैं। वैसे नई किरणों का नाम औपचारिक रूप से उनके आविष्कर्ता के सम्मानार्थ रॉंजन किरणें रखा गया। यूरोप में साधारणतया वे उसी नाम से पुकारी जाती हैं। यहां अमेरिका में हम उन्हें उसी सरल नाम से

पुकारते हैं जिससे स्वय रॉजन ने उन्हे अभिहित किया था। चूंकि ये किरणें बड़ी सरलतापूर्वक ऐसी बहुसंख्यक वस्तुओं को पार कर जाती हैं जिन्हे प्रकाश नही पार कर सकता अतएव वे उद्योग-धन्धो और औषधि के क्षेत्र में नितान्त उपादेय सिद्ध हुई हैं। विशेषतया औषधि के क्षेत्र में उन्होने मानवता की अवर्णनीय सेवा की है।

फिर क्या था, वैज्ञानिक इन अदृश्य किरणो के पर्यन्वेषण मे जुट गये। किन्तु १९१२ तक कोई भी यह विश्वासपूर्वक न कह सका कि ये क्या थी। इस बीच मे उस क्षेत्र में बहुसंख्यक नये-नये आविष्कार और नई बातें निकलती रही। बैक्रेल नाम के एक फ्रांसीसी भौतिक शास्त्री ने देखा कि एक्स-किरणो-वाली परीक्षण-नालिका, जब किरणें बाहर निकलती हैं तो, कुछ हरे प्रकाश मे चमकती है और वह आश्चर्य करता रहा कि क्या अन्य वस्तुएं भी उद्दीप्त किये जाने पर एतादृश प्रकाश विकीर्ण कर सकती हैं। उसने उद्दीप्तशील यौगिको के बहुसंख्यक नमूने काले कागज म लपेटे और उन्हे एक छायाचित्र के फलक के नीचे रख दिया। इनमे से एक यूरेनियम का लवण भी था। अन्य किसी से कुछ काम नही हुआ किन्तु इसमें से अदृश्य किरणें निकलने लगी, जिनसे फलक पर कुहरा-सा दीखने लगा।

तदनन्तर उसने यह ढूंढ़ निकाला कि यूरेनियम का भी वही प्रभाव होता है चाहे वह उद्दीप्तिशील बनाया जाय या नही। उसने घोषित किया, "पदार्थों की एक नई विशेषता विकिरणशीलता है।" सर्वप्रथम उसी ने यह शब्द चलाया था। अब तो यह समाचारपत्रो में भी धड़ल्ले के साथ प्रयोग किया जाता है।

भूमिका रूप मे यह संक्षिप्त कथा क्यूरी परिवार के कार्यो के इतिवृत्त के लिए आवश्यक पृष्ठ-भूमि तैयार कर देती है। क्यूरीज के कार्य विगत शताब्दी म विज्ञान के क्षेत्र मे अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माने जाने जाते हैं। प्रोफेसर और मैडम

क्यूरी इस बात के जाज्वल्यमान दृष्टान्त हैं कि किसी कठिन से कठिन वैज्ञानिक समस्या को लेकर एक दम्पति कितनी अच्छी तरह सामंजस्यपूर्ण कार्य कर सकते हैं। मैडम क्यूरी सदैव अपने पति को पूर्ण श्रेय देने के लिए उत्सुक रहा करती थी और उसका पति भी अपनी प्रतिभाशालिनी पत्नी को ख्यातिलब्ध बनाने के लिए उतना ही उत्सुक रहता था। फिर भी इतना तो सत्य है कि मैडम क्यूरी सदा अग्रणी रही और वस्तुतः वही श्रेय की प्रथम अधिकारिणी है। यह प्रसिद्ध वैज्ञानिक एक क्षीणकाय पोलिश महिला थी। समस्त जीवन भर उसे निर्धनता, अस्वास्थ्य और नीच व्यक्तियों की ईर्ष्या का सामना करना पड़ा। फिर भी अपने चरित्र, मस्तिष्क और दृढ़ संकल्प द्वारा कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करती हुई वह आगे निकल गई और उसने पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त की। वह इस शताब्दी के सर्वाग्रणी वैज्ञानिकों में परिगणित की जाती थी जिसका समस्त सभ्य संसार ने अत्यन्त सम्मान किया था।

मेरी स्क्लोडौस्का क्यूरी पोलैण्ड की राजधानी वारसा नगर में पैदा हुई थी। उस समय यह नगर जार के शासन में था और वह अपने पूर्ववर्ती गीतों के बनानेवाले चॉपिन की भाँति अपने समस्त भीवन भर राष्ट्रीयता की भावना से सदैव ओत-प्रोत रही। उसका पिता विश्वविद्यालय में भौतिक विज्ञान का अध्यापक था। मेरी ने, जिसका तत्कालिक नाम मान्या था, अच्छी शिक्षा प्राप्त कर ली थी, विशेषतया उसने आधुनिक भाषाओं का अच्छा ज्ञान अर्जित कर लिया था। अपने एकमात्र इस गुण को लेकर उसने केवल १७ वर्ष की आयु में धात्री के रूप में अपना जीवन आरम्भ किया। इसमें उसे बड़े अप्रिय लोगों के साथ काम करना पड़ता था; किन्तु वह ३-४ वर्षों तक इस काम से चिपकी रही। वह अपने थोड़े वेतन का आधा भाग अपनी बहन को भेज देती थी जो उस समय पेरिस में अध्ययन कर रही था। उसकी बहन जो कार्य कर रही थी उसी कार्य को करने की मेरी को भी बहुत काल से महत्त्वाकांक्षा थी। किन्तु

उसके परिवार में किसी व्यक्ति ने कभी यह न सोचा था कि उसमें भी कोई विशिष्ट प्रतिभा है। चूँकि वह अत्यधिक शीलवती और शान्त रहने वाली थी, इससे सब लोग उसकी उपेक्षा कर जाते थे। अन्तत: पोलैण्ड में जिस धात्री के जीवन को वह "नरक" कहा करती थी उसे छोड़कर वह भाग निकली। क्योंकि उसकी पेरिस वाली बहन अब विवाह करने वाली थी। उसने मेरी के पास संवाद भेजा था कि वह कम से कम एक वर्ष तक उसके यहाँ आकर रह सकती है और चाहे तो अध्ययन भी कर सकती है।

अन्ततोगत्वा १८९१ में सब कुछ निश्चित हो गया और एक अत्यन्त लज्जावती तरुणी महिला ने चतुर्थ श्रेणी का रेल-टिकट लिया जो उस समय सबसे सस्ता टिकट था और पेरिस के लिए चल पड़ी। यात्रा में एक वाहक गाड़ी के सदृश दिखाई पड़ने वाली वस्तु की बेञ्च पर बैठना पड़ता था। किन्तु उसने इन सब बातों पर कोई ध्यान न दिया, क्योंकि वह पेरिस में विद्याध्ययन करने जा रही थी।

उन दिनों अधिकांश लड़कियाँ फ्रांस की राजधानी में कलाकार या संगीतज्ञ बनने के लिए जाती थीं किन्तु मेरी को विज्ञान में अभिरुचि थी और उसने सारबोन में मास्टर ऑफ साइन्स की उपाधि प्राप्त करने के लिए नाम लिखाया। उसने अपने पोलिश नाम मान्या को बदल कर मेरी कर दिया क्योंकि पेरिस के व्यक्तियों को पोलिश नाम के उच्चारण में बड़ी कठिनाई पड़ती थी। किन्तु उसने अपने अन्तिम नाम स्क्लोडोस्का को ज्यों त्यों रहने दिया और इसके उच्चारण में वहाँ वाले मनमानी करते रहे। थोड़े समय पश्चात् लैटिन क्वार्टर में उसे कुछ और पोलिश विद्यार्थी मिले। वहाँ बहुसंख्यक तरुण एकत्र होते थे और स्वतंत्र पोलैण्ड के विषय में चाहे जितने उच्च स्वर से बातचीत करते थे। ऐसा करने के कारण उन्हें साइबेरिया भेजे जाने का कोई डर न था। विश्वविद्यालय के अध्ययन के दिनों में मेरी के जीवन का यह बड़ा सुखद स्थान रहा।

एक वर्ष के पश्चात् उसे अपनी बहन का घर छोड़ कर अपने लिए नया घर बनाना आवश्यक हो गया। उसे व्यय के लिए प्रति दिन केवल ३ फ्रांक मिलते थे। उन दिनों अमेरिकन मुद्रा में यह लगभग ६० सेण्ट के बराबर होता था। उसने एक छोटा कोठे पर का कमरा ले रखा था। उसमें खिड़की के स्थान में केवल एक रोशनदान था। उसमें पानी, प्रकाश और ताप का कोई प्रबन्ध न था। वह एक छोटे अलकोहल बर्नर (Burner) पर अपना भोजन पकाती थी। उसे अपने छोटे गर्म करने वाले स्टोव के लिए बाल्टियों में भर कर कोयला सीढ़ियों पर चढ़ाना पड़ता था; किन्तु जाड़े की बहुत-सी रातें और दिन उसे, ईंधन बचाने के लिए, ठंड में बितानी पड़ती थीं। उसे बहुत दिनों तक केवल रोटी और चाय खाकर ही रहना पड़ा।

जब उसने सारबोन की परीक्षा पास कर ली तो वारसा के एक मित्र ने ऐसा प्रबन्ध कर दिया कि उसे एलेक्जेन्ड्रोविच छात्र-वृत्ति मिल जाय। यह छात्र-वृत्ति विशेषतया अच्छे विद्यार्थियों को विदेशों में अध्ययन करने के लिए दी जाती थी। इससे उसे छः सौ रूबल प्रति वर्ष मिलने लगे; परन्तु यह धन-राशि बहुत थोड़ी थी, क्योंकि उस समय एक रूबल ५० सेण्ट के बराबर होता था। किन्तु उसने उसी में किसी प्रकार काम चलाया। अपने अनुवर्ती वर्षों में उसने बचा-बचाकर एक एक रूबल चुका दिया जिससे उस रुपये से कोई दूसरा विद्यार्थी, उसकी ही भाँति, उच्चतर शिक्षा प्राप्त कर सके।

१८९५ में मेरी ने पियरे क्यूरी नाम के विज्ञान के एक तरुण प्राध्यापक से विवाह कर लिया। यह व्यक्ति अपने देश की अपेक्षा फ्रांस के बाहर अधिक प्रसिद्ध था। इसके पश्चात् अनुसंधान के क्षेत्र में सहयोगी और दम्पति के रूप में उनके सुखमय साहचर्य का आरम्भ होता है। उनके दो कन्याएँ उत्पन्न हुईं जिनमें से ईरीन नाम की बड़ी कन्या को कालान्तर में नोबुल पुरस्कार प्राप्त हुआ। परन्तु माता के रूप में उसे बच्चों की देख-रेख तथा गृहस्थी

के भी कार-बार करने पड़ते थे; पर वह अपने वैज्ञानिक कार्यों को भी न छोड़ती थी। पति-पत्नी दोनों ही रॉंजन और बैक्रेल के आविष्कारों से बहुत अधिक मुग्ध हुए थे—विशेषतया बैक्रेल की विकीरणशीलता की भावना से वे एकदम मन्त्राभिभूत-से थे। उस विकीरणशीलता का स्वरूप क्या है? आविष्कार के लिए यह नया क्षेत्र अत्यन्त मोहक प्रतीत होता था।

मेरी ने इस समस्या को लेकर काम आरम्भ कर दिया और शीघ्र ही यह ढूँढ़ निकाला कि कुछ धातुओं और धातुशिलाओं की विकीरणशीलता से उन यौगिकों में रहनेवाली यूरेनियम या थोरियम के परिमाण की विकीरणशीलता कहीं अधिक है। ये दोनों तत्त्व वह वस्तुएँ थीं जिनका रॉंजन और बैक्रेल ने यह पता लगाया था कि वे विकीरणशील हैं। यह कुछ अशुद्ध-सी प्रतीत होती थी। उसने १० से २० बार तक अपने प्रयोगों को दोहराया, किन्तु उनका परिणाम सदैव एक रहा। उसने देखा कि यूरेनियम की धातुशिला—पिचब्लेंड—शुद्ध यूरेनियम से पाँच गुना विकीरणशील है। अब स्पष्ट था कि उस धातु अयस्क में अवश्य कोई और विकीरणशील धातु है। वह क्या वस्तु होगी? और प्रयोग करने के अनन्तर दो ऐसी वस्तुओं का पता चला जो यूरेनियम से भी अधिक विकीरणशील थीं। इन सभी प्रयोगों में उसके पति ने सक्रिय सहयोग दिया था।

जुलाई १८९८ में क्यूरी दम्पति ने यह घोषित किया कि एक ऐसा भी रासायनिक तत्त्व है जो यूरेनियम से ४०० गुना अधिक विकीरणशील है। मेरी ने इसका नाम, अपने देश के सम्मानार्थ, पोलोनियम रखा। तत्पश्चात् बहुसंख्यक प्रयोगों के दुहराने के अनन्तर क्यूरी दम्पति ने एक रवेदार वस्तु का निर्माण किया जो यूरेनियम से नौ सौ गुनी अधिक विकीरणशील थी। इसका कारण अवश्य ही कोई दूसरा तत्त्व रहा होगा। उसी वर्ष के दिसम्बर महीने में उन्होंने घोषणा की कि उन्होंने एक और विकीरणशील वस्तु ढूँढ़ निकाली है। इसे

नाम उन्होंने लैटिन शब्द रेडिआरे के आधार पर रेडियम रखा जिसका अर्थ होता है किरणें विकीरण करनेवाला। चार वर्ष पश्चात् मेरी ने एक ग्राम रेडियम क्लोराइड पृथक् करने में सफलता प्राप्त की। किन्तु इसके आठ वर्ष के अनन्तर यह अन्ततोगत्वा शुद्ध रेडियम पृथक् कर सकी। यह वह तत्त्व है जिसे वैज्ञानिक कहते हैं कि वह यूरेनियम से १० लाख से ४० लाख गुना तक अधिक विकीरणशील होता है।

जिन आविष्कारों की यहाँ केवल चर्चा मात्र की जा रही है उनके करने में अगणित दिनों, महीनों और वर्षों का अथक परिश्रम लगा था। पेरिस के भौतिक-विज्ञान की पीठ के संचालक ने क्यूरी दम्पति को प्रयोगशाला के लिए उस पीठ के प्रांगण का एक शीशा लगा हुआ छोटा भाण्डार-भवन दे रखा था। उसमें फर्श नहीं था। कोई सुविधा नहीं थी। कुर्सी आदि कुछ भी नहीं था। उसमें भयंकर सील थी। क्यूरी दम्पति इतने निर्धन थे कि वे अपनी प्रयोगशाला को सुसज्जित न कर सकते थे। परन्तु उन्होंने जहाँ तक हो सका, अधिक से अधिक काम करने की चेष्टा की। मेरी ने केवल थोड़ा-सा बहुमूल्य रेडियम प्राप्त करने के लिए टनों धातु अयस्कों से काम किया था जो बड़े-बड़े बोरों में भर कर आती थी। पियरे भी अपनी पत्नी के काम में बड़ी उत्सुकतापूर्ण तत्परता से जुटा रहता था और उसके साथ-साथ सतत परिश्रम किया करता था। किन्तु एक दिन पेरिस की एक सड़क पार करते समय एक मोटर दुर्घटना से उसका देहान्त हो गया। यह बात अप्रैल १९०६ की है। वह उस महान् कार्य को पूरा होते न देख सका।

मेरी क्यूरी के नाम की संसार में पहले से ही प्रतिष्ठा बढ़ रही थी। अमेरिका के एन्ड्रू कारनेगी ने उसे बहुत-सी वार्षिक छात्र-वृत्तियाँ प्रदान कीं, जिससे वह ८-१० तरुण उदीयमान विद्यार्थियों को अपने साथ रख सके। १९११ में उसे रसायन शास्त्र के लिए नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया। इस

पुरस्कार को उसने केवल अपने ही नाम में नहीं अपितु अपने पति के नाम में भी स्वीकार किया। उसे अपने पति के साथ पहले ही १९०३ में भौतिक-विज्ञान के लिए नोबुल पुरस्कार मिल चुका था। बहुसंख्यक राष्ट्रों ने उसे और भी बहुत-से पदक और सम्मान प्रदान किये।

१९२१ में मैडम क्यूरी ने अमेरिका की यात्रा की। वहाँ श्रीमती विलियम ब्राउन मेलोनी अमेरिकन महिलाओं से, राष्ट्रीय पैमाने पर, एक ग्राम शुद्ध रेडियम का मूल्य एकत्र कर रही थी और उसे, मैडम क्यूरी को, उसकी प्रशंसा में उपहारस्वरूप देना चाहती थी। उस समय इतने रेडियम का मोल पचीस सौ डालर होता था। उस समय मैडम क्यूरी के पास उसकी प्रयोगशाला में केवल एक ग्राम रेडियम था। धन एकत्र किया गया और विख्यात वैज्ञानिक अपनी दो पुत्रियों सहित उस उपहार को स्वीकार करने के लिए अमेरिका आई। राष्ट्रपति हार्डिंज ने ह्वाइट हाउस में उपहार समर्पण-समारोह की व्यवस्था की। इसके अतिरिक्त उस पर आमन्त्रणों और सम्मानार्थ दी जानेवाली उपाधियों की वृष्टि-सी होने लगी। मिलनेवालों का मेला-सा लगा रहता था। इसमें बड़ा श्रम पड़ता था किन्तु यह एक महती वैयक्तिक विजय थी। वहाँ उसने अमेरिका में सर्वप्रथम देखा कि कैन्सर की चिकित्सा में रेडियम का प्रयोग होता था। डाक्टर उसे क्यूरीथेरापी अर्थात् क्यूरी चिकित्सा कहते थे। फ्रांस के एक भी चिकित्सालय में ऐसी चिकित्सा की व्यवस्था न थी।

इसके पश्चात् मेरी क्यूरी और १२ वर्षों तक जीवित रही; किन्तु उसने अपने जीवन का कार्य समाप्त कर लिया था। उसने क्षुधा, निर्धनता और अस्वस्थता की नाना प्रकार की कठिनाइयाँ झेली थी। साथ ही उसे अपने सहयोगियों की ईर्ष्या का भी सामना करना पड़ा था जो उसके सम्बन्ध में सदैव यही सोचा व कहा करते थे "यह भोंडी-सी छोटी विदेशी स्त्री है।"

उसने जो अद्भुत तत्त्व ढूंढ़ा था उसके विषय में फिर क्या हुआ? एक्स-रे की भांति रेडियम से मानवता को सबसे बड़ा लाभ यह हुआ है कि चिकित्सा में उसका बहुत प्रयोग हुआ है। कैनाडा के ग्रेट बियर प्रदेश में सबसे उत्तम पिचब्लेण्ड पाया जाता है; किन्तु १० टन पिचब्लेण्ड से केवल एक ग्राम रेडियम निकल पाता है। अन्य धातु अयस्कों से बढ़िया काम नहीं चलता। इसके पश्चात् अफ्रीका में भी बहुत बढ़िया रेडियम का धातु अयस्क पाया जाता है किन्तु वहाँ के दुगुने धातु अयस्क से अर्थात् २० टन से केवल एक ग्राम रेडियम निकल पाता है।

इस अद्भुत विशेषताओंवाले नवाविष्कृत रेडियम के सम्बन्ध में परवर्ती अनुसंधानों के आधार पर विज्ञान के क्षेत्र में विचारों की एक नई दिशा का आरम्भ हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह और भारी तत्त्व यूरेनियम से विकसित हुआ है और स्वयं रेडियम से एक दूसरा तत्त्व हीलियम विकसित हुआ है। वह निर्जीव अकार्बनिक जगत् के पदार्थों के सम्बन्ध में भी विकासवाद की एक नई गाथा की ओर इंगित करता प्रतीत होता है। अन्यच्च, रेडियम से जिस दिशा में अध्ययन का आरम्भ हुआ है उससे यह पता चला है कि परमाणु अब वह वस्तु नहीं है जैसा कि उसके नाम का अर्थ है अर्थात् वह अविभाज्य नहीं है। वह धनात्मक और ऋणात्मक विद्युत्शक्ति-कणों से बना है जो विद्युत्-कण और एतादृश नामों से अभिहित किये जाते हैं। अब परमाणु स्वयं एक सौर-मण्डल सरीखा प्रतीत होता है। अब वैज्ञानिकों ने अणु के विभाजन के लिए यन्त्र तैयार कर लिये हैं। हम युद्ध में पहले ही दानवी शक्तिवाले एटम बम का प्रयोग कर चुके हैं जो अणु की उन्मुक्त शक्ति से भयंकर विध्वंस करता है।

जब मैडम क्यूरी पहले वारसा में, जिस समय उसका नाम मान्या स्क्लोडोस्का था, सर्वप्रथम रसायन-शास्त्र पढ़ने गई थी तो उसे पढ़ाया

गया था कि प्रकृति का ब्रह्माण्ड पदार्थ और शक्ति से बना है। रेडियम के उसके आविष्कार से यह सिद्ध हो चुका है कि पदार्थ नाम की कोई वस्तु नहीं है। प्रत्येक वस्तु केवल रहस्यपूर्ण शक्ति की अभिव्यक्ति मात्र है। हमारी ब्रह्माण्ड की भावनाओं के सम्बन्ध में इसके लिए वैसा ही क्रान्तिकारी परिवर्तन अपेक्षित है जैसा उस समय हुआ था जब गैलेलियो ने यह सिद्ध किया था कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है।

अलबर्ट अब्राहम माइकेल्सन



अलबर्ट अब्राहम माइकेल्सन

अलबर्ट अब्राहम माइकेलसन
(१८५२-१९३१)
प्रकाश का अनुसंधानकर्त्ता

जिस समय कैलिफोर्निया के सोने की कीर्ति दूर-दूर देशों में फैल रही थी उस समय माइकेल्सन नामक एक प्रशा-निवासी अपने दो वर्ष के पुत्र और पत्नी के साथ अटलांटिक समुद्र को पार कर पनामा के मार्ग से नाना प्रकार के कष्ट और कठिनाइयां झेलता हुआ, धनी होने की इच्छा से, केलिफोर्निया पहुँचा किन्तु स्वर्णपिंडों की जैसी आशा की गई थी, वे उससे कहीं अधिक दुष्प्राप्य सिद्ध हुए। जब सोने का स्वप्न विलीन होने लगा तो माइकेल्सन ने दूसरी बहुमूल्य धातु चाँदी के संबंध में अपना भाग्य आजमाने का निश्चय किया और वह अपने परिवार को लेकर गिरि-द्वारों से होता हुआ नेवादा के वर्जीनिया नगर में जा पहुँचा जिसके समीपस्थ भागों में चाँदी बहुतायत से पाई जाती थी।

इस खानों वाले नगर में बालक अलबर्ट की सर्वप्रथम शिक्षा-दीक्षा आरम्भ हुई। किन्तु माइकेल्सन परिवार को जैसे सोने से कोई विशेष लाभ नहीं हुआ वैसे ही चाँदी से भी कोई विशेष लाभ न हुआ। वे शीघ्र ही केलिफोर्निया के सैनफ्रान्सिसको नगर में जाकर बस गये। कच्चे सोने की ख्याति वाले इस नये नगर में अलबर्ट माइकेल्सन की प्रारम्भिक और माध्यमिक शिक्षा का अधिकांश भाग समाप्त हुआ। अलबर्ट के अध्यापक विज्ञान में बालक की अभिरुचि और उसकी कुशाग्र बुद्धि से इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने

उसके पिता से कहा "इस बालक को अवश्य शिक्षा मिलनी चाहिए।" किन्तु प्रश्न था कैसे और कहाँ ?

उन आरम्भिक दिनों में न तो केलिफोर्निया में और न केलिफोर्निया के समीप ही कोई विश्वविद्यालय था। बालक के मित्रों ने एक बात सोची। एनापोलिस की नौ-प्रशिक्षण पीठ में एक कांग्रेसी नियुक्ति के लिए प्रतियोगिता परीक्षा होने वाली थी। क्यों न उसी के लिए प्रयत्न किया जाय। अलबर्ट अवसर को पाकर फूला न समाया। किन्तु जब परीक्षाफल घोषित किया गया तो विदित हुआ कि सर्वप्रथम स्थान के लिए वह और एक और बालक अभ्यर्थी था। दूसरे लड़के का बड़ा राजनैतिक जोर था, अतएव वह नियुक्त कर दिया गया । इससे अन्य बालक बहुत हतोत्साह हुए होते किन्तु अलबर्ट माइकेल्सन नहीं हुआ। उसे पता चला कि राष्ट्रपति भी उस नौ-प्रशिक्षण पीठ में दस नियुक्तियाँ कर सकता है। अतएव वह सोचने लगा कि क्यों न सीधे राष्ट्रपति के यहाँ पहुँचा जाय। एक छोकरे की यह भावना, कि वह सैनफ्रान्सिसको से वाशिंगटन जाकर एनापोलिस की प्रशिक्षण पीठ में राष्ट्रपति द्वारा अपनी नियुक्ति कराने की चेष्टा करेगा, सर्वथा संयोग पर आधारित थी और सुनने वालों को केवल पागलपन लगी होगी। विशेषतया इस बात से कि १८६९ में महाद्वीप के पार यात्रा करना नितान्त कठिन, भयावह और व्यय-साध्य कार्य था। १७ वर्ष के अलबर्ट ने अपने माता-पिता से किसी प्रकार जाने की अनुमति ले ली और बड़ी लम्बी तथा कठिन यात्रा के अनन्तर वह अन्त में वाशिंगटन पहुँच ही गया। वहाँ उसने राष्ट्रपति से मिलने की अनुमति प्राप्त कर ली; किन्तु दुर्भाग्यवश राष्ट्रपति पहले ही दसों स्थानों पर नियुक्त करने के लिए विभिन्न व्यक्तियों को वचन दे चुका था। इससे बड़ी निराशा रही। सैनफ्रान्सिसको से इतनी बड़ी यात्रा सर्वथा निष्फल गई।

किन्तु इस युवक ने अपना उद्योग न छोड़ा। वह एनापोलिस गया

और वहाँ अधीक्षक (Superintendent) से मिला। जब अधीक्षक ने अलबर्ट की कहानी सुनी तो वह अत्यधिक प्रभावित हुआ। उसने यह अनुभव कर लिया कि यह तरुण अवश्य बड़े दृढ़ संकल्प का है। उसने उसने कुछ ऐसा किया जैसा पहले कभी न किया गया था। उसने स्वयं अपने उत्तरदायित्व पर अबलर्ट माइकेल्सन को ग्यारहवाँ मिडशिपमैन नियुक्त कर दिया। उसको परीक्षा में उत्तीर्ण होने में कोई कठिनाई न हुई और शीघ्र ही वह एनापोलिस में मिडशिपमैन की वेश-भूषा में दिखाई पड़ने लगा।

१८७३ में वह स्नातक भी हो गया। समुद्र में दो वर्ष बिताने के पश्चात्, जैसा आवश्यक था, उसे प्रशिक्षणपीठ में पुन भौतिक विज्ञान और रसायन शास्त्र का शिक्षक बना कर भेजा गया। एनापोलिस मे जितने अधिकारी अध्यापन के लिए भेजे गये थे वे कक्षा के नैत्यिक कार्यो और परीक्षा-प्रश्न-पत्रो के समाप्त हो जाने के पश्चात् आमोद-प्रमोद का ओर उन्मुख हो जाते थे और तटवर्ती नौसेना-संस्थान के सुखमय सामाजिक जीवन का उपभोग करने लगते थे। किन्तु माइकेल्सन ने, जो मिडशिपमैन की परीक्षा उत्तीर्ण हो चुका था, केवल अपने अध्यापन के कार्य को ही वहाँ अपना कर्तव्य नहीं समझा। जब से उसने अपनी विद्यालय की शिक्षा समाप्त की थी तभी से उसे विज्ञान से, विशेषतया भौतिक शास्त्र से, प्रगाढ़ प्रेम था।

उस समय नौ-सेना मे गणित का एक प्राध्यापक सुप्रसिद्ध खगोल-शास्त्री साइमन न्यू कूम्ब प्रकाश की गति ज्ञात करने के लिए प्रयोग कर रहा था। तरुण माइकेल्सन की भी इस कार्य म बड़ी अभिरुचि थी, किन्तु उसकी वय या उसका पद ऐसा न था जिससे वह उस प्रयोग मे उत्तरदायी रूप से भाग ले सकता। तब उसने सोचा कि क्यो न इस सम्बन्ध में स्वय प्रयोग किया जाय। उसने अपनी समस्या पर बड़ी सावधानी से मनन किया और

तदनन्तर कार्य आरम्भ कर दिया। समुद्र-भित्ति पर उसने आवर्त्तनशील दर्पणों का एक युग्म स्थापित किया जो एक दूसरे से पाँच सौ फुट दूर थे। उसका यह विचार था कि एक दर्पण से दूसरे दर्पण पर सूर्य-किरण फेंकी जाय तथा उसे पुनः पकड़ा जाय। यद्यपि यह सुनने में सर्वथा अविश्वसनीय प्रतीत होता है किन्तु उस युवक ने अपने बनाये यन्त्र से उस किरण की गति की गणना की और देखा कि वह एक लाख छियासी हजार पाँच सौ आठ मील प्रति सेकेण्ड थी।

इसी अन्तरा में साइमन न्यू कूम्ब, एक फ्रान्सीसी वैज्ञानिक द्वारा आविष्कृत, एक शीशे के यन्त्र का प्रयोग कर और कांग्रेस द्वारा प्रदत्त सहस्रों डालरों के अनुदान का उपयोग कर भी उतने ठीक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच रहा था जितने ठीक निष्कर्ष पर २६ वर्ष का विद्याव्यसनी यह तरुण स्वनिर्मित यन्त्र से पहुँच चुका था जिसमें केवल दस डॉलर व्यय हुए थे।

नौ-प्रशिक्षण पीठ के प्रांगण में इस प्रयोग द्वारा अलबर्ट माइकेल्सन ने अपने वैज्ञानिक जीवन का आरम्भ किया। वह प्रकाश के अनुसंधान के क्षेत्र में विशेष रूप से कार्य कर रहा था। उसने दूसरा प्रयोग फिर किया जिससे प्रकाश की गति की गणना और विशुद्ध रूप से की जा सके। उस समय वह बीस-तीस वर्ष के बीच में था; किन्तु अपने देहान्त के समय भी, जिस समय वह ७८ वर्ष का था, वह प्रकाश के अध्ययन में बड़ी तत्परता और मनोयोग से लगा हुआ था और अपने सभी प्रयोगों में शुद्धता के लिए ऐसा प्रसिद्ध हो गया था कि किसी ने उसकी पता लगाई हुई बातों के जाँचने के लिए उसके प्रयोगों को दुहराने की आवश्यकता नहीं समझी।

अध्यापन की अपेक्षा अनुसंधान में उसे विशेष आनन्द आता था। अतएव नौ-सेना प्रशिक्षण पीठ में अपने इस प्रयोग के थोड़े समय पश्चात् ही

उसने यूरोप में जाकर अध्ययन करने के लिए अनुपस्थिति छुट्टी के लिए आवेदन किया और उसे एतदर्थ छुट्टी मिल भी गई। दो वर्ष तक वह बर्लिन, हिडेनबर्ग और पेरिस में अपने विषय पर व्याख्यान सुनता रहा और वहां की प्रयोगशालाओं में काम करता रहा।

वह एक और विशिष्ट प्रश्न की ओर उन्मुख हुआ। ईथर या आकाश क्या वस्तु है? जब खगोलशास्त्रियों ने प्रकाश का तरंग सिद्धान्त स्वीकार किया तो उन्होंने अनुभव किया कि यदि प्रकाश लहरों के रूप में चलता है तो अन्तरिक्ष मे कोई ऐसी वस्तु अवश्य होगी जिस पर लहरों के रूप में चलना सम्भव होता होगा। अत: उन्होंने एक ऐसी वस्तु का आविष्कार किया जिसका पता पहले किसी को न था या जिसकी पृथक् सत्ता का अनुभव पहले कभी कोई न कर सका था और उन्होंने उसका नाम ईथर रखा। अब माइकेल्सन सोचने लगा कि यदि अन्तरिक्ष ईथर से भरा हुआ है तो क्या वह स्थिर रहता है अथवा क्या उसे पृथ्वी खींचती भी है? मैक्सवेल नामक एक वैज्ञानिक ने कहा कि इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए दो दिशाओं में-अर्थात् एक पृथ्वी के मार्ग की ओर और दूसरा उस पर लम्बरूप दिशा में, प्रकाश की गति को नापना होगा। परन्तु मैक्सवेल के पास उतने सूक्ष्म मापन-कार्य के लिए कोई बढ़िया यन्त्र न था। माइकेल्सन ने इस बात से आकृष्ट होकर उस कार्य को अपने इन्टरफेरोमीटर से करना आरम्भ किया। यह एक ऐसा सूक्ष्म यन्त्र होता है जिससे प्रकाश की दो किरणों के परस्पर व्यवधान से छोटी-छोटी लम्बाइयाँ और दूरियाँ नापी जाती हैं। उसने १८८७ में अपने सहयोगी एडवर्ड डब्ल्यू० मारले को साथ लेकर यह प्रयोग किया। वैज्ञानिक जगत् बड़े विश्वासपूर्वक यह सोच रहा था कि उससे ऐसा अन्तर आवेगा जो ईथर में गति दिखायेगा किन्तु माइकेल्सन सदैव शून्य निष्कर्ष पर ही पहुँचा।

यह बड़े आश्चर्य की बात थी, क्योंकि इससे काल और अन्तरिक्ष में

तदनन्तर कार्य आरम्भ कर दिया। समुद्र-भित्ति पर उसने आवर्त्तनशील दर्पणों का एक युग्म स्थापित किया जो एक दूसरे से पाँच सौ फुट दूर थे। उसका यह विचार था कि एक दर्पण से दूसरे दर्पण पर सूर्य-किरण फेंकी जाय तथा उसे पुनः पकड़ा जाय। यद्यपि यह सुनने में सर्वथा अविश्वसनीय प्रतीत होता है किन्तु उस युवक ने अपने बनाये यन्त्र से उस किरण की गति की गणना की और देखा कि वह एक लाख छियासी हजार पाँच सौ आठ मील प्रति सेकेण्ड थी।

इसी अन्तरा में साइमन न्यू कूम्ब, एक फ्रान्सीसी वैज्ञानिक द्वारा आविष्कृत, एक शीशे के यन्त्र का प्रयोग कर और कांग्रेस द्वारा प्रदत्त सहस्रों डालरों के अनुदान का उपयोग कर भी उतने ठीक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच रहा था जितने ठीक निष्कर्ष पर २६ वर्ष का विद्याव्यसनी यह तरुण स्वनिर्मित यन्त्र से पहुँच चुका था जिसमें केवल दस डॉलर व्यय हुए थे।

नौ-प्रशिक्षण पीठ के प्रांगण में इस प्रयोग द्वारा अलबर्ट माइकेल्सन ने अपने वैज्ञानिक जीवन का आरम्भ किया। वह प्रकाश के अनुसंधान के क्षेत्र में विशेष रूप से कार्य कर रहा था। उसने दूसरा प्रयोग फिर किया जिससे प्रकाश की गति की गणना और विशुद्ध रूप से की जा सके। उस समय वह बीस-तीस वर्ष के बीच में था; किन्तु अपने देहान्त के समय भी, जिस समय वह ७८ वर्ष का था, वह प्रकाश के अध्ययन में बड़ी तत्परता और मनोयोग से लगा हुआ था और अपने सभी प्रयोगों में शुद्धता के लिए ऐसा प्रसिद्ध हो गया था कि किसी ने उसकी पता लगाई हुई बातों के जाँचने के लिए उसके प्रयोगों को दुहराने की आवश्यकता नहीं समझी।

अध्यापन की अपेक्षा अनुसंधान में उसे विशेष आनन्द आता था। अतएव नौ-सेना प्रशिक्षण पीठ में अपने इस प्रयोग के थोड़े समय पश्चात् ही

उसने यूरोप में जाकर अध्ययन करने के लिए अनुपस्थिति छुट्टी के लिए आवेदन किया और उसे एतदर्थ छुट्टी मिल भी गई। दो वर्ष तक वह बर्लिन, हिडेनबर्ग और पेरिस में अपने विषय पर व्याख्यान सुनता रहा और वहाँ की प्रयोगशालाओं में काम करता रहा।

यह एक और विशिष्ट प्रश्न की ओर उन्मुख हुआ। ईथर या आकाश क्या वस्तु है ? जब खगोलशास्त्रियों ने प्रकाश का तरंग सिद्धान्त स्वीकार किया तो उन्होंने अनुभव किया कि यदि प्रकाश लहरों के रूप में चलता है तो अन्तरिक्ष में कोई ऐसी वस्तु अवश्य होगी जिस पर लहरों के रूप में चलना सम्भव होता होगा। अतः उन्होंने एक ऐसी वस्तु का आविष्कार किया जिसका पता पहले किसी को न था या जिसको पृथक् सत्ता का अनुभव पहले कभी कोई न कर सका था और उन्होंने उसका नाम ईथर रखा। अब माइकेल्सन सोचने लगा कि यदि अन्तरिक्ष ईथर से भरा हुआ है तो क्या यह स्थिर रहता है अथवा क्या उसे पृथ्वी खींचती भी है ? मैक्सवेल नामक एक वैज्ञानिक ने कहा कि इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए दो दिशाओं में-अर्थात् एक पृथ्वी के मार्ग की ओर और दूसरा उस पर लम्बरूप दिशा में, प्रकाश की गति को नापना होगा। परन्तु मैक्सवेल के पास उतने सूक्ष्म मापन-कार्य के लिए कोई बढ़िया यन्त्र न था। माइकेल्सन ने इस बात से आकृष्ट होकर उस कार्य को अपने इन्टरफेरोमीटर से करना आरम्भ किया। यह एक ऐसा सूक्ष्म यन्त्र होता है जिससे प्रकाश की दो किरणों के परस्पर व्यवधान से छोटी-छोटी लम्बाइयाँ और दूरियाँ नापी जाती हैं। उसने १८८७ में अपने सहयोगी एडवर्ड डब्ल्यू० मारले को साथ लेकर यह प्रयोग किया। वैज्ञानिक जगत् बड़े विश्वासपूर्वक यह सोच रहा था कि उससे ऐसा अन्तर आवेगा जो ईथर में गति दिखायेगा किन्तु माइकेल्सन सदैव शून्य निष्कर्ष पर ही पहुँचा।

यह बड़े आश्चर्य की बात थी, क्योंकि इससे काल और अन्तरिक्ष के

बीच नूतन सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता थी और बहुत-सी नई बातें भी अपेक्षित थीं। इस प्रयोग से माइकेल्सन ने सिद्ध कर दिया था कि प्रकाश की गति सभी दिशाओं में और सर्वत्र एक समान है। वैज्ञानिकों ने इसे "आधुनिक भौतिक विज्ञान के सिद्धान्तों के भवन का आधार-स्तम्भ" कहा है और उन्होंने १८८७ के माइकेल्सन और मारले के उस प्रयोग को "आधुनिक काल का सर्वप्रसिद्ध और अत्यन्त क्रान्तिकारी वैज्ञानिक प्रयोग" कहा है। उन विशेषज्ञों के मतों को केवल स्वीकार कर लेना ही अलम् होगा, क्योंकि उनकी बातों को समझने की चेष्टा करने में हम और रहस्यपूर्ण जटिलता में फंस जायँगे।

समय, प्रकाश, ईथर और अन्तरिक्ष सम्बन्धी अत्यन्त जटिल प्रश्नों को सुलझाने के लिए पायन्केरी नामक एक फ्रांसीसी भौतिक शास्त्री और तत्पश्चात् आइन्सटीन नाम का स्वि ्जरलैण्ड का एक उन्तीस वर्ष का तरुण—अब जगद्प्रसिद्ध "सापेक्षवाद" के सिद्धान्त को लेकर आगे आये। परन्तु वह साधारण व्यक्तियों के लिए और भी जटिल तथा रहस्यपूर्ण है। किन्तु यह ध्यान देने की बात है कि आइन्सटीन का सिद्धान्त कभी भी विकसित न हुआ होता यदि ईथर की गति नापने से लिए माइकेल्सन-मारले प्रयोग न संपादित किया गया होता।

उसी इन्टरफेरामीटर से माइकेल्सन ने तारों के सम्बन्ध में भी बड़ी शुद्ध-शुद्ध नाप-जोख की जैसी उसके पूर्व कभी भी न की जा सकी थी। दृष्टान्तस्वरूप उसने इस यन्त्र से ढूँढ़ निकाला कि बेटलगीज का व्यास २६ करोड़ मील है। एक सायंकाल को जब जनता के समक्ष एक व्याख्यान में वह यह बता रहा था कि उसने इस विशाल तारे को कैसे नापा था तो श्रोताओं में से एक महिला उठी और उसने एक प्रश्न किया। उसने कहा, "डाक्टर माइकेल्सन, मैं भली भांति समझती हूं कि आप उस तारे को कैसे नाप

सके, किन्तु जो बात मेरी समझ मे नही आती वह यह है कि आपने कैसे यह पता चलाया कि उसका नाम क्या है।" कदाचित् उसे बहुत बार अपने श्रोताओ के साथ बहुत धैर्य का प्रयोग करना पड़ता था। किन्तु प्रस्तुत लेखक यह कह सकता है कि वह किसी विषय को अपने व्याख्यानो में नितान्त सामान्य ढंग से प्रस्तुत करता था जिससे श्रोताओ को बड़ा आनन्द आता था। उसके व्याख्यानो मे कही-कही हास्य का भी बहुत बढ़िया पुट मिलता था, जैसा कि सुप्रसिद्ध वैज्ञानिको के व्याख्यानो में बहुत कम देखा जाता है। तारो के मापन के क्षेत्र म माइकेल्सन ने पता लगाया कि वह उन तारक-युग्मो के दो भागो की दूरियो को नाप सकता है जो परस्पर इतने समीप है कि सबसे शक्तिशाली दूरवीक्षण यन्त्र भी उन्हे पृथक् नही देख सकता और यही इन्टरफेरोमीटर अनन्तलव दूरियो तथा छोटे-छोटे कोणो एव बाह्य अन्तरिक्ष की अनन्त दूरियो के मापन के लिए भी नितान्त उपादेय सिद्ध हुआ। यह सर्वोत्तम अणुवीक्षण यन्त्र से कही अधिक अच्छा था।

माइकेल्सन द्वारा बनाया हुआ दूसरा यन्त्र इकलन रश्मि-विश्लेपक यन्त्र कहलाता है। यह अत्यन्त आरम्भ म आविष्कृत उन यन्त्रो म से है जिसके द्वारा आँखो से किसी उत्तप्त वस्तु के कणो के कपन को देखा जा सकता है।

माइकेल्सन म किसी कार्य को बिलकुल ठीक-ठीक करने की ईश्वर-प्रदत्त विलक्षण प्रतिभा थी। इससे उसने पृथ्वी की कठोरता को नापा। इस बार उसने ६ इन्च व्यास वाले पाँच सौ फुट लम्बे, पानी से भरे ए और भूमि में गड़े हुए, एक नल का प्रयोग किया। इस प्रयोग ने तत्कालीन बहुसंख्यक वैज्ञानिको के मतो के विरुद्ध यह दिखाया कि पृथ्वी की कठोरता और लचीलापन इस्पात का है।

अपने जीवन का पर्यवसान आते-आते वह अपने प्रथम प्रिय क्षेत्र में अर्थात् प्रकाश की गति नापने में आ गया था। वह उसमें और शुद्धता चाहता था। इस वार अर्थात् १९२४ में उसने एनापोलिस प्रयोग के आवर्त्तनशील दर्पणों के स्थान में अष्टभुजीय तालों का प्रयोग किया आर उन्हें पाँच सौ फुट की दूरी पर रखने के स्थान में उसने कुछ तालों को माउण्ट विल्सन में स्थापित किया तथा कतिपय तालों को माउण्ट सैन एनटोनियो की चोटी पर। (दोनों ही स्थान दक्षिणी केलिफोर्निया में हैं।) उपर्युक्त दोनों स्थानों के यन्त्रों के बीच वाईस मील की दूरी थी। इस प्रयोग द्वारा प्रकाश की गति प्रति सेकेण्ड एक लाख छियासी हजार तीन सौ उनसठ मील ठहरी। किन्तु वह अपनी प्राणघातक रुग्णता के समय तक इसमें उत्तरोत्तर शुद्धता लाने की सोचता रहा।

उसके अन्य कार्यों की भी चर्चा की जा सकती है; किन्तु पहले ही उसके कार्यों का इतना विवरण दिया जा चुका है जो यह दिखलाने के लिए पर्याप्त है कि इस महान् व्यक्ति ने ज्ञान के क्षेत्र में कितने महान् कार्य किये थे। उसे इतनी अधिक वार इतने अधिक सम्मान प्राप्त हुए थे कि उसके पदकों, उपाधियों और पुरस्कारों की गणना करते-करते कोई थक जायगा। हाँ, इतना उल्लेख कर देना आवश्यक प्रतीत होता है कि उसे भौतिक विज्ञान के लिए नोवुल पुरस्कार भी मिला था।

जव प्रथम महायुद्ध में हम भी उतरे तो इस अन्तर्राष्ट्रीय कीर्ति वाले भौतिक शास्त्री ने, पैंसठ वर्ष की आयु में, नौ-सेना में पुनः पदार्पण किया जिस आयु में शान्ति-काल में नौ-सेना के सभी नौ-सेनाधिकारी निवृत्त होने लगते हैं। जिस समय उसने नौ-सेना में पुनः प्रवेश किया उस समय उसे केवल ढाई धारियों वाली लेफ्टिनेण्ट कमाण्डर की वेश-भूषा में रहना पड़ता था। नौ-सेना-प्रशिक्षण पीठ का उसका सहपाठी आस्कर वेजर उस समय तक न केवल एडमिरल हो गया था वल्कि वह वाशिंगटन के नौ-सेना-कार्यालय में उसका

आज्ञापक अधिकारी भी था। तरुण अधिकारी काष्ठवत् हो जाते थे जब वे यह देखते थे कि लेफ्टीनेण्ट कमाण्डर माइकेल्सन कभी एडमिरल वैजर से भी प्रतीक्षा करवाता था और वे इससे भी अधिक तब आश्चर्य में पड़ जाते थे जब एडमिरल अपने पुराने सहपाठी को "माइक" के नाम से पुकारता था और उसकी पीठ थपथपाता था। एक दिन एडमिरल वैजर ने खेद के साथ अपना सिर हिलाते ए कहा, "भाई, माइक, तुम नौ-सेना में ही क्यों न रहे। अब तक तो तुम एडमिरल हो गये होते।" राष्ट्र में अच्छे-अच्छे और बहुत-से एडमिरल हुए किन्तु अलबर्ट माइकेल्सन एक ही हुआ।

महान् वैज्ञानिकों के सम्बन्ध में बहुधा हमारी धारणा होती है कि वे बड़े शुष्क व्यक्ति होते हैं और अपने अणुवीक्षण यन्त्रों तथा परीक्षण-नलिकाओं को छोड़ कर वे और कुछ नहीं जानते; परन्तु माइकेल्सन इस प्रकार का व्यक्ति नहीं था। वह वॉयलिन बजाने में बड़ा निपुण था तथा रंगों से बड़ा अच्छा चित्र बनाता था। एक बार उसे अपने चित्रों को दिखाने के लिए किसी प्रकार तैयार किया गया। एक महिला ने उससे कहा, "डा० माइकेल्सन, कितने खेद की बात है कि आपने विज्ञान के लिए चित्र बनाना छोड़ दिया।"

उसने मुस्कराते हुए उत्तर दिया "मैंने चित्र बनाना कभी नहीं छोड़ा।"

उसे टैनिस खेलने की भी अभिरुचि थी और पचास वर्ष की आयु में उसने निश्चय किया कि वह अपने खेलने में सुधार करने के लिए उसमें तत्परता से जुट जायगा। सत्तर वर्ष की अवस्था में उसने अकेले खेलना छोड़ दिया और वह दुकेले खेलने से ही संतोष करता था।

अठहत्तर वर्ष की अवस्था में, उसकी मृत्यु के पश्चात् "पॉपुलर ऐस्ट्रॉनामी" नामक पत्रिका में, उसके विषय में, उसके मित्र एफ० आर० मोल्टन द्वारा लिखा हुआ एक निबन्ध प्रकाशित हुआ था। उसमें उसके मानव और वैज्ञानिक रूप का चित्रण करते हुए ये शब्द लिखे हुए थे—

उपसंहार

पिछले विवरणो में वैज्ञानिक क्षेत्र के सभी महान् अग्रगामियों का जीवन-वृत्त नही आ सका है, पर ये ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रो में होने वाले नेताओं का प्रतिनिधित्व अवश्य करते हैं। इन व्यक्तियो के जीवन-वृत्त की गाथा की तुलना उस व्यक्ति की प्रगति से की जा सकती है जो किसी पर्वत-अधित्यका के पादस्थ भाग में किसी अंधेरी द्रोणी में पैदा हुआ हो और वही रहने के अनन्तर यह पर्वत के ऊपर चढ़ने की चेष्टा कर रहा हो, और ज्यो-ज्यो वह ऊपर चढ़ता जाय त्यो-त्यो उसे और शैल तथा दूरस्थ वस्तुएँ दिखाई पड़ने लगें। उसी प्रकार मनुष्य, जैसे बेबीलोनिया निवासी आदि, कभी ब्रह्माण्ड के केवल उसी चित्र से संतुष्ट रहते थे कि वह एक स्वच्छ सन्दूक के सदृश है जिसका फर्श पृथ्वी है और उसकी छत आकाश है जो गिरिस्तम्भो पर आधारित है। अब विज्ञान के माध्यम से मानव जाति इतने उच्च पर्वत-शृंग पर आरोहण कर चुकी है कि सम्प्रति पृथ्वी ब्रह्माण्ड में उस ब्रह्माण्ड में जिसे कोई नितान्त उर्वर कल्पना से भी नही समझ सकता, एक विन्दु सदृश प्रतीत होती है। स्वय हमारे तारक-मंडल में, जिसमें करोड़ो तारे हैं प्रकाश को १,८६,००० मील प्रति सेकेण्ड की गति से चलने पर भी एक तारे से चल कर सबसे दूरस्थ तारे तक पहुँचने में लगभग तीन लाख वर्ष लगेंगे। किन्तु यह केवल हमारे पृष्ठभाग का चित्र है। हम लोगों के तारक-मण्डल को छोड़ कर लाखो अन्य तारक-मंडल भी हैं। बहुतो का तो अभी निर्माण हो रहा है जो नीहारिका या पदार्थों के विभामय बादल कहलाते हैं। इनमें से कुछ तो हमसे इतने अधिक दूर हैं कि उनके

प्रकाश को हमारी आँखों तक पहुँचने में लगभग १४ करोड़ वर्ष लग जाते हैं।

ये आँकड़े हमारे ब्रह्माण्ड की अनन्तता दिखाते हैं। उनमें अनन्त सूक्ष्मता भी है। अणु का अन्तरंग भाग भी वैसे ही कल्पनातीत है। हम यह कह सकते हैं कि प्रत्येक अणु अपने में एक सौर मंडल के सदृश है; किन्तु यह उस बात को समझने के लिए केवल एक निर्बल चेष्टा मात्र है जो हमारे लिए इन्द्रियगम्य नहीं है।

इस समय तक मनुष्य इतने उत्तुंग पर्वतशृंग पर आरोहण कर चुका है कि क्षितिज पर दिखाई पड़ने वाली वस्तुएँ उसकी समझ में नहीं आ सकतीं।

हमारी वैज्ञानिक उन्नति का दूसरा पक्ष नवाविष्कृत सिद्धान्तों और तथ्यों की व्यावहारिक उपादेयता है। हम इसे व्यावहारिक विज्ञान कह सकते हैं और यह व्यावहारिक विज्ञान बहुत-सी दिशाओं में पल्लवित हुआ है। औषधि और शल्य-चिकित्सा के क्षेत्र में ऐसी ही उन्नति हुई है। प्रत्येक दशक में कोई ऐसी आश्चर्यजनक औषधि या नवीन चिकित्सा-प्रणाली निकलती जा रही है जिससे नर-नारियों की औसत आयु उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। दूसरी व्यावहारिक उन्नति कृषि के क्षेत्र में हुई है जिससे जगत् का खाद्य उत्पादन बढ़ रहा है और उसकी श्रेणी में भी सुधार हो रहा है। वैज्ञानिक आविष्कारों के आधार पर बड़े-बड़े नये उद्योग-धन्धे भी स्थापित होते जा रहे हैं। इससे संसार की समृद्धि में प्रभूत वृद्धि हुई है और जीवन बहुत सुखावह होता जा रहा है। १८३० के लगभग वाशिंगटन के किसी व्यक्ति ने कहा था कि पेटेन्ट कार्यालय अब बन्द कर दिया जाना चाहिए, क्योंकि अब प्रत्येक संभाव्य वस्तु आविष्कृत हो चुकी है। उस समय से जितने आविष्कारों को पेटेन्ट किया गया है उन पर ध्यान देना बड़ा रोचक होगा।

वस्तुत: विज्ञान ने विगत शताब्दी में सभ्यता में ऐसा आमूल परिवर्तन कर दिया है कि अर्वाचीन युग वैज्ञानिक युग कहलाने लगा है। दुर्भाग्यवश बहुतों की यह धारणा है कि विज्ञान सब कुछ कर सकता है और संसार की अन्य सभी वस्तुओं से विशेष महत्त्वपूर्ण है। दूसरे शब्दों में यों कहा जा सकता है कि वे उसके सम्मुख ऐसे नतमस्तक हुए और उसकी ऐसी उपासना करने लगे जैसे कोई मूर्तिपूजक अपनी मूर्ति की। पर हम अब इस बात का अनुभव करने लगे हैं कि विज्ञान ने भयंकर मारक वस्तुएँ और आरोग्यकारी औषधियाँ दोनों ही हमें दी हैं। इसे वैज्ञानिकों द्वारा शासित युग में युद्ध से पिण्ड छूटने के स्थान में केवल पिछले २५ वर्षों में इतिहास के दो महादारुण समर हुए और अब हम परमाणु बम की छाया के नीचे रह रहे हैं। विज्ञान युद्ध के स्थान में शान्ति नहीं बुला सकता और न यह असज्जन को सज्जन ही बना सकता है।

ये तथ्य विज्ञान के वास्तविक स्वरूप को दिखाते हैं और नैपथ्य में उसके उस रूप को भी परिलक्षित करते हैं जिसमें वह प्रकृति के मीमांसक का कार्य करता है। लाखों प्रश्न उत्तर की प्रतीक्षा कर रहे हैं। दृष्टान्त-स्वरूप आइजक न्यूटन ने स्पष्ट कहा था कि उसने गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त का तो पता लगा लिया था किन्तु वह यह नहीं बता सकता कि एक पदार्थ दूसरे पदार्थ को कैसे आकृष्ट करता है। प्रत्येक दशक में कोई न कोई व्यक्ति सूर्य की उष्णता के सम्बन्ध में एक नया सिद्धान्त लेकर अवतीर्ण होता है। प्राणों की समस्या इससे भी अधिक रोचक है। उसका कब, कहाँ और कैसे आरम्भ हुआ और फिर सबके ऊपर मनुष्य स्वयं सबसे अधिक रोचक है। वैज्ञानिक दृष्टि-कोण से मनुष्य अपनी सबसे बड़ी पहेली है। उसका शरीर और मस्तिष्क दोनों ही महान् आश्चर्य की वस्तुएँ हैं। पुन: उसी कथा की आवृत्ति होती है। हम पर्वत पर जितना ही ऊँचे चढ़ते जाते हैं उतना ही हमारा दृष्टि-क्षेत्र उत्तरो-

त्तर विस्तृत होता जाता है और तब हमें विदित होता है कि अब भी असंख्य वस्तुओं का आविष्कार करना शेष है।

कहा जाता है कि कोलम्बस की यात्रा के पूर्व स्पेन में सोने के सिक्कों पर हरकुलिस के स्तम्भ या अन्ध महासागर का जिब्राल्टर का द्वार उत्कीर्ण होता था और उस पर लैटिन भाषा में एक सिद्धांत-वाक्य अंकित होता था नी प्लस अल्ट्रा अर्थात् "इसके आगे अब कुछ नहीं है।" किन्तु नये संसार की खोज के पश्चात् "नहीं" (No) शब्द मिटा दिया गया, क्योंकि कोलम्बस और उसके अनुयायियों ने यह सिद्ध कर दिया कि इसके आगे पूरा एक अर्द्ध गोलक है। तब उक्त सिद्धांत-वाक्य प्लस अल्ट्रा हो गया अर्थात् "इसके आगे और है।" ये दोनों शब्द विज्ञान के भी बड़े सुन्दर सिद्धांत-वाक्य हो सकते हैं, क्योंकि चाहे जितने भी आश्चर्यजनक आविष्कार किये जायँ, सदैव बहुत-सी जानने योग्य वस्तुएँ शेष रहेंगी ही—प्लस अल्ट्रा अर्थात् आगे और है "अभी जहाँ और भी है।"
